न व जी व न

लेखक
श्री रामचन्द्र तिवारी

प्रकाशक
साधना-सदन
७७, लूकरगंज,
इलाहाबाद-१

प्रकाशक
साधना-सदन
इलाहाबाद

प्रथम संस्करण, १९६३
मूल्य : चार रुपये

मुद्रक
पियरलेस प्रिंटर्स
इलाहाबाद

कथा की पृष्ठभूमि में

उपन्यास मुख्य ध्येय मनोरञ्जन है , पर जब कथा है तो उसकी पृष्ठभूमि होगी ही ।

प्रस्तुत कथा की पृष्ठभूमि मे जो ममस्या है वह पुरानी होने पर भी व्यक्ति और वर्ग के तल से उठकर राष्ट्रतल को पहुँच गई है । जो किमान और ज़मीदार के बीच की बात थी, वह आज नवीन तत्वो के आगमन और उनकी पुरातन पर, एव पारस्परिक, क्रिया-प्रतिक्रियाओ से राष्ट्रीय बन गई हैं । यह है देश की भोजन-ममस्या ।

पिछले साठ वर्षो मे देश की जन-संख्या तेइम करोड बासठ लाख से बढ़कर तैतालिस करोड बानवे लाख हो गई है जो प्राय. दूनी से कुछ कम है । जनसंख्या इस वृद्धि के साथ-साथ भोजन की ममस्या तीव्रतर होकर उभरती आई है ।

आज भारतवासियों की दशा सुधारने के लिए अनेक योजनाएँ बन रही है । उनके लिए सुन्दर हवादार मकान चाहिएँ, उनकी आय बढ़नी चाहिए; उनके लिए विनोद और प्रमोद की मामग्री चाहिए । परन्तु पर्याप्त भोजन के अभाव मे इन सब योजनाओ का अर्थ होता है कि देश मे जो सब से अधिक दरिद्र है, साथ ही साथ कदाचित् जो सब से अधिक परिश्रम करता है, उसे प्रसन्नता से मरजाने की छुट्टी दे दी जाती है । ये योजनाएँ जैसे उसके जीने का अधिकार स्वीकार नही करती । इस वर्ग को अमोद-प्रमोद की मामाग्री नही चाहिए । झोपडी मे वह रह सकता है । वह अपनी चिर-क्षुधित आत्मा से केवल भोजन के लिए प्रार्थी है ।

जैसे-जैसे जनसंख्या बढी है, गाँवो मे इसका प्रभाव पडा है, कृषिकर भूमि मे वृद्धि हुई है । पशुओं के चरने के लिए जो भूमि रहती थी, वह

शीघ्रता से जोती जा रही हैं। जो गाँव वनो के निकट है, वहाँ वृक्ष काटे जा रहे हैं। और वन को कृषि-भूमि मे परिवर्त्तित किया जा रहा है।

चराऊ भूमि का अभाव तथा वृक्षो का विनाश जिन समस्याओ को जन्म देता है वे भविष्य मे बढकर अत्यन्त भयकर हो जायँगी।

चराऊ भूमि के अभाव का अर्थ होता है पशुओ का अभाव। भारतीय ग्राम की आर्थिक योजना मे पशुओ का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। भारतीय किसान की समस्त शक्ति पशु से आती है। पशु खेत जोतते है, पशु ही सीचते हैं। भारतीय खेतो की लगभग सम्पूर्ण खाद मे जन्मदाता पशु है। भारतीय गाँवो का आधे से अधिक ईंधन (उपले) भी पशुओ से आता है। निरामिष भारतीय भोजन मे दूध एवं उससे बने विभिन्न पदार्थो का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इन सब बातो पर विचारने से चराऊ भूमि के जोत लेने पर लाभ से हानि ही सहसगुणी है।

वृक्षो को काट कर खेत बना लेने का अर्थ होता है कि अब वहाँ पर दूसरे वृक्ष नही लगाये जायँगे। इसका तात्कालिक प्रभाव यह होता है कि गाँव ईंधन के लिए अधिकाधिक गोबर के ऊपर निर्भर होता जाता है और खाद मे कमी पडती जाती है। पर लम्बे समय मे जो भीषण परिणाम वृक्षो के अभाव का होता है वह प्राणों को कँपा देने वाला है। वृक्ष कृषि-योग्य भूमि को जल के साथ बहजाने से रोकते हैं। जब वृक्षों का अभाव होता है तो वह भूमि निरन्तर बहती रहती है और भूत मे जहाँ खेत लहलहाते थे वहाँ मरुस्थल की रेत से तप्त लपटें उठती है। कौन कह सकता है कि गोबी और सहारा के मरुस्थल मानव की इसी असतर्कता कारण नही बने है। साक्षी है कि आज के ये मरुस्थल भूत मे मानव जाति के समृद्ध केन्द्र थे।

देश की जनसंख्या तैंतालीस करोड़ बानवे लाख के लगभग है। औसतन ५०० ग्राम अन्न प्रति दिन प्रति मनुष्य लगाने से वर्ष भर की भारतीय आवश्यकता ७६७६२००० मैट्रिक टन है। देश की वार्षिक उपज लगभग ७२८६८००० मैट्रिक टन है।

शान्ति के वर्षो मे अन्न बाहर से आता रहा है और यह बात किसी से छिपी नहीं है कि उस संकटहीन दीखने वाले समय मे भी भारत की एक चौथाई के लगभग जनता केवल एक समय भोजन पाकर जीवनयापन करती रही है।

प्रश्न है शेष अन्न कहाँ से आये?

जब कि प्रत्येक देश अपनी भौगोलिक सीमा के भीतर अपनी सम्पूर्ण खाद्य-सामग्री प्राप्त करने पर बल लगा रहा है। भारत, जो कृषि-प्रधान है, बाहर से अनन्त समय तक अन्न मँगाने का विचार करे, यह हास्यास्पद है। यदि यह अन्न मँगाना सम्भव भी हो तो और विकराल समस्याएँ सम्मुख आती है। इतना अन्न लाया कैसे जाय? इसका दाम किस रूप मे चुकाया जाय?

समस्या का समाधान यही है कि अन्न देश में ही उत्पन्न किया जाय। पर क्या यह सम्भव है?

है!

पर देश की समस्त भूमि जोत डालने से नहीं। उस मार्ग से तो असंदिग्ध विनाश की ओर प्रस्थान होगा।

मार्ग एक है! देश की कृषि मे नवीन वैज्ञानिक उपायो की सहायता ली जाये। इसके लिए जहाँ एक ओर खाद बनाने के विशाल कारखानों की आवश्यकता है, वहाँ यह भी अनिवार्य है कि खेतों का आकार आधुनिक कृषि-साधनो के प्रयोग के उपयुक्त हो। खेतो के विभाजन के वर्त्तमान कारण हटा दिये जायँ। कृषकों को उनके व्यवसाय मे अधिकाधिक रुचि लेने को प्रोत्साहित किया जाय।

खेतो के आकार को बडा करने के लिए आवश्यक है कि कृषि मे सहकारिता का प्रवेश हो। छोटे-छोटे खेत मिल कर एक हो जाये, जिससे नवीन उपायो के प्रयोग मे सुभीता हो और किसान अपने पैर पर खडा हो सके।

समय था जब यह समझा जाता था कि सहकार-कृषि से कृषकों की

दशा मे सुधार होगा, परन्तु अब सहकार-कृषि किसानों का वर्गीय प्रश्न नही रह गया। यह उस प्रत्येक व्यक्ति का वैयक्तिक प्रश्न है, जो उनका उत्पन्न किया अन्न खाता है। देश के प्रत्येक निवासी का अब यह प्रायः प्रथम कर्त्तव्य हो गया है कि वह देश की कृषि में रुचि ले और उसके लिए पर्याप्त अन्न उत्पन्न किया जाता है, इस विषय में सजग एवं सतर्क रहे।

—रामचन्द्र तिवारी

नवजीवन

१

१

इमली की टेढ़ी गाँठदार शाखा मे ढेला लगकर रामावतार के सम्मुख आ पड़ा। शाखा हिली और खटास की लहर वातावरण मे दौड़ गई।

रामावतार चिन्तित थे; क्रुद्ध हो गये।

"लडको!"

लड़के समझ गये और इधर-उधर हो गये।

रामावतार जाति से ब्राह्मण थे और व्यवसाय से किसान। उनकी अवस्था चालीस से अधिक, पचास से कम और पैतालीस के आस-पास थी।

उस बूढी इमली की ऐंठी लम्बी दृढ भुजाओं को उन्होंने देखा। भूमि को अपने चंगुल मे पकड रखने वाली उसकी जडो पर दृष्टिपात किया और वहाँ बिखरी भैरव की लालिमा उनके मन मे भक्तिमय भय भर गयी। उन्होंने इस इमली को सदा ऐसा ही देखा है; उनके पिता और पितामह ने भी।

तब चिन्ता उन पर झुक आई। वे इमली के नीचे से हट चले।

रामावतार छरहरे और ऊँचे थे। मस्तक पर सलवटे थी। झुकी भौहों के नीचे तेज आँखे, एक धार्मिक दृढता एवं सहिष्णुता, नासिका और ओठ उनके चेहरे को प्रभावशाली बनाते थे। जब वे मुस्कराते थे तो उनके गालों में तनिक-सा गड्ढा अब भी पड जाता था, जिससे व्यक्त होता था कि युवास्था मे वे सुन्दर रहे होंगे।

वे गये और द्वार पर खाट के निकट खड़े हो गये। अपनी पुरानी खपरैल और उसे स्पर्श करते आकाश पर दृष्टि डाली और फिर उस धूमिल-सी खाट की ओर देखा।

उनके वस्त्र एक धोती तक सीमित थे और उसकी सीमा भी कमर से ऊपर और घुटनो से नीचे नहीं बढ़ पाती थी। कुर्ता या फतुही वे पहिनते थे, पर केवल दो अवसरो पर। एक जब जाडा लगता था और दूसरे जब कोई शुभ-अशुभ अवसर आ पडता था। हाँ, अँगौछा सदा उनका संगी-सहायक रहा है। धोती-अँगौछे की सहायता से उन्होने तीन-चौथाई अवस्था काट दी। और अब आशा कर रहे थे कि आगे के लिए भाग्य उन्हे विशेष सहायता लेने को विवश न करेगा।

वे खाट पर बैठ गये। उन्होने चूना-तमाखू का बटुवा खोला, पत्ती निकाली और पुन: विचारमग्न हो गये। भौहे और भी झुक आई, जैसे कि उनके नेत्र किसी सूक्ष्म दृश्य की विश्लेषणात्मक विवेचना का प्रयत्न कर रहे हो। एक क्षण में नेत्र खुले और ललाट पर चिन्ता की जटिल रेखाएँ बन गई।

वे इसी अवस्था मे थे कि उनका बड़ा लडका रामाधीन उनके निकट आकर खड़ा हो गया।

रामाधीन की अवस्था पच्चीस और तीस के बीच मे थी। वह उत्साही और सजग किसान था। अभाव, श्रम और दीनता के वातावरण मे उसकी शीघ्रता से ढ़लती युवावस्था उसके जीवन को धूप-छाँह बना रही थी।

रामाधीन का अपना भी परिवार था। पत्नी थी, तीन पुत्र और दो कन्याएँ।

रामावतार ने दृष्टि ऊँची कर पुत्र की ओर देखा और पाया कि जिस प्रकार उनकी चिन्ता असाधारण है उसी प्रकार रामाधीन के मुख का भाव भी असाधारण है। यह भाव उसके मुख पर उन्होंने कभी नहीं देखा था। इस भाव के तल में आशङ्का और पीड़ा थी पर उसके ऊपर चुनौती और विद्रोह स्पष्ट था। रामावतार आकर्षित हुए; कुछ आतुर भी। जिस चिन्ता में मग्न थे, वह कुछ क्षण के लिए उन्हें छोड़ गई।

"क्या है रे?" उन्होंने उद्विग्न स्वर से पूछा।

रामाधीन बोला नही। खाट पर बैठ गया। बटुवा एक ओर सरका दिया और पैर के अँगूठे से धरती कुरेदने लगा।

रामावतार ने पुत्र की चेष्टा देखी। चिन्ता के ऊपर नई चिन्ता। रामाधीन के इस व्यवहार का अर्थ क्या है ?

उन्होने दृष्टि उसके चेहरे पर जमा दी; अपनी छोटी-सी दाढ़ी तर्जनी से खुजलाई। ललाट पर सलवटो की संख्या बढ़ गई।

उन्हे अनुभव हुआ कि तूफान आने को है। रूप और दिशा क्या होगी, यह अज्ञात था। नारी-कलह की सम्भावना बिजली-सी मस्तिष्क मे दौड गई। क्या वही है ?

और जो कुछ भी हो, उसे सहन करने को प्रस्तुत हो गये। समस्या यदि है तो हल माँगेगी। इसी मे उसके जन्म की सफलता है।

बोले—"बात क्या है ?"

रामाधीन हिल गया। ऐसा लगा कि जो कुछ वह कहने आया था, वह कह न पायेगा। उसका साहस पीछे हटता प्रतीत हुआ। पर यह अवसर उसके परिवार के लिए जीवन और मृत्यु का है यदि इस समय वह संकोच का शिकार हो जाता है तो सम्भावना है कि कुछ ही महीनो मे वह और उसकी सन्तान भूख-द्वारा मौत की चक्की मे पीस दिये जाये।

उसके छोटे भाई रामसरन ने जो बो दिया है उसमे काँटे ही उगेंगे और वे झड़ेगे सारे परिवार के ऊपर, विषैले, निर्धनता के बाण बनकर।

रामसरन को ससार का अनुभव नहीं। वह उद्दण्ड गर्वीला युवक मात्र है।

गाँव मे कौन है जो कारिन्दे की गाली नही खाता ? कौन है जो उसके सम्मुख शीश नही झुकाता ? कौन है जो उसके किसी कार्य मे अर्थ-अनर्थ खोजने का साहस करता है ? वह धनपति है और व्यवस्थापति उसकी पीठ पर।

कारिन्दे ने यदि रामावतार को, काका को, गाली दी, मारने की धमकी दी या मारा भी तो रामसरन को क्रोध क्यो आना चाहिए ? यदि क्रोध

आया भी तो वह उसे पी क्यों नहीं गया ? यदि पी नहीं सका तो कारिन्दे को ही क्यों, और किसी को क्यों नहीं, मारा ?

पिता का अपमान क्या इतना बड़ा है कि उसके लिए राजा को अपना बैरी बना लिया जाय ?

यह अकरणीय करके रामसरन हवालात मे बन्द हो गया है। उसके विरुद्ध अभियोग संगीन है। राजा को साथियो की कमी नही। उनकी ओर से गवाही देकर कौन शासनयन्त्र के दाँतो मे अपना सिर देगा ?

काका हैं कि वह भी अपने चालीस-पैंतालीस साल के अनुभव को भुला बैठे हैं। जानते है कि रामसरन को सज़ा होगी, धन व्यय होगा, वकीलो की गालियों और चपरासियों की फटकार के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त न होगा। फिर भी मुक़दमा लड़ने की तैयारी मे जुटे है।

घर मे पैसा नही। दिया कहाँ से जायगा ? पर पैसा तो दिया ही जाना है।

न्याय परमात्मा की दया नही, जो बिना दाम मिलती है। वह तो देवताओं का वरदान है जो धन के रूप मे तपस्या चाहता है। धन का हवन करना ही होगा।

रामाधीन ने देखा कि धन आने का एक ही मार्ग है और वह है— परिवारिक सम्पत्ति को गिरवी रखकर अथवा बेचकर। उसके पाँच बच्चे हैं और मुकदमे का पेट भोजन पाने से भरता नही वरन् रिक्त होता है, अधिक भोजन माँगता है।

वह अपनी सन्तान का भोजन उसे नहीं देगा। उसने निश्चय कर लिया कि पिता से अपना हिस्सा ले अलग हो जायगा। रामसरन मरे या जिये इससे उसे कोई वास्ता नहीं। उसने दृष्टि ऊँची की।

पिता और पुत्र के नयन मिले। पर अलग होने की बात स्पष्ट कह देने का साहस रामाधीन में न था।

बोला—"काका, अब क्या होगा ?"

काका का कर्त्तव्य स्पष्ट था। बोले—"होगा क्या ? भगवान् की इच्छा

हमारा सुख-शान्ति देखने की न थी, इसी से यह विपत्ति उन्होने भेज दी है। जब अपना ही भाग्य खोटा है तो दूसरे पर क्रोध करने से अपना कुछ बनता नही, उसका कुछ बिगड़ता नहीं।"

"कुछ करना तो होगा ही!"

"हाँ, मुकदमा लड़ा जायगा। जिसने मेरे लिए अपना जीवन झोक दिया उसे मै बिना लड़े जेल न जाने दूँगा। जबतक दम है लड़ूँगा; और फिर अपना बेटा तो है ही!"

रामाधीन ने देखा, काका भावना के वश है। वह एक बार झिझका; पर झिझक ही झिझक मे कही रह न जाय, इसलिए सब साहस एकत्र करने लगा।

यदि वह इस समय काका के प्रति सहानुभूति की भावना में बह गया तो कब और कहाँ किनारे लगेगा, यह नहीं कहा जा सकता।

और फिर नयन मूँदकर, समस्त बल लगाकर उसने कहा—"काका मैं अलग होना चाहता हूँ, मेरा हिस्सा बाँट दो।"

रामाधीन कह गया और उसके शीश से एक भार उतर गया। पर अब जब वह कह चुका तो एक भय उस पर छा गया।

वह यह कह कैसे सका? असम्भव सम्भव कैसे बना?

रामाधीन के वाक्य काका पर बिजली से गिरे।

उन्हे अपने कानों पर विश्वास न हुआ। आगामी संघर्ष में जिसे वे अपना दाहिना हाथ समझ रहे थे, वही अब उनसे टूट कर अलग हुआ चाहता है। प्रहार पर प्रहार। रामसरन की बिलखती नववधू ही उनके महान कष्ट का पर्याप्त कारण है और अब रामाधीन अलग होने की बात कर रहा है!

पहले उनमे ज्वाला उठी, पर दूसरे क्षण ही आँखों मे पानी आ गया। उन्हे लगा कि वे अत्यन्त निरीह हैं। रामाधीन के पृथक हो जाने पर वे क्या करेंगे? रामसरन के लिए कैसे लड़ेंगे!

उन्होंने मुख फेर लिया। आँसू नयनों में एकत्र हो गये। पुत्र की अपनी

यह दुर्बलता दिखलाना न चाहते थे। खाट पर से उठ गये। जाकर बैलों को भूसा डाला और भूसे की धूल पोंछने के बहाने नयनों से आँसू पोंछे।

इतने दिनो मे उन्होंने जो कमाया है उसे क्या वे आज परीक्षा के समय खो देंगे? विपत्ति मनुष्य पर ही आती है। वही विपत्तियो का आधार है। उन्होंने पशुओं की सेवा करते-करते अपना कर्त्तव्य निश्चित कर लिया। रामाधीन यदि अलग होना चाहता है तो वे उसमे बाधक क्यों बने? उनके मरने पर तो लड़के पृथक-पृथक होकर ही रहेंगे। क्यों न वे अपने हाथों बाँट दें!

रामाधीन के अलग होने के पक्ष मे जो तर्क थे वे भी उन्होंने देखे और उन्हें अनुभव हो गया कि रामाधीन मे चाहे भ्रातृप्रेम और पितृप्रेम की कमी भले ही हो, पारिवारिक आवश्यकताओं के प्रति वह सजग है। नाती भी तो उनके ही हैं।

एक मृदु मुस्कान उनके कपोलों पर झुर्री डालती निकल गई। वे खाट की ओर चले।

रामाधीन काका पर अपने वाक्यों का प्रभाव आँक रहा था। उसे भय था कि काका उससे क्रुद्ध होंगे। इसलिए नही कि काका क्रोधी अधिक थे। काका ने तो साधु-संगति और परिस्थितियों से क्रोध को दबाना कायरता की सीमा से भी आगे तक सीख लिया था। फिर भी इस प्रस्ताव पर उनका क्रुद्ध हो उठना अस्वाभाविक न होता।

वे खाट पर बैठ गये। बोले—"तो भई, अलग होना चाहते हो?"

"हाँ।" रामाधीन के नेत्र पिता के नेत्रों से मिलने का साहस न कर सके।

"अच्छी बात है। रामसरन है नहीं। रामविलास खेत से आ जाय तो बातचीत कर लेंगे। मैं नहीं चाहता कि तुम लोग मेरे पीछे आपस मे लड़ो। इसलिए मैं अपने हाथों सब बाँट जाऊंगा।"

रामाधीन का हृदय, जो आशङ्का से भर रहा था, शान्त हो गया। बोला—"हाँ, यह ठीक है।"

२

रामसरन की अवस्था सत्रह-अठारह वर्ष की थी। उसके विवाह को तीन ही वर्ष हुए थे।

उसकी पत्नी वैजंती बालिका ही थी। इस अवस्था में पति-वियोग उसके लिए सब से बडी विपत्ति थी। सब कुछ सहन कर सकती थी, पर यह असह्य था और इससे भी अधिक असह्य था उसका भविष्य, जहाँ रामसरन के लिए कारागार की व्यवस्था थी।

घर में रामाधीन की पत्नी सहदेई मालकिन थी। रामविलास की पत्नी किसोरी और वैजंती के लिए वही सास थी, वही जेठानी थी। उसके आने के तीन वर्ष बाद ही सास का स्वर्गवास हो गया था और तभी से वह रामावतार की गृहस्थी सँभाले हुए है। जिस योग्यता और कार्य-कुशलता का परिचय उसने इस कार्य मे दिया है, उसके सभी प्रशंसक हैं।

रामविलास की पत्नी वैजंती से अवस्था मे बडी विशेष नहीं; पर एक एक पुत्र की माँ है; इसलिए उसका भी घर में मान है।

सहदेई के विषय मे एक बात उल्लेखनीय है। वह पति से अवस्था मे दो वर्ष बड़ी है इससे उसके वाक्यो मे भार और अधिकार दोनों रहते हैं। पति को वह अनुभवहीन और बालक कहकर डाँट देती है। इस समय हिस्सा बँटवा लेनें की सूझ भी सहदेई की ही है। नारी अपनी सन्तान के अधिकारों के प्रति पिता से अधिक जागरूक है।

वह जानती है कि सबसे अधिक व्यय उसके परिवार का है। मिलकर रहने मे उसे लाभ है। पर अब वह जुवा नहीं खेलना चाहती। यदि रामावतार रामसरन के लिए खेत बेंचने पर तुल आयें तो निर्वाह की विशेष सम्भावना नही। जब परिवार पर कारिन्दे और पुलिस का कोप घहरा रहा है तो ऐसे समय उचित यही है कि उससे पृथक हो जाया जाय। अग्नि से बचने का उपाय अपने को अग्नि और उसके ईंधन से दूर हटा लेनें में है।

वैजंती अभी आँसू पोंछ कर खिन्नमना बैठीं थी कि रामाधीन का पुत्र

शिवकुमार जाकर उसके गले से चिपट गया। शिवकुमार की अवस्था चार वर्ष की थी।

वैजंती को उस समय कुछ अच्छा न लग रहा था। वह अपने से, घर से, सारी सृष्टि से असन्तुष्ट थी। रामसरन के कष्ट ने उसके संसार मे महान् परिवर्तन कर दिया था।

शिवकुमार की यह क्रीड़ा उसे बहुत भाती थी, पर आज मानसिक स्थिति भिन्न होने के कारण उसे अच्छी न लगी। उसने बालक को झिटक दिया वह सँभल न पाया और भूमि पर जा पड़ा।

माँ के पास जाकर शिकायत की—"चाची ने मारा है।"

सहदेई की स्थिति वही थी जो साधारण जन की होती है। वैजंती के पति के कारण परिवार पर यह विपत्ति आई है। पत्नी यदि पति के पुण्य फलो में आधे की अधिकारिणी है तो अपराध मे अर्द्ध-दण्ड-भागी क्यों नहीं? इसलिए जब से यह समस्या खड़ी हुई है, सहदेई, वैजंती पर क्रुद्ध हो रही है।

इसीके कारण यह सब हुआ। इसीका अभाग परिवार के लिए घातक वज्र बन गया।

चटककर बोली—"क्यों री ..!" और इसके आगे जैसे उसका वाक्य अपने ही बल से मुँह में रुक गया।

वैजंती ने सहदेई के अपूर्ण वाक्य में कुछ पाया, जिस पर उसे विश्वास न हुआ। उसने शीश उठाकर जेठानी के मुख की ओर देखा और फिर उसका हृदय धक से हो गया।

वह समझती थी कि परिवार की प्रतिष्ठा की वेदी पर वह बलिदान है, इससे उसका स्थान महत्त्वपूर्ण होना चाहिए। पति पिता की प्रतिष्ठा के निमित्त कारागार-निवासी बना है और पिता अकेले उसी के तो नहीं हैं, सब के हैं। जो उसने किया वह सब के लिए। उसका समस्त भार भुगतना पड़ेगा उसे। वह प्रसन्नता, से गर्वभरी, उसे सहन करने को प्रस्तुत थी।

उसके कारण शिवकुमार इस प्रकार गिरा, इससे उसमें पश्चात्ताप का उदय हुआ था। सोच रही थी कि इतना अपने दुःख में खो जाना क्या

अच्छा हुआ? निकट थी कि उठाकर उसे दुलारे। पर वह माँ के प्रति पुकार उठा। उसकी विचारधारा हठात् कुण्ठित हो गई; उसे होना पड़ा।

और उसपर जेठानी का यह रोष! यह क्यो? क्या उसका घर नहीं है? वह ससुर के प्रिय पुत्र की बहू है।

विद्रोह उसमे उठ खड़ा हुआ; पश्चात्ताप तिरोहित हो गया। इस क्रिया मे उसे तनिक कष्ट अनुभव हुआ पर वह प्रतिक्रिया की शक्ति द्वारा दबा दिया गया। क्या उसे किसी बालक से कुछ कहने का अधिकार नहीं है? हाँ, उसने मारा और जानबूझ कर मारा। जेठानी के जो जी मे आये कर ले। देखूँ क्या करती है?

अपने मे भर कर विद्रोह की गाँठ-सी वह दृढ हो बैठी। बोली नही। केवल एक बार जेठानी की ओर दृष्टि उठाई।

जेठानी किवाड़ पकडे बालक को पैरो से चिपटाये आग्नेय नेत्रो से उसकी ओर देख रही थी। क्रोध का कम्पन बडे संयम से दबाये थी। उसके भीतर अनेक भाव विस्फोट के लिए प्रस्तुत थे और वह इस विस्फोट से पहले की पीड़ा अनुभव कर रही थी। उसका अस्तित्व बहुत दिनों से वैजंती के विरुद्ध उठ रहा था। आज अवसर पा उसकी सुप्त भूख जाग पडी। बोली—"बड़े तीसमार खाँ की बहू है न! किसी को क्या समझेगी!"

और एक क्षण प्रभाव की प्रतीक्षा करने के पश्चात् कहा—"मैं सब समझती हूँ, दूध-पीती बच्ची नही हूँ। खेती-किसानी का काम करने छाती फटती है। अच्छा, बहाना मिल गया। जेल मे जाकर बैठ गया। और यहाँ हम कमा-कमाकर दूसरो का पेट भरे, हमारे ही बच्चे दुतकारे जायँ, लतियाये जायँ।"

रामसरन के कार्य और उसके फल को इस दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है यह वैजंती को ज्ञात न था। वह समझती थी कि उसका पति वीरता का कार्य करके जेल गया है; परन्तु अब देखती है कि वह काम से जान बचाकर जेल गया है!

दोनों दृष्टिकोणों में कितना अन्तर है। पहिले दृष्टिकोण से रामसरन

नर-श्रेष्ठ है, और दूसरे मे वह कायर है। एक धक्का वैजंती को अनुभव हुआ।

महदेई ने आगे बढ कर कहा—"खबरदार, जो आज से मेरे किसी बच्चे के हाथ लगाया होगा तो ..."

वैजंती के जी में आई कि कह दे, बच्चा क्या वह घर की किसी वस्तु मे हाथ न लगायेगी। पर सँभल गई। इस स्थिति मे जो दु:ख उसमे उमड रहा था उसी ने उसकी रक्षा की। वह चुप रही।

कुछ ही क्षण दु:ख का आवेग वह सँभाल सकी। शीघ्र ही नयन लाल हुए, उनमें जल भर आया और फिर बरौनियों मे एकत्र होकर टपकने लगा। एक करुण असुविधा वैजंती को अनुभव हुई।

इस प्रकार निर्मम आघात उस पर कभी नही हुआ था। वह अनुभव कर रही थी कि प्रहार न केवल अनुचित है वरन् कायरतापूर्ण भी है। अपनी दुर्बलता वह दिखाना न चाहती थी। न बोलने का एक कारण यह भी हो गया कि वह अपना रोना जेठानी पर प्रकट नहीं होने देना चाहती थी। उसने जेठानी की ओर से मुँह फेर लिया।

जेठानी ने इसमे अपनी विजय देखी। वैजंती को, जिसका पति उसके परिवार की भूख-पीड़ा कारण हो सकता है, वह कष्ट दे सकी है; यह क्या प्रसन्नता का विषय नहीं है?

उसने शिवकुमार को गोद में उठा लिया और आँगन में, जहाँ वैजंती बैठी थी, निकल आई। ध्यान से देवरानी को देखा और फिर बेटे को धमकाती हुई बोली—"जायगा फिर चाची के पास? बालक हैं कि चाची-चाची करते जान देते हैं। नहीं जानते कि चाची एक ही बिष की गाँठ है।"

आँसू वैजंती की असुविधा का कारण बन रहे थे। वह इस युद्ध मे दोनों ओर से घिरी थी। एक ओर जेठानी थी जो निरन्तर प्रहार कर रही थी, और दूसरी ओर आँसू थे जो अपने तौर पर उसकी रक्षा करते हुए भी, उसे प्रहारों का उत्तर देने के अयोग्य बना रहे थे।

"बैठी सुन रही है। एक बार मुँह भी ...।"

और वैजंती से भूल हो गई। उसने धोती का पल्ला उठाकर आँसू पोंछे।

सहदेई ने यह देखा और प्रसन्नता की तरंग उसके हृदय मे लहरा गई। उसके परिवार पर अभाग लानेवाली रो रही है, वह अत्यन्त शुभ है।

"बैठी-बैठी रोती ही रहेगी या कुछ काम भी करना है। यहाँ दूसरों का खून पसीना एक हुआ जाता है। अब मुट्ठी भर-भर कर रुपया निखट्टुओं के लिए वकील-प्यादो को देना पडेगा। भगवान् ऐसे अभाग मे सब की रक्षा करे।"

उन्होने हाथ उठाकर प्रार्थना की और यह प्रार्थना सहस्त्रों दंशनों की भाँति वैजंती के प्राणों को भेद गई। आँगन मे बैठा रहना असह्य हो गया। वैजंती उठी और अपनी कोठरी मे जा पडी। जेठानी पीछे-पीछे गई। सुनाया—"काम न करने से भोजन का विशेष सुभीता न होगा। जा रे, शिवकुमार अपनी चाची से कह आ।"

अब वैजंती का बोल निकल ही गया। बोली—"अब तो जब बाँदी की तरह काम करूँगी तभी तुम्हारे यहाँ भोजन करूँगीं।"

सहदेई अभी तक वैजंती से कोई उत्तर न पाकर जहाँ एक हलकी प्रसन्नता का अनुभव कर रही थी, वहाँ झुँझला भी रही थी। अब उत्तर पाकर जहाँ विजय की प्रसन्नता हुई वहाँ उसकी झुँझलाहट भी और बढ़ गई।

इसका इतना साहस कि मुझे, घर की मालकिन को, उत्तर दे!

बोलने लगी "असल की है····।"

वैजंती ने जोर से अपनी कोठरी का द्वार उस पर बन्द कर दिया। वह भौंचक रह गई। दो मिनट तक स्थिति समझने की चेष्टा करती रही और फिर ओठ बिचकाकर वहाँ से चली गई।

वैंजंती खाट पर लेट कर इस नवीन समस्या को समझने और सुलझाने का प्रयत्न करने लगी। उसे अनुभव होने लगा कि उसका मूल्य रामसरन के मूल्यानुसार हैं। यदि रामसरन प्रतिष्ठित और प्यारा है तो वह भी प्रतिष्ठित और प्यारी है। यदि रामसरन कारावास-निवासी है तो घर ही उसके लिए कारावास बन जायगा, बनने की क्रिया में है।

३

रामाधीन का मित्र-मण्डल गाँव-भर मे फैला था। समवयस्क प्राय: सभी उसके मित्र थे और विशेप रूप से मित्र वे थे जिनके परिवार से रामावतार की किसी प्रकार लगती थी। इस मण्डली में मित्रगण वृद्धो की आलोचना करते और उसमें से रस ग्रहण कर अपने जीवन को विशेप प्राणवान बनाते।

रामाधीन ने खलिहान की ओर देखा। कैसा वड़ा और ऊँचा यह गेहूँ के सूखे पौधो का ढेर है। इसमे कितना गेहूँ निकलेगा? जो निकलेगा उसमे से एक तिहाई उसका है। उतनी पूँजी से वह सरलता से अपना अलग काम चला सकता है। उस समय वह पूरी तरह स्वतन्त्र होगा। रामावतार, जो अब बात-बात मे अपनी बात अड़ा देते है, कुछ न कह सकेगे। जब वह स्वतन्त्र होगा तो उसका जीवन कितना सुखमय होगा? अभी वह पत्नी के लिए एक छल्ला भी बनवाता है तो वैसे ही दो छल्ले रामविलास और रामसरन की पत्नियों के लिए जी बनने चाहिएँ। वह जानता है कि छोटी बहुओं को छल्लों की इतनी आवश्यकता नही है जितनी कि उसकी बहू को; इसलिए वह उनके लिए बनवाना नही चाहता। फल यह होता है कि सहदेई, उसके पाँच बच्चों की माँ सहदेई, समस्त घर का प्रबन्ध करने वाली सहदेई, हाँ उस सहदेई के लिए भी वह कुछ नही बनवा सकता।

इस प्रकार पीडन और अत्याचार उसपर क्यों है? जो भूखा है उसे भोजन क्यों न दिया जाय, पर ऐसे है, जो बिन-भूख भोजन बाँट लेने को खड़े हैं। परिवार का यह वातावरण उसपर भारी होकर बैठ गया।

उसकी सन्तान है संख्या में पाँच और रामविलास का लडका है एक। घर में वह कोई वस्तु लाता है, बच्चों मे बँटती है। रामविलास के पुत्र से उसे शत्रुता नहीं है। वह उसे प्यारा लगता है! उसे उसने गोद खिलाया है। पर एक मुट्ठी मुरमुरे उसे देते समय ऐसा लगता है कि यदि वह न होता तो मेरे बच्चों को दो-दो मुरमुरे और मिल जाते।

यह अत्याचार उसपर क्यों है? उसे शान्ति से रहने का अधिकार

होना चाहिए। वह खुली लडाई लड़ने को तैयार है। पर जो एक विषैला वातावरण उस घर में से उसके मस्तिष्क मे कुरूप विषवृक्ष को जन्म दे रहा है, उससे वह दुखी है।

सम्मुख के रीते खेतो मे पशु चर रहे थे। खेत, जो चिरे हुए हृदय से अपने प्राणों के सहस्र-सहस्र खण्ड करके स्थिर ऊजड़ को उपहार दे चुके है, अब हल-चिन्ह युक्त, ठूँठ मात्र लिये सूर्य की सुनहरी धूप मे चारों ओर दृष्टि की सीमा तक फैले हुए थे।

बँटवारा हो जाने पर यह खेत उसका होगा। इस समय इसे जोतने-बोने, इसके अन्न का उपभोग करने का अधिकार उसका है। परायो से वह कह सकता है कि यह उसका है परन्तु क्या यह वास्तव मे उसका है?

वह समझता है कि जो वस्तु उसकी है उसके साथ वह जो चाहे कर सकता है। उसे बेच सकता है, गिरवी रख सकता है। पर यही एक बात है जो वह समझ नही पाया है। वस्तु के अतिशय रूप से उसकी हो जाने पर भी वह जो चाहे उसके साथ न कर सकेगा। वहाँ भी उसकी इच्छा को पर-वस्तु-सम्बन्धी इच्छाओ की भाँति सिमट-सिकुड़ कर एक सीमा में बैठना होगा।

पाँच बच्चे उसके है। बिलकुल उसके है। उन्हे उसे पिता से बाँटने की आवश्यकता नही है। उनके उसके होने का प्रमाण न्यायालय में भी उससे नही माँगा जायगा। अधिक से अधिक रूप से जो कुछ उसका हो सकता है, वे है। पर क्या उन्हे बेचने का, गिरवी रखने का अधिकार उसे है?

पर खेत पर बेचने का, गिरवी रखने का अधिकार चाहता है। इसलिए कि वह कह सके कि यह खेत मेरा है। किसी अन्य का इसमे कुछ नही, मेरा है, केवल मेरा है।

पशु, श्वेत मक्खन सी-गायें काले धूमिल कम्बलों-सी भैसें धरती के हृदय को रौंदती और सूखे भूसे को चरती आ रही थी। रामाधीन की दृष्टि उनपर जाकर अटक गई।

दाई ओर पचास-साठ वृक्षो की अमराई थी और दूर-दूर इक्के-दुक्के

महुवे, आम और जामुन के वृक्ष खेतों की विस्तृत एकरगता मे एक विचित्र कवित्वमय विविधरंगता ला रहे थे। क्षितिज के निकट तरुओं की हरियाली रक्तिम नीलिमा मे होती हुई नीले आकाश मे मिल गई थी। महुवों के पत्तो से झड़ती हुई धूप की रेशमी तरंगें वातावरण मे थिरक रही थी। उसके सोने से जगमगाते स्तर स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। उन्होंने जैसे हृदय को नयन दे दिये। और रामाधीन उन्ही की जटिल सरलता मे जाकर उलझ गया। एक मोहक रहस्यमय आवरण उसके प्राणो पर छा गया।

वह सब कुछ भूल गया। यह अत्यन्त गम्भीर सुख के क्षण थे, जिन्हें स्थिर करने के लिए योग साधा जाता है, साम्राज्य और प्रासाद बनाये जाते हैं, हत्याएँ और आत्म-हत्याएँ की जाती है। वे वहाँ बिखरे पड़े थे। मानव ने अपनी सभ्यता की दीवार उनके और अपने बीच मे खड़ी कर ली है।

अचानक रामाधीन का ध्यान भग हुआ। खरखराहट के शब्द उसके कानो मे पडे। एक भैंस खलिहान मे से गेहूँ का पूला खींच रही थी।

"कहाँ है रे भगवनवा?" वह उच्चस्वर से चिल्लाया और भगवनवा की प्रतीक्षा न कर खाट पर से स्वयं उठ लाठी ले दौड़ा। भैंस पूला खींचे लिये जा रही थी। रामाधीन ने एक लाठी भैंस के मारी तनिक ज़ोर से; क्योंकि विचार-धारा में बाधा पड़ने के कारण वह क्रुद्ध हो उठा था। भैंस पूला छोड़कर दूसरे खेत की ओर चली गई। रामाधीन ने पूला उठाकर खलिहान मे डाल दिया और भैंस को दूर तक हाँक आने के लिए उसके पीछे चला।

ग्वाले का कहीं पता न था। रामाधीन ने भैंस को लाठी मारकर दूर भगा दिया और लौट पड़ा कि देखा हरिनाथ कायथ सम्मुख खड़े है।

हरिनाथ का दर्पण-सा चमकता चिकना-चौड़ा ललाट और उसके अग्नेय नेत्र। उसके प्राण इस दृष्टि के आक्रमण से सिहर गये।

हरिनाथ गाँव के पटवारी के साले और दूर के सम्बन्ध से करिन्दे के बहनोई होते थे। वे उनमें से थे जो प्रतापी होते है और जिनका इक़बाल उनके मुख-मण्डल पर झलकता होता है।

हरिनाथ की नासिका रामाधीन् के ललाट को स्पर्श कर गई और विद्युत् गति से रामाधीन एक डग पीछे हट गया। मार्ग छोड़ एक ओर हो गया। पर हरिनाथ का मार्ग जैसे रामाधीन के पीछे-पीछे था और वह उसके सम्मुख खेत मे जा खड़ा हुआ। जिस दृष्टि से सर्प कोमल, उड़ने मे असमर्थ रक्तवर्ण, माँ मे करुणा उत्पन्न करने वाले गौरइया के बच्चों को भक्षण से पहले उनके घोंसले में देखता है उसी दृष्टि से हरिनाथ ने रामाधीन को देखा।

रामाधीन विमूढ हो गया। फिर जैसे उसकी चेतना जगी। परम विवशता मे विद्रोह उत्पन्न हो गया।

पूछने को हुआ—"क्या बात है हरिनाथ दादा ?"

यदि उसने यह वाक्य कह दिया होता तो दादा शब्द की आत्मीयता से हरिनाथ पर कुछ प्रभाव पड़ सकता था। पर उसके मुख से वाक्य निकलने से पहिले ही हरिनाथ ने आँखें लाल करते हुए कहा—"क्यों बे रामाधीन, भैस को इस प्रकार क्यो मारा ?"

रामाधीन ने यदि भैस को मारा तो कोई नवीन बात नही की। भैस जीवन-भर धीरे-धीरे, और अन्त मे पूर्णतया, मार डालने के ही लिए तो होती है! वह गेहूँ का पूला खा रही थी, यह बात न हरिनाथ को, न रामाधीन को सूझी।

इस तथ्य का महत्व रामाधीन को विशेष न दिखाई पड़ा। विवाद उसकी सीमा से परे था। जो प्रबल सत्य था वह उसके सम्मुख स्पष्ट हो गया।

पटवारी के साले और कारिन्दे के बहनोई की भैंस को, फिर उनकी ही आँखों के सामने स्पर्श करने का और वह भी लाठी से स्पर्श करने का, उसे कोई अधिकार न था। वह यदि गेहूँ का पूला लिये जा रही थी तो यह न उसका अपराध था और न उसके स्वामी का। अपराध वास्तव मे पूले के स्वामी का था। यह स्थिति दोनो पक्षों ने स्वीकार कर ली।

रामाधीन ने कोई उत्तर न दिया। वह दे न सका। उत्तर था ही नहीं. वह दो डग और पीछे हट गया।

हरिनाथ उसके पीछे न गया। जहाँ था वही खडा उसे घूरता रहा। वह दृष्टि रामाधीन को असह्य हो गई। वह घूमकर अपने खलिहान की ओर चला।

हरिनाथ ने दो लम्बे डग रखकर रामाधीन की गर्दन अपनी मुट्ठी मे पकड़ ली और फिर दूसरे हाथ से उसके मुँह पर प्रहार किया।

रामाधीन क्रोध से जल उठा। उसकी आत्मा को वे प्रहार करोडों बिच्छुओं के दशंनों के समान कष्टकारी हुए। पर उसने अपने पर संयम रक्खा; रखना पड़ा। प्रहार उसने सह लिये।

हरिनाथ सन्तुष्ट और असन्तुष्ट उसकी ओर देखता रहा और वह पिट-कर, छूटकर अपने खलिहान मे गया।

हरिनाथ सोच रहा था, उसने और क्यों नही मारा! रामाधीन भयभीत था कि कहीं किसी ने देखा तो नही। देखे जाने की लज्जा असह-नीय थी। वह जाकर अपनी खाट पर बैठ गया, तब कही सिर ऊँचा कर चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। कोई दिखाई न पड़ा।

हरिनाथ जाकर अमराई मे लुप्त हो गया।

सूर्य की किरणें और भी प्रखर हो गई। रामाधीन का हृदय जोर से धड़कने लगा। यदि उसकी पत्नी और सन्तान न होती तो आज वह हरि-नाथ का खून कर देता और फिर हँसता-हँसता फाँसी चढ़ जाता। मरना एक ही बार तो होता।

नारी उसके पुरुषत्व की बेडी बन गई है। सर्प के दाँत तोडकर जिस प्रकार निकम्मा बना दिया जाता है उसी प्रकार नर-नारी का सम्बन्ध करके पुरुष का पौरुष नष्ट किया जाता है।

पुरुष के पौरुष की मुक्ति नारी की मुक्ति मे है।

४

तर्क से भले ही हो, तथ्य में यह आवश्यक नहीं कि किसान के घर मे अन्न हो ही। तथ्य तर्क का अनुगामी नहीं, तर्क को ही तथ्य का समर्थन प्राप्त करना पड़ता है, तभी वह विज्ञान बनता है।

जब तथ्य और तर्क मे सबल असामञ्जस्य और विरोध उत्पन्न हो जाता है; तभी नाना प्रकार को वैयक्तिक और सामाजिक समस्याओं की सृष्टि होती है ।

जो होना चाहिए, वह नही होता । यही तो समस्या है ।

रामाधीन प्रतिष्ठित था—सपरिवार । प्रतिष्ठा का अर्थ यह नही कि पात्र को भोजन-वस्त्र की चिन्ता न हो । रामाधीन के खलिहान में अब साठ-सत्तर मन अन्न पड़ा था, पर बीज उधार लेकर डाला गया था । घर में मटर भी इतनी नहीं थी कि खलिहान से अन्न आने तक परिवार का निर्वाह हो सके । इसलिए जब तीसरे पहर रामाधोन पिता को खलिहान सौंप कर घर लौटा तो उसके सिर पर गेहूँ का गट्ठर था ।

रामाधीन ने सोचा था कि इन दिनों दो-चार दिन पूरे परिवार को गेहूँ की रोटियाँ मिल जानी चाहिएँ, वैसे तो सारे साल जौ-मटर खाना ही है ।

गेहूँ वह बोता है केवल हारी-बीमारी मे खाने के लिए, पर आवश्यकता पड़ने पर वह भी लगान की मद मे बेच दिया जाता है । इससे आगे किसान व्यापारी के यहाँ मुट्ठी भर अन्न के लिए हाथ फैलाता है ।

बालकों को आज गेहूँ को रोटी और घुघरी मिलेगी । उनके नयन खिल उठेंगे । शिवकुमार, ननको, रामश्रो, खिलावन और श्रीनिवास के हँसते मुख उसके सम्मुख घूम गये । इन मुखों मे न जाने क्यो रामविलास के पुत्र हरि-सुन्दर का मुख न था ।

वह कुछ देर से आया और रामाधोन को लगा कि उस अकेले ने उन पाँचों के ऊपर घोर अत्याचार किया है । हरिनाथ का व्यवहार भार के कारण, सन्तान की सुखद कल्पना के कारण उसके मन से उठ गया था । उसका अपना निजत्व संकुचित, अनुदार ग्रामीण मतानुसार जाग पड़ा था ।

गाँव मे रीति थी एक साथ मिल कर पेट भरने की नहीं, प्रतिष्ठित रहने की नही, वरन् पृथक-पृथक होकर भूखों मरने की, अपमानित और लाञ्छित होने की, घर मे कलह और बाहर कलह बोने की । कलह के रस से अन्दर-बाहर सभी सिञ्चित थे ।

रामाधीन इसी बेल मे फला था। भूमि से जो कुछ उसने पाया था वहाँ फूल का प्राण बन उसमे समाया था। अब वह विस्तार पाने की, उसके कार्यों मे अपने को धीरे-धीरे व्यक्त करने की चेष्टा कर रहा था। दो मुट्ठी दानों के लिए किसी को भी बैरी बना लेना, किसी के भी तलवे सहला देना गाँव के जीवन मे साधारण घटनाएँ थी।

रामाधीन ने बोझ आँगन मे डाल दिया। उसने कुट्टी के स्थान को देखा वह साफ पड़ा था। हरिसुन्दर से जो क्रोध प्रारम्भ हुआ था वह यह देखते ही रामविलास के विरुद्ध भडक उठा। उसे लगा कि रामविलास ने अभी कुट्टी नही काटी। पशुओ को अभी चारा नही मिला।

जोर से बोला—"कहाँ है री, रामविलास ? क्या आज पशु भूखे ही रहेंगे ?"

रामविलास की पत्नी ने यह प्रश्न सुना। उत्तर उसके पास था। पर वह जेठ के सम्मुख बोले कैसे ? इसलिए वह कीडे लगे महुवे धूप म फैलाती, उत्तरभरी, उत्तर न दे पाई।

प्रश्न सहदेई से किया गया था। उसे मालूम था कि प्रश्न उससे ही किया गया है पर अभी उसने सुनना उचित न समझा। उसने कटोरे को परात पर गिर जाने दिया और उनकी लम्बी खनक मे प्रश्न और उत्तर दोनो खो गये।

हरिनाथ के प्रति जो क्रोध था वह अब अवचेतन मे से रामविलास के विरुद्ध प्रकट हो गया। वह फिर चिल्लाया—"क्या पशु आज भूखे मरेंगे ? क्या इस घर मे मेरा ही हिस्सा है। काम करने को मै और खाने को सब कोई ?"

किसोरी और सहदेई भिन्न-भिन्न कारणों से चुप रही। रामाधीन का असन्तोष जैसे उबल पडा। तभी खिलावन अपने पिता को देखकर दौड़ा और आँगन में पड़े गेहूँ के भार के ऊपर जाकर औंधा लेट गया। रामाधीन ने झटके से उसका हाथ पकड़ उसे उठाया। पूछा—"रामविलास कहाँ है ?"

खिलावन रुआसा हो आया। बोला—"चाचा, ताल नहाने गये है।

ननको, रामसिरी को ले गये है, मुझे नही ले गये। नहाने चलोगे ? मैं भी....!'' इतना कह वह मैला-पीला सूखा-सूखा बालक खाँसने लगा। खाँसते-खाँसते जैसे उसका दम फूल आया। कफ का धूलि-मिश्रित उगाल उसके नंगे शरीर पर बह निकला।

रामाधीन ने उसके बदन को हाथ से पोछा। हाथ को दीवार पर पोंछते हुए कहा—''तुझे खाँसी हो रही है। ताल कैसे नहायेगा ?''

हलके तौर पर मन मे उठा कि रामविलास जो खिलावन को साथ नहीं ले गया सो ठीक ही किया है। पर दूसरे क्षण ही रामविलास के प्रति यह प्रशंसात्मक भाव तिरोहित हो गया।

वह बड़बडाया—''बस खाना और नहाना, इसके अतिरिक्त वह करता क्या है ?''

सहदेई अब भी चुप रही। किसोरी को लगा कि जेठानी लडाई करवाना चाहती है, तभी चुप्पी साधे है। सहदेई घुन्नी नागिन है, जब डसती है तो उसका तोड़ नही है।

कोई उत्तर न पा रामाधीन बाहर पशुशाला मे गया। उसके लिए पशु अपने से पहले थे। ग्राम्य-जीवन की आधार-शिला उन्ही के कन्धों पर है।

उसने कल्पना की थी कि नाँदे सूखी पड़ी होंगी। पशु मुँह लटकाये खड़े होंगे। अब तक वह लिहाज करता आया है, पर अब असम्भव नही। वह अभी ताल पर जाकर उसके कान खोल देगा। घर मे बड़ा वह है; सबसे अधिक काम वह करता है।

परन्तु जब उसने पशुगृह मे प्रवेश किया तो देखा कि तीन बैल बैठे आनन्द से जुगाली कर रहे है; एक हरी घास-मिश्रित कुट्टी सन्तोष के साथ खा रहा है।

रामाधीन का क्रोध एक दम नीचे आ गया। वह जानता है कि इस मौसम में पशुओं के लिए हरी घास जुटाने का कार्य रामविलास के अतिरिक्त और कोई नही कर सकता। इस ओर से सन्तुष्ट हो वह पुनः घर लौट पड़ा।

देखा खिलावन गेहूँ की बाल तोड कच्चे दाने कफ-मने मुँह मे भर रहा है। दृश्य असाधारण था।

रामाधीन आगे बढ गया। दूसरे आँगन मे उसने देखा किसोरी धान निकाल रही है, महदेई धागे की आँटी बना रही है। उसने दृष्टि दौड़ाई पर छोटी बहू नही दिखाई पड़ी। वह चाहता था कि किसी को गेहूँ निकालने का काम सौंप दे और फिर निश्चिन्त होकर नहाने-धोने जाय।

पूछा—"रामसरन की बहू कहाँ है?"

रामसरन का नाम लेते ही सब समस्या उसके सम्मुख प्रकट हो गई। वह रामसरन से कैसे छुटकारा पाये। पुरुष को परिवार मे 'पावना' होना चाहिए। पर रामसरन परिवार का 'देना' है। वह परिश्रम करता है और व्यय होगा रामसरन के ऊपर।

सहदेई कुछ न बोली। रामाधीन का असन्तोष और भी बढ़ गया। बोला—"क्या कर रही है वह लाड़ले बेटे की बहू?"

"कर क्या रही है! किवाड बन्द किये, सेज बिछाये आराम कर रही है।"

जब सारा परिवार परिश्रम-द्वारा पीसा जा रहा है, तब वह आराम कर रही है! और वह उस रामसरन की बहू है जिसके ऊपर अब परिवार को अन्धाधुन्ध खर्च करना होगा।

"इतना आराम चाहिए तो किसी राजा महाराजा के यहाँ पैदा हुई होती। वह हवालात मे जाकर बैठ गया है; पिसने को मै हूँ। कह दो, उठकर गेहूँ पीट डाले तो भोजन मिलेगा।"

सहदेई जो चाहती थी वह विजय उसे प्राप्त हो गई।

किसोरी ने मन में कहा कि जेठानी जेठ को इधर-उधर मोड़ने में कितनी समर्थ है।

बैजंती ने जेठ के ये वाक्य सुने। अभी सूखे नयन फिर भर गये। वह कितनी असहाय है। जेठ के सम्मुख वह गूँगी है। ससुर के सम्मुख वह गूँगी है। जो उसपर दोष लगाते हैं उन्हीं के साथ मे निर्णय का अधिकार

है । पिसते-पिसते पिस जाने के अतिरिक्त सामाजिक व्यवस्था ने उसके लिए कोई मार्ग नही छोडा है ।

नारी के इन विवश आँसुओं ने ज्वाला बनकर हिन्दू समाज के पौरुष और उसकी शक्ति को नष्ट कर दिया है । यदि पाप और पुण्य की परिभापाएँ ठीक है, यदि इच्छा शक्ति मे कुछ बल है, तो देश की दुर्दशा का कारण आधी जन-संख्या की मूक आहे है ।

वैजंती ने सोचा था कि कोठरी से बाहर नही निकलेगी । पर इस प्रकार विरोध-प्रदर्शन का फल ? वह नारी है । आदि से अन्त तक पुरुष की दासी है ! समाज की दासी है । दासी के विरोध का मूल्य क्या है ? दासी को यदि कुछ चाहिए, यदि न्याय चाहिए, तो वह सम्पूर्ण समर्पण से ही प्राप्त हो सकता है ।

उसने उठकर धीरे से किवाड़ खोले, मोगरी उठाई और रामाधीन ने, दोनो बहुओ ने गेहूँ की बालों पर मोगरी गिरने का शब्द सुना । मोगरी के साथ उसके आँसू भी गेहुँओं पर गिर रहे थे ।

प्यास सब को लगती है, पर परिश्रम के समान चिर प्यासा कोई नहीं है कुछ ही क्षणो मे वह वैजंती के आँसुओ को पी गया । एक बार बायें हाथ की उँगली पर मोगरी खाकर वह चैतन्य हो तुरन्त पीसे जाने के लिए गेहूँ को भूसे से अलग करने लगी ।

आज घर मे त्योहार था । नया गेहूँ आया है । पर वैजंती को इससे क्या ? वह भोजन नही करेगी । पता नही हवालात मे वे कैसे है ? खाने को मिलता है या नहीं । गेहूँ क्या मिलता होगा । नही, वह गेहूँ छुवेगी भी नही ।

५

अवध में, पूर्वी पंजाब और आगरा प्रान्त के ग्राम की भाँति, चौपालें नही होती । हो सकता है कि भूमि की कमी इसका कारण हो ।

चौपालों के अभाव मे द्वार ही बैठक है । वही अधिकतर घरो मे कुट्टी कटती है । और वहीं ऊँची अथवा अत्यन्त नीची सुतली से बुनी खाट

पर युवा-वृद्ध सरौते से सुपारी काटते जाते हैं और बाते करते जाते हैं।

रामाधीन भोजन कर द्वार पर आ लेटा। रामविलास खलिहान, पिता के पास गया। रामाधीन ने सोचा दो घड़ी आँख लग जाय तो शरीर की थकान उतर जाय। पर जिस घर मे बालक हों वहाँ आँख लगना इतना सरल कार्य नही है। ननको आकर उसके कण्ठ से लिपट गई। बोली—"हमारी गुड़िया देखोगे दादा ?"

रामाधीन ने उसे टालने के बहुत प्रयत्न किये। पर उसकी गुडिया ने आज नीम की सीको का नया हार जो पहिना था, अदृश्य कानों मे अपने से भी बड़ी बालियाँ जो पहिनी थी, और माथे सड़क के किनारे से उठाई सिगरेट की पन्नी की टिकुली जो लगाई थी।

ननको सोच रही थी कि उसकी गुडिया व्याहने-योग्य हो गई है। जब गुडिया का शृङ्गार हो और वह व्याहने-योग्य हो, तब दादा को अवश्य ही देखना होगा। चार वर्ष की ननको अपनी गुडिया को शीघ्र व्याह कर जीवन भर के लिए निश्चिन्त हो जाना चाहती है।

पर दादा हैं कि सोना चाहते हैं और ननको उन्हे गुडिया दिखाये बिना मानेगी नही।

"भाग जा। मैं नही देखता तेरी गुड़िया। नानी कही की!" वह क्रुद्ध हो आया।

ननको, जो अब तक पिता के गले से चिपटने मे लगी थी, छटक कर दूर खड़ी हो गई। उसका मुँह जरा-सा निकल आया। दादा उसकी गुडिया नहीं देखेंगे। क्यो नहीं देखेगे ? वे उससे नाराज क्यों हैं ?

रामाधीन ने पुत्री के मुख का भाव देखा। वह द्रवित हो गया। बोला—"जा, ले आ अपनी गुडिया। अच्छी नही हुई तो नही देखूँगा।"

ननको का मुख प्रसन्नता से खिल उठा, जैसे सूरज के सामने सूरज-मुखी। हाथ चमका-मटका कर बोली—"दादा, वह अच्छी है, बहुत अच्छी। बाली-बिछिया सब पहने है।"

और उछलती गुड़िया लेने घर में भाग गई।

वह आकर फिर जगायेगी इससे रामाधीन छत में लगी टेढी-बाँकी कड़ियो को गिनने लगा।

ये कडियाँ न गोल थी, न चौकोर। तिकोनी भी न थी। वे रेखा-विज्ञान मे टेढेपन की अट्ठाईस सम्भावनाओ का उदाहरण थी।

रामाधीन उन्हे गिनने लगा। कभी सोलह तक, कभी बीस तक वह सविश्वास गिन जाता, पर इससे आगे उसका संख्या-ज्ञान गडबड़ाने लगता था।

यह नही कि रामाधीन पढा नही था। वह पढा था और बडे चाव से तख्ती पर दूध से काजल पोत, घोंटे से चमका, बुदके मे तीन-तीन बार खड़िया डाल, रस्सो से दो पुस्तकों को कन्धे से लटका, चिट्ठीरसे का गौरव अनुभव करता, उछलता-कूदता पाठशाला गया है।

उसने तख्ती पर लिखा ही नहीं। उसकी और उसके द्वारा अपनी शक्ति-परीक्षा भी ली है। पाठशाला से लौटते समय दल-युद्धो मे वह तलवार और ढाल दोनो बनी है।

एक बालक का सिर फोड़ने के उपलक्ष्य मे जब शिक्षक ने अपने सात वर्ष पुराने बेत-द्वारा उसके प्रति शिक्षकोचित व्यवहार किया तो नव वर्ष के होने पर भी उसने घोर आपत्ति की और पाठशाला से असहयोग कर दिया।

उसने चाहा था कि ऐसे स्थान पर जो कुछ सीखा है सब भुला दिया जाय। पर जान पड़ता है कि पटवारियों, शिक्षको, बनियों और कारिन्दो ने उसके विरुद्ध भीषण षड्यन्त्र खडा कर लिया है। अपने प्रत्येक व्यवहार मे संख्या सम्मिलित करने की इन्होंने सौगन्ध खाली है। इसी से अक्षर भुला सकने पर भी वह संख्या भुलाने में पूर्णत. सफल न हुआ।

वे कड़ियाँ उसके लिए समस्या बन रही थीं। कभी दाये भूल हो जाती थी कभी बाये।

ननको अपनी गुड़िया ला रही थी कि बड़ी काकी ने उसे प्रसन्न देखकर पूछा—"ननको, क्या छिपाये ले जा रही है?"

ननकी की माँ के कान ऐसी बातों को बडी शीघ्रता से सुनते थे। उसने बर्तन माँजते हुए पुकारा—"क्या है री ननको ?"

ननको चाहती थी कि उसकी गुडिया को सबसे पहले दादा देखे। वह बोली नही, द्वार की ओर भागी।

माँ का सन्देह पक्का हो गया। अवश्य कुछ उठाकर लिये जा रही है। वह इन बच्चों से हैरान है। कितना कहते है कि मुन्ना राजा घर की चीज बाहर नही ले जाते। पर ये कमबख्त है कि कभी उसकी सीख नही सुनते।

वह बर्तन छोड़ उसके पीछे दौडी।

ननको ने देखा कि दादा के पास हरे कृष्ण दादा बैठे है और बातचीत कर रहे हैं। रामाधीन बोला—"बिट्टी, अब ले जाओ पीछे देखेंगे।"

ननको का मुँह उतर गया। वह रुवासी हो गई। पिता से पुन आग्रह करे उसके लिए समय न रहा। दौड़ती माँ आ पहुँची। उसने किवाड के पीछे से हाथ बढ़ा कर उसे घर मे घसीट लिया। बोली—"क्या है री ? दिखा, नहीं तो अभी उठाकर पटक दूँगी।"

और फिर उसे झकझोर डाला। ननको चिल्ला पड़ी। गुडिया हाथ से छूट नीचे गिर पड़ी। वह दादा से शिकायत करने चली।—"दादा, अम्माँ ने मारा।"

सहदेई ने देखा कि ननको जो छुपा कर ले जा रही थी, वह उसकी गुडिया थी। अब तक ननको के सहारे जो क्रोध बढ़ रहा था वह किसोरी पर जा पड़ा।

"देखती नही हैं, मेरी बेटी को व्यर्थ दोष लगाती है।" और उसने निश्चय कर लिया अवसर पाते ही वह किसोरी से इसका बदला चुका लेगी। हरिसुन्दर अभी ढाई वर्ष का है। तनिक और बडा हो जाये तो— कितनी नीच वृत्ति है इसकी। तनिक सी लडकी पर दोषारोप, राम राम। और वह भुन्नाती किसोरी और वैजंती पर क्रुद्ध दृष्टि डालती अपने काम में लगी।

६

हरे कृष्ण ने कहा—"रामाधीन भाई, समय बुरा है। कोई किसी का नही। समय था जब परिवार मिले रहते थे। एक-एक परिवार मे साठ-साठ व्यक्ति होते थे। क्या मजाल कि उनसे कोई आँख मिलाया जाता। बँधी मुट्ठी बँधी ही होती है।"

रामाधीन कुछ सोचने को बाध्य हुआ।

हरे कृष्ण ने कहा—"मै तो अपने घर की बात जानता हूँ जब दोनो काका और दादा एक साथ थे। घर मे हम सब छोटे-बडे मिलाकर पन्द्रह मर्द थे। कोई प्यादा, कोई कारिन्दा तू-तड़ाक से नही बोलता था। नाक ऊँची थी! घर भरा-पूरा था। पर जब से अलग-अलग हुए है सब कुछ जैसे हवा हो गया। यह हरिनाथ, जो सदा गिडगिडाया और हाथ जोड़ा करता था, अब सिह बना हुआ है।"

रामाधीन के विचार गहरे हो गये।

"किस सोच मे पड गये भई? यह तो ससार की रीति है। मिलकर रहने से किसका सरा है। और अलग हो जाने पर तो जैसा होता है निभाना ही पड़ता है। हाँ, कहो रामसरन का क्या हुआ?"

यह एक ऐसा विषय था जिस पर कुछ कहना भय से खाली न था। यदि रामाधीन रामसरन के प्रति सहानुभूति दर्शाता है तो क्या पता कि कल यह बात कारिन्दे तक न पहुँच जायगी?

गाँव का प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के विरुद्ध उसे सूचना पहुँचाता है। इसी नीति के बल पर वह डेढ पसली का व्यक्ति निवार के चिकने पलंग पर बैठ गुलाबजल भरवा कर हुक्का पीता है।

उसके मौन ने समस्या हल कर दी। हरे कृष्ण ने कहा—"रामसरन ने जो किया है छः आदमी और ठीक समय पर ऐसा ही करने वाले मिल जायँ तो कारिन्दो के व्यवहार मे पर्याप्त सुधार हो सकता है। रामसरन ने जो किया उसके लिए ऊपर से लोग चाहे जो कहे, पर भीतर से सभी उसके प्रशसक है।"

रामाधीन ने रामसरन के प्रश्न को अब तक सहदेई की दृष्टि से देखा था। वह दृष्टि भयातुर नारी की दृष्टि थी। प्रतिष्ठित पुरुष का दृष्टिकोण उसमें जाग न पाया था।

उसे आश्चर्य हुआ कि कोई संसारी पुरुष रामसरन के कार्य की प्रशंसा कर सकता है। जो धक्का लगा उसे वह हरेकृष्ण से छिपा गया। बोला—"हरे कृष्ण, जो कुछ उसने किया वह देखने मे भला भले ही लगे, उससे परिवार पर विपत्ति के अतिरिक्त और क्या आ सकती है ?"

हरे कृष्ण ने संसार रामाधीन से अधिक देखा था। वकीलो से उसने बहुत-कुछ सीखा था। नगर का पानी भी वह कु समय पचा पाया था। अक्षर-ज्ञान उसे विशेष न था पर संसार के विभिन्न मूल्यो और मानों के विषय मे उसकी सम्मति पर्याप्त शुद्ध थी।

रामाधीन की भावना हरे कृष्ण समझ गया और उसने वार्तालाप का विषय बदल दिया।

"परसो रत्तू काका की खाट भूतों ने फिर उलट दी।"

रामाधीन को इस विषय मे रुचि थी। भूतो पर उसे पक्का विश्वास था। बोला—"भई, मैं तो पहले ही कहता था कि भूत है और सदा रहेगे। कल खलिहान पर मे आते दोपहर रात हो गई। घर अकेला था; आना पड़ा। सुक्खू बाबा की अमराई मे होकर आ रहा था कि पत्तो की खड़खड़ सुनाई दी। मैंने सोचा, सियार होगा।

"पर ध्यान से देखा तो छायामूर्तियाँ दिखाई दीं। उनके उलटे पैर मैंने नहीं देखे, गिनगिनाती आवाज मैंने नहीं सुनी ; पर इसमे संशय नही कि वे भूत ही थे। मैंने तुरन्त हनुमान-चालीसा का पाठ प्रारम्भ किया। जहाँ मैंने, भूत पिशाच निकट नहिं आवै, महाबीर जो नाम सुनावै का पाठ किया तो उनमें भगदड़ मच गई। मेरा सन्देह पक्का हो गया। जीभ पर हनुमान-चालीसा हो और हाथ में लाठी तो मैं किसी भूत से नहीं डरता। महावीर स्वामी का नाम लिया नहीं कि प्रेत सिर पर पाँव रख कर भागे नहीं।"

रामाधीन अन्तिम वाक्य कह नही पाया था कि भगौती पण्डित ने मार्ग चलते-चलते झाँका ।

"आओ काका ।" हरे कृष्ण ने निमन्त्रित किया ।

काका आये ही इसलिए थे ।

खलिहान से अन्न आने की प्रतीक्षा मे घर का अन्न चुक गया था । वे एक अमावट के साथ दो मुट्ठी बहुरी खा एक लोटा पानी पी, परमात्मा का यश गा, जीवन से कुछ असन्तुष्ट होकर उठ आये थे ।

यह असन्तोष आता था और चला जाता था । वे भूखे-प्यासे, भरे पेट, खाली पेट, पैतीस-छत्तीस वर्ष खींच ले गये थे ।

भीतर आकर उन्होंने कहा—"महावीर स्वामी की दया से ही हम और हमारे बाल-बच्चे हैं, नही तो ये भूत-प्रेत कभी का उन्हे खा चुके होते । हनुमान चालीसा का महातम इससे भी बडा है । हमारे मँझले काका सुनाया करते थे कि पाडे के पुरवा के उस ओर एक पाठक थे । बेचारे की दशा बुरी हो गई । दाने-दाने को मोहताज हो गये । एक दिन काका खेत से लौट रहे थे तो उन्होंने देख लिया । दौड़ कर चरणों में गिर पडे । काका ने कहा—हनुमान चालीसा का पाठ करो । बजरंगी सब दुःख दूर करेंगे । तब से उसने हनुमान चालीसा का पाठ प्रारम्भ कर दिया और हनुमान जी एक ही मास मे प्रसन्न हो गये । घर मे पुत्र उत्पन्न हुआ । उसके उत्पन्न होतें ही जैसे समय बदल गया । पाठक ने जहाँ हाथ डाला, सोना पाया । खेत में उपज बढ गई । मकान पक्का हो गया । और वह लड़का त्रिलोचन पाठक आज भी हेड मुदर्रिसी कर रहा है ।

"बजरगी के नाम में ऐसा बाल है । भूत-प्रेत तो उनकी छिगुनी देखते ही फुर्र हो जाते है ।"

इतना कह भगौती काका महावीर स्वामी की भक्ति मे सराबोर, आनन्द मे मग्न, ध्यानावस्थित, हो गये । नयन मूँदे, भौंहे झुकी और दो बूँद हृदय का जल उनमे आ गया ।

पौरुष और त्याग का जो आदर्श महावीर युगो से सम्मुख रख गये है

वह आज तक लाँघा नहीं जा सका। सात्विक पराक्रम का ऐसा उदाहरण अन्यत्र अप्राप्य है।

हरे कृष्ण और रामाधीन भी भक्ति से अछूते न रह सके। महावीर स्वामी ने उनकी आत्माओं को भी स्पर्श कर दिया। वन्दिनी, विरहणी सीता के सम्मुख अशोक वाटिका में परित्राण का स्वयंसेवक महावीर मूर्ति उनके सम्मुख आ गई। संजीवनी धारण किये आकाश मे विद्युत् गति से लक्ष्मण के प्राणरक्षार्थ वे सर्र से निकल गये।

इस पवित्रता और शान्ति के वातावरण मे कुछ क्षण तीनों मौन रहे। बाहर सूर्य की देन नीम और इमली के पत्तो से छन-छन कर भूमि पर शीतल और तप्त रंगो का गलीचा बना रही थी।

इस वातावरण ने जन-मन मे जहाँ एक आनन्द और भावुकता की सृष्टि की, वहाँ एक व्यापक, प्रेरक भय भी उन पर छा गया। मौन सर्व-सम्मति ने वार्तालाप का विषय बदलना तय कर लिया।

"सुना है, अबकी घर पीछे एक रुपया मोटराना भी देना पडेगा। राजा साहब मोटर खरीद रहे हैं।" हरे कृष्ण ने जैसे भेडो मे ढेला फेका। इससे दोनो श्रोता प्रभावित हुए। भगौती बोले—"अबके फसल अच्छी है, कुछ मँहगाई भी है तो यह मोटराना आ पहुँचा। ठीक है, यदि कुछ ऐसा न आता तो अधिक आश्चर्य की बात होती।"

"एक रुपये मे दो-चार आने और डालकर एक धोती आती है, जो साल भर चलती है।" हरे कृष्ण ने कहा—"परखू को दो बरस से धोती नही मिली। जान पड़ता है, इस बार भी वह राजा की मोटर के नीचे रह जायगी।"

दु:ख मनुष्य सह सकता है। सहता जा सकता है। पर बारम्बार दु:ख की सुधि करना, उसके कारण खोजना, अपनी विवशता से जाकर टकराना, उस दु:ख को कई गुना कर देते हैं।

एक रुपया देना होगा, दे दिया जायगा। अभी से उसकी चिन्ता क्यों?

नंगा रहना होगा, रह लिया जायगा। अभी से उसकी कल्पना क्यों की जाय ? इसी से भगौती पण्डित ने विषय पुनः बदला।

नवीन विषय के प्रति उनमें उत्साह था। बोले—"रामनाथ का बेटा नगर मे लौट कर गाँव मे रहने आ रहा है; चिट्ठी आई है।"

रामाधीन और हरे कृष्ण दोनों ने इस समाचार मे रुचि दिखलाई।

रामनाथ का अकेला पुत्र था और वह भी तेरह वर्ष की अवस्था मे गाँव छोड़ कर भाग जाने को विवश हुआ था।

परिवार इस प्रकार निःशेष हो जाने पर पिता के बड़े भाई शिवनरायन ने उसकी भूमि पर अधिकार कर लिया। इससे उसके परिवार का भरण-पोषण हो जाने की सुविधा हो गई। वह अपने भाई के परिवार के खँडहर पर खड़ा हो, गाँव मे बड़ा और प्रतिष्ठित हो गया। भाग्यशाली बन गया। जो भाग्यशाली होता है उसी के निकट के सम्पन्न सम्बन्धी मरते हैं, यह सर्व-सम्मत है।

अब आदेश्वर नगर से लौटा आ रहा है। वह अपना भाग वापिस चाहेगा। गाँव के पंच न्याय करेंगे। वे शिवनरायन की दयनीयता मे आनन्द लेकर उसे पुनः दरिद्र बना देंगे; आदेश्वर को उसके पिता का भाग दिलवा देंगे। घटना सरस होगी।

रामाधीन ने पूछा—"आदेश्वर अब कितना बड़ा होगा ?"

"तीस से ऊपर होगा।" भगौती बोले—"हमारे साथ खेलता था, बड़ा सुन्दर मर्द बना होगा।"

"सुना है कि कानपुर के किसी कारखाने मे.....।"

"हाँ, अफ़सर था। बडी तलब मिलती थी। अब नौकरी से जी ऊब गया होगा तो घर आ रहा है।"

"बाल-बच्चे ?"

"परदेस का क्या पता ? कदाचित् अकेला है। हाँ, रुपया तो खूब कमा लिया होगा।"

"आकर पक्का मकान बनवायेगा।"

"पक्का मकान !" भगौती काका ने नाक चढाते हुए कहा—"गाँव मे पक्का मकान मातादीन तिवारी ने बनाया था ; चार साल मे परिवार साफ हो गया और मकान धूल मे मिल गया। हरदत्त कायथ ने बैठक पक्की कराई थी, पहली बरसा मे ही बैठ गई। सुखभूखन साहु की दूकान दो बरसा झेल गई है पर अधिक झेलेगी इसमे संशय है। हमारे गाँव को पक्का मकान फलता नही। आदेश्वर बानना भी चाहेगा तो मै उसे भरसर बनाने न दूँगा। व्यर्थ रुपया लगाने से लाभ ?

भगौती का यह विचार हरे कृष्ण और रामाधीन को भाया नही। यदि आदेश्वर पक्का मकान बनाने मे रुपया लगाना चाहता है तो मकान चाहे दो ही मास मे गिर जाय, भगौती क्यो रोके ?

आदेश्वर के पास जब तक धन रहेगा वह गाँव भर के नयनों मे खटकता रहेगा। उनसे बाहर का व्यक्ति रहेगा। पर ज्यों-ज्यो वह गाँव मे अपना धन अपव्यय करके निर्धन होता जायगा, त्यो-त्यों ठीक ग्रामीण होता जायगा। जब वह उनके समान दरिद्र हो जायगा तो उससे ईर्ष्या का कोई कारण न रहेगा। हरे कृष्ण और रामाधीन उसे अपना समझने लगेंगे।

परदेस मे रहा है। बाल-बच्चे नही हैं। बड़ी तलब मिलती थी। इस सब का एक अर्थ होता था।

तैतीस-चौंतीस वर्ष की अवस्था विवाह के लिए अधिक नही है। उसके पास धन है गाँव मे भूमि है। कन्या का भला चाहने वाला कोई भी पिता अपनी पुत्री का विवाह उससे कर देगा।

और विवाह के पश्चात् बाल-बच्चे होते कितनी देर लगती है ? पहला सँभलने भी नहीं पाता, दूसरे तीसरे आ उपस्थित होते है।

सब ने कल्पना की कि शीघ्र ही आदेश्वर और उसके दादा मे ठन जायगी। प्रतिष्ठित दोनों अपमान और क्षुद्रता को भूमि पर उतर आयेंगे।

यह सन्तोष का विषय था कि गाँव मे अब बहुत दिन पश्चात् कुछ रोचक होने को है।

गिरने के कारण ननको की गुड़िया की बालियाँ खुल गई थी। उसका वस्त्र अस्तव्यस्त हो गया था।

माँ जब चली गई तो वह चुपचाप गुड़िया के पास बैठ गई। बड़े प्यार से उसे उठाया, चूमा, मिट्टी झाडी और वस्त्र ठीक किये। बालियों की ओर ध्यान दिया। वे फिर से बनानी पड़ीं। इस कार्य में उसे काफी समय लग गया।

वह जितनी शीघ्रता करती थी, उतनी ही वह बनकर बारबार उधड़ जाती थी। एक बाली टूट गई तो दूसरी को भी तोड़ उसे छोटा करना पडा। वह दादा के सम्मुख जायगी तो गुड़िया लेकर। वैसे नही। इतना सन्तोष था कि वे जग रहे, बातें कर रहे हैं।

जब वह शृंगार कर चुकी तो उसे ले चौखट से लग खड़ी हो गई। रामाधीन के अपनी ओर देखने की प्रतीक्षा करने लगी।

रामाधीन अपनी बातो मे अधिक संलग्न दिखाई दिया। ननको को खडे-खड़े समय अधिक हो गया तो उसका धैर्य समाप्त हो चला और उसने बाये हाथ से किवाड़ पर साँकल दे मारी।

रामाधीन क्या सबका ध्यान उस ओर गया। दादा के नयनों से नयन मिलते ही ननको उसकी गोद मे दौड़ गई और चुपके से गुडिया को औरों की दृष्टि से छुपाकर उसके सम्मुख कर दिया।

"क्या है री ननको ? हमे भी दिखा।" भगौती पण्डित ने कहा।

"कुँछ नहीं।"

रामाधीन ने गुड़िया अपने हाथो मे लेली। ननको के सिर से ऊपर उठाकर उसे स्वयं देखा और तभी हरे कृष्ण एवं भगौती ने भी देखा।

ननको गुड़िया केवल दादा को दिखाने लाई थो। जनता उसकी सुकुमारी पर्देवाली पर दृष्टिपात क्यो करे ?

वह चिढ गई। दादा से प्रशंसा पाने की लालसा भाग गई। कुण्ठित और रुष्ट होकर बोली—"लाओ मेरी गुड़िया, मै नही दिखाती।"

फिर दादा के हाथ मे गुडिया ले स्वामी घर मे भाग गई—जहाँ वैजंती गेहूँ को भूमी से अलग कर रही थी। उसने गुड़िया फेंक दी और भूमि पर लेट कर जोर से रोने लगी।

बेटी को इस प्रकार अचानक रोते सुनकर सहदेई को क्रोध आ गया।

वैजंती ने ननको की समस्या समझ ली। बोली—"बिट्टी, गुड़िया दिखानी है ?"

ननको का रोना शान्त हो गया। वह काकी को गुडिया दिखाने उठने लगी, तभी माँ मे दौड कर झटके के साथ उसे उठा लिया और पूछा—"क्यो री, इस काकी ने मारा है ?"

ननको को छूटने की शीघ्रता थी। माँ जब तक उत्तर न पा लेगी छोड़ेगी नही। इसलिए उसने धीरे से, जल्दी मे, कह दिया—"हाँ।"

उसने आपको माँ की पकड़ से छुडा लिया। सहदेई दो क्षण वैजंती की ओर आग्नेय नेत्रों से देखती खडी रही।

उसने देखा कि ननको का रोना बन्द हो गया है। उसने गुडिया उठा ली है, हँसती-हँसती काकी की गोद मे बैठकर उसे उसका शृङ्गार दिखा रही हैं। वैजंती ने कार्य छोडकर उसके खेल मे रुचि ली। ननको सन्तुष्ट हो गई।

सहदेई को बेटी पर क्रोध आया, और काम छोड खेल मे लगनेवाली देवरानी पर। इसके पश्चात् वह एकाएक मुस्करा पड़ी। काकी-बेटी को खेलती छोड़ वहाँ से चली गई।

७

हरिनाथ उन चरित्रों मे से था जिनकी संसार में बहुलता होती है। असाधारणता के कारण नही वरन् साधारणता के कारण।

ये लोग वे होते हैं, जो अपने पैसे के लाभ के लिए दूसरों को रुपये की हानि पहुँचाने में नहीं हिचकते। अपने शक्तिशालियों के तलुवे सहलाते हैं और स्वयं अवसर पाकर दुर्बल पर अत्याचार करते हैं। चाटुकारी के बदले चाटुकारी चाहते हैं।

ऐसे लोग अपना शिकार चुनने मे बडी सावधानी से काम लेते हैं। क्योंकि तनिक भूल से हड्डी गले पड जाने का भय रहता है। अब हरिनाथ ने रामाधीन पर दृष्टि डाली।

रामसरन के साथ जो दुर्घटना हो गई है, उसके कारण यह परिवार व्यवस्था-यन्त्र की स्थानीय शाखा की सहानुभूति खो बैठा है। एक-दो बार की उसकी शिकायत पर कोई ध्यान नहीं दिया जायगा। हरिनाथ ने इस अवस्था से लाभ उठाने का निश्चय किया।

रामावतार वृद्ध होने पर भी उसके दबाव मे आने वाला न था। गाँव मे उसका कुछ मान था। उसकी ओर सहानुभूति-वश चार व्यक्ति खडे होने को मिल सकते थे। रामविलास कसरती पहलवान था और आवश्यकता पड़ने पर लाठी का प्रयोग नाशकारी रीति से कर सकता था। इन्ही कारणों से उसने परिवार के मोरचे मे सबसे दुर्बल भाग पर आक्रमण किया।

दोपहर के समय रामाधीन के विरुद्ध जो निर्विरोध सफलता हरिनाथ को मिली उससे उसका उत्साह बढ गया था। यदि रामाधीन प्रतिकार किये बिना उसकी मार सह सकता है तो और अधिक भी सह सकेगा। जितना वह सह सकता है उतना उसे सहा देने का उसने निश्चय कर लिया।

सन्ध्या समय रामावतार घर लौटे; रामविलास हरे चारे की खोज में गया; खलिहान पर रामाधीन और उसका चमार हरवाह रामसेवक रह गये।

सेवक ने आग सुलगाकर चिलम भरी और नारियल गुड़गुड़ाने लगा। रामाधीन चिकनी भूमि पर चादर फैलाकर लेट गया। चिरसंगिनी लाठी उसके निकट रक्खी हुई थी।

सूर्य की अन्तिम किरणें संसार छोड़ रही थीं। उस सुनहरे भूमि-खण्ड पर श्यामल आवरण धीरे-धीरे गहरा होता जा रहा था। क्षितिज के निकट आकाश में कुछ रक्तिम सुनहरी धारियाँ शेष थी।

अमराई, जिसने दिन मे सूर्य से भयभीत छाया को आश्रय दिया था, अब जैसे उसे उगलने लगी। अन्धकार उसमे से निकल-निकल कर अपनी

सर्व-आवेष्ठक भुजाओं से खेतों, मेड़ों और खलिहानों को ढकने लगा।

रामाधीन का खलिहान अलग, कुछ एकान्त में था। दूसरा खलिहान चार-पाँच सौ गज से निकट न था। पाँच सौ गज अन्धकार मे पाँच मील से भी अधिक लम्बा हो जाता है।

रामाधीन ने घिरते अन्धकार की ओर देखा और अनुभव किया कि उसके भीतर भी गहरा अँधेरा भर गया है। वह जहाँ है वहाँ उसका क्या कर्त्तव्य है। सोचता है कि पृथक हो जाने मे लाभ है। पर कुछ वाक्य और घटनाएँ घुमड़-घुमड़ कर आती है और उसे गम्भीरतापूर्वक विचारने को विवश करती है।

हरिनाथ उसके पीछे पड गया है। उसके अत्याचार वह कब तक सहेगा? एक दिन तो जमकर लोहा लेना ही होगा। उसका परिणाम कौन जानता है?

एक बार अत्याचार सहन कर उसने और अत्याचार को निमन्त्रण दे दिया है। यदि उसे कुछ हो गया; जेल जाना पड़ा; तो बच्चों का क्या होगा? परिवार जबतक सम्मिलित है भाई और बाप को कैसे भी उसकी सन्तान की खोज-खबर लेनी ही होगी।

उसने करवट बदली। जितना अत्याचार हरिनाथ अकेले पर कर सकेगा उतना सम्मिलित परिवार पर नहीं।

रामाधीन ज्यों-ज्यों सोचता था, उसे लगता कि सम्मिलित रहना ही अभी उसके लिए वाञ्छनीय है। उसने निश्चय-सा कर लिया कि अपनी ओर से अब वह पृथक होने का प्रश्न न उठावेगा। उसे घटनाओं का रुख देखकर चलना होगा।

हरे कृष्ण के वाक्य उसके सम्मुख आये। रामसरन का कार्य, जैसा वह समझता रहा है उसके अतिरिक्त, दूसरे दृष्टिकोण से भी देखा जा सकता है। उसमें महत्व, प्रतिष्ठा और सम्मान-रक्षा की भावना है। उसका कार्य प्रशंसनीय है। ऐसे भाई को अकेला छोड़कर पृथक हो जाने पर क्या लोग उसे धिक्कारेंगे नहीं!

उसकी आत्मा स्वार्थ के दुर्गन्धपूर्ण अन्धकार से ऊपर उठी। परिवार की प्रतिष्ठा के लिए वह अपनी स्त्री और सन्तान की भेंट दे देगा।

गर्व से उसकी छाती फूल उठी। उसके नयनों मे ज्योति आ गई। धमनियो मे रामसरन की भावना बह निकली। वह उठकर बैठा; फिर खड़ा हो गया। अन्धकार मे गर्वभरे नयनो से देखा। अपने भीतर उमड़ते शक्ति-स्रोत को सँभाल नही सका। टहलने लगा।

पुकारा—"सेवक।"

सेवक नारियल गुड़गुडा रहा था और मन्द-मन्द स्वर से एक विरहा गा रहा था। अँधेरी रात उसे भा रही थी। विरही प्राणों मे जब वह अग्नि नही प्रज्वलित करती तो अपार शक्ति भरती है। सेवक उसी का अनुभव कर रहा था।

"महाराज!" सेवक ने उत्तर दिया।

"कैसा है तेरा बेटा अब?"

"हुजूर दिन मे कुछ कम था, पर वह तो रात को अधिक होता है। परमात्मा जाने कैसा है?" उसने लम्बी साँस ली।

सेवक का अकेला बेटा, सत्रह साल का बेटा, लगभग एक मास से ज्वर से पीड़ित है। बीमारी लम्बी हो गई है, इससे कहा नहीं जा सकता, काल जीतेगा या मनुष्य। पर जब तक साँस है तब तक आस है। और चारा क्या है?

रामाधीन की इच्छा थी कि सेवक से उच्च स्वर से गाने को कहे। पर पुत्र की अवस्था सुनकर उसकी इच्छा ठिठुर गई।

किसका इलाज है? क्या बीमारी है? क्या पथ्य है? डाक्टर शिवरंजम को दिखाओ; पहाड़ ले जाओ, आदि-आदि प्रश्नों और सुझावों की सीमा अभी वहाँ तक नहीं पहुँची है।

एक प्रश्न पूछा जा सकता है। क्या रुग्णावस्था मे उसे उचित भोजन मिल जाता है? पर यह पूछे कौन? वही जिसमे आवश्यकता पड़ने पर दो दिन भोजन देने की सामर्थ्य हो। रामाधीन द्रवित होकर मौन हो गया। सेवक का गुनगुनाना भी बन्द हो गया।

रामाधीन में जो उत्साह की धारा उमड़ी थी, मन्द पड़ गई। उसका टहलना बन्द हो गया। बैठने की इच्छा हुई। उस अन्धकार मे अमराई की ओर उसकी दृष्टि गई। दिन के उस लज्जास्पद काण्ड के पश्चात् हरिनाथ उस वृक्ष के नीचे जाकर लुप्त हो गया था। उसके नयनों मे रक्त उतर आया। यदि वह इस समय हरिनाथ को अकेला पा जाता तो ..।

रामसरन का ध्यान उसे हो आया। वह रुका नही, झिझका नहीं। कारिन्दे के मुख से पिता के प्रति मारने-पीटने की धमकी और अपशब्द निकलते ही उसका थप्पड़ उसके मुँह पर जमकर बैठा, ऐसा कि रक्त से मुख भर गया।

इस समय उसके सामने अपने और शेष दो भाइयों मे अन्तर स्पष्ट हो गया। वे उससे बलिष्ठ हैं। व्यायाम मे उन्होंने कभी आलस्य नहीं किया। जो समय उसने सोने और व्यर्थ वार्तालाप मे गँवाया है, उन्होंने शरीर बनाने मे लगाया है। यही कारण है कि रामसरन से सब दबते है; रामविलास के सम्मुख कोई पडना नहीं चाहता; गाँव में उनकी प्रतिष्ठा है।

बल में न सही पर आत्मा मे वह अपने भाइयों से नीचे नहीं जायगा। वह अब हरिनाथ से नहीं दबेगा। वही बँधी मुट्ठी के समान रहेगा। पृथक होने का नाम न लेगा। गाँव वाले देखेंगे कि भाई कैसे भाई के लिए जान देता है।

रामाधीन इस प्रकार विचारों में मग्न था कि सेवक ज़ोर से चिल्लाया—"कौन है ?"

रामाधीन का ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ। सुना कि सेवक के चिल्लाने पर भी ढेर में से पूलों का निकाला जाना बन्द न हुआ।

सेवक ने लाठी सँभाली और शब्द की ओर जाता हुआ बोला—"कौन है ? सुनता नहीं !"

जब सेवक चोर के निकट पहुँचा तो चोर ने कहा—"कौन है रे ? सेवक है क्या ?"

"कौन हरिनाथ दादा ?"

"हाँ, कौन है यहाँ ?"

"दादा, इस समय रहने दो। जब मैं यहाँ न हूँगा, तो चाहे सारा खलिहान बाँध ले जाना।"

"अरे, तो क्या चोरी कर रहा हूँ ? पिछले वर्ष उधार दिया था, वही ले रहा हूँ।"

"दादा !"

हरिनाथ निरन्तर खलिहान मे से पूले खींच-खींच कर बाँधने के लिए चादर पर रखता रहा।

उत्सुकता रामाधीन को भी वहाँ ले आई।

"कौन ? रामाधीन ?" हरिनाथ ने उस मूर्ति को पहिचानते हुए कहा। फिर शीघ्रता से उसके निकट चला गया। उसका हाथ पकड़कर बोला—"पिछले वर्ष दो बोझ उधार दिये थे, उनमे से एक आज ले जा रहा हूँ, एक कल ले जाऊँगा।"

वह फिर लौट कर पूले बाँधने लगा। सेवक ने अनुभव किया—रामाधीन सन्न खड़ा है। हरिनाथ क्या कर रहा है ? कैसा उधार वापिस ले रहा है ?

पर जब खलिहान का स्वामी उपस्थित है और वह स्वयं नही रोक रहा है, तो वह रोकने वाला कौन ?

रामाधीन की दशा विचित्र थी। भावना उठी कि जाकर हरिनाथ के सम्मुख जमकर खडा हो जाय, उसका आतंक मनाने से इनकार कर दे। कह दे कि खबरदार जो पूले को हाथ लगाया होगा तो....।"

पर वह अपने को इस कार्य के लिए प्रस्तुत न कर पाया। उसका साहस दो डग भरकर पीछे लौट चला। हरिनाथ शक्तिशाली है। वह निर्मम बैरी हो जायगा। उसे निरपराध जेल भिजवा देगा, तब क्या होगा ?"

वह अपना कर्तव्य निश्चित न कर पाया और उस ओर हरिनाथ बोझ बाँध तैयार हो गया।

जब हरिनाथ बोझ उठा कर चलने लगा तो सेवक उसके सम्मुख जाकर खडा हो गया।

"दादा !"

हरिनाथ घूम पड़ा। "रामाधीन, तो तू उधार लौटाने से इन्कार करता है ?"

रामाधीन की समस्त शक्ति जैसे सूख गई। हरिनाथ के वाक्य मे उसके लिए जो धमकी छिपी थी, उससे वह सिहर गया। रामाधीन एक क्षण ठिठका, फिर बोला—"जाने दे सेवक !"

सेवक को अपने कानो पर विश्वास न हुआ। रामसरन का बड़ा भाई और उसका यह व्यवहार ! वह मार्ग से हट गया। रामाधीन उसकी दृष्टि में सदा के लिए गिर गया।

रामाधीन को लगा कि वह अब सेवक को मुँह नही दिखा सकता। वह कितनी कायरता का कार्य कर बैठा है। यह बात गाँव मे फैले बिना न रहेगी।

उसका साहस खलिहान मे अपने स्थान पर लौट जाने का न हुआ। वह जिस ओर हरिनाथ गया था, उसी ओर अन्धकार मे धीरे-धीरे चल पड़ा। चलता चला गया। मन का स्वास्थ्य धीरे-धीरे लौटा। वह हरिनाथ से भीषण बदला लेने की कल्पना करता लौट पड़ा।

पर क्या उसमे प्रतिशोध की शक्ति है ? वह चारो ओर से अपने को बँधा पाता है। जिसमें वह फँस गया है वह जीवन भर की उलझन है। न केवल उलझन है, वह जीवन-भर की आत्म-लज्जा और आत्म-उपहास है।

८

घर में क्या हो रहा है, यह रामविलास को ज्ञात नहीं।

अपना काम वह कुशलतापूर्वक करता है। उसका मन उसमें लगता है। इसके अतिरिक्त और किसी बात से जैसे उसे काम नहीं है।

रामसरन की अनुपस्थिति समय-समय पर उसे खलती है, पर इस विषय में जो करना है उसके लिए उससे पहले रामावतार और रामाधीन हैं।

पशु उसके उत्तरदायित्व हैं। वह उनके लिए भरी गर्मी में भी हरा

चारा जुटाता रहता है। एक बोझ घास के लिए वह पहर भर रात रहे उठकर गाँव से छ:-छः सात-सात मील गया है। दिन चढ़े लोगों ने उसे हरा चारा लिये लौटते देखा है और दाँतो तले उँगली दबाई है।

पशु उसके आत्मीय है, तभी वह इतना कर पाता है।

यह नही कि पशु उसकी सेवा से अनभिज्ञ हों। वे सब जानते है और रामविलास को मानते है। जब घर के सब लोग, हरवाह-सहित, चितकबरे मरकहे बैल के कन्धे पर जुवा रखने मे असफल हो जाते है, तो रामविलास के कण्ठ का एक शब्द उसे शान्त कर देता है और वह सधे कुत्ते की भाँति अपना सिर झुका देता है।

बच्चा-बच्चा जानता है कि जब गाय-भैस किसी से दुहाना स्वीकार नहीं करतीं तो रामविलास काका के पास सब एकत्र होकर जाते है और रामविलास काका दो को गोद में, दो को कन्धों पर, एक को सिर पर लाद उनके सम्मुख जा खडे होते है, वे तुरन्त दूध उतार देती है।

बच्चों और पशुओं से रामविलास की जितनी आत्मीयता है वृद्धों और अधेड़ों से लगभग उतनी ही तटस्थता।

जीवन में उसका ध्येय क्या है ? यह न कोई ग्रामीण सोचता है और न उसने सोचा है। गाँव मे ध्येय मनुष्य के उन पैरों की भाँति है, जो चादर की लम्बाई के अनुसार ही फैलाये जाते है; और उस चादर में बढ़ने की विशेष सुविधा नही है।

नगर मे व्यापारी या नौकर धन एकत्र करने की योजना बना सकता है और उसके साथ लक्ष्य का सम्बन्ध जोड़ सकता है। लक्ष्य चाहे कितना ही विरागी क्यों न हो धन का आश्रय लिये बिना खड़ा नहीं हो सकता। लक्ष्मी के प्रति उसकी निर्भरता अमाप है। लक्ष्मी के घटते ही लक्ष्य के पैर डगमगाने लगते है। वह झुकने, बैठने को विवश होता है; बस, विवशता का भार बढ़ते ही लेटना उसके लिए अनिवार्य होता है। जो सदा लेटा रहता है उसकी प्रवृत्ति मिट जाने की ओर होती है। जो पानी बहता नहीं वह सूखता ही है।

रामविलास के सम्मुख रहे जाने के अतिरिक्त और कोई लक्ष्य न था। वह अपने प्यारे वृक्षों और पशुओं की भाँति उत्पन्न हुआ था, वैसे ही रह रहा था, होनी ने भविष्य की रेखाएँ इसी प्रकार खींच रखी थी।

रामविलास भी रामधीन की भाँति पाठशाला गया था। इन पाठशालाओं के शिक्षको की नौकरी उनकी पढाने की योग्यता पर नही पाठशाला मे अधिकाधिक बालक भरती करने की योग्यता पर निर्भर करती है। जब पण्डित राजाराम रामावतार के दरवाजे विद्यार्थी की भीख माँगने पहुँचे तो रामावतार ने रामविलास को उनके सामने करकहा—"पण्डित! हमारे घर मे पढ़ने-पढाने की रीति तो नही है, पढना सहता भी नही; पर तुम्हारी इच्छा है तो इसे ले जाओ। चार आखर सीख जायगा, काम आयेंगे तो तुम्हारा गुन गायेगा।"

पण्डित राजाराम दो दिन पश्चात् चार बालको से लगभग घसिटवा कर रामविलास को पाठशाला लिवा ले गये।

रामविलास की प्रकृति गहरी थी। पहली कक्षा तक उसने खूब मन लगाकर पढा। जोड, बाकी, गुणा, भाग, हिरन-गीदड की कहानी, कबूतर चूहे की मित्रता, दो बकरियों की बुद्धिमत्ता, सब उसे कण्ठाग्र हो गई।

वह दूसरी कक्षा में जाने ही वाला था कि उस कक्षा के शिक्षक ने अपने प्रारम्भिक व्याख्यान में कहा—"संसार मे उत्पन्न होने का सब से बड़ा लाभ यह है कि मनुष्य पढ सकता है और अच्छे-अच्छे काम कर सकता है।"

• बालक और भी थे पर रामविलास कुछ अधिक था।

उसने पूछा—"पण्डित जी, उत्पन्न कैसे होते है?"

पण्डितजी इससे क्रुद्ध हो गये। पुत्र के अपराध पर माता को दण्ड दिया। दो गालियाँ उस बेचारे को सुना दीं।

रामविलास यह सह न सका। बस्ता उठाकर उसी क्षण पाठशाला से चला आया और कह दिया कि न वह ऐसे पण्डित से पढेगा, न ऐसी पढाई पढ़ेगा।

पण्डित जी की वृद्धा स्वर्गीया माता को गालियाँ भेजकर उसने अपना बदला चुका लिया। इसके पश्चात् फिर शिक्षा के मार्ग की ओर वह न गया।

वैसे तो वह महामूर्ख था—समझा जाता था पर जब पढ़ने की बात चलती तो स्पष्ट कह देता था कि यदि गालियो का अभ्यास करना है तो पाठशाला से अधिक उपयुक्त तो अखाडा या कबड्डी का मैदान है। भाई एवं शुभचिन्तकों के हठ करने पर भी वह पाठशाला न गया न गया।

पटवारी ने कहा—"किसान के बेटे को पढाई से वास्ता ?"

रामविलास पशुओ के लिए घास लेने गया। निकट हरियाली न होने के कारण पॉच मील दूर एक झील के किनारे जाना पड़ता था।

रामविलास घास का बोझ लिये आ रहा था कि नगर से लौटता हरदत्त भी साथ हो गया। चलते-चलते उसने पूछा,—"अरे रामविलास, मैंने सुना है कि तुम लोगों मे बँटवारा होने वाला है ?"

"नही तो !"

रामविलास ने बलपूर्वक उत्तर दिया। दोनो साथ चलते रहे। हरदत्त चाहता था कि रामविलास बात करे। उसके सिर पर बोझा था। वह हॉ ना मे उत्तर दे सकता था।

हरदत्त ने फिर पूछा—"रामसरन का क्या हुआ ?"

रामविलास को लगा कि यह प्रश्न मुझ से क्यो पूछा जा रहा है। वह चुप रहा। प्रश्न किया—"तुम्हारे मुकदमे का क्या हुआ ?"

"अभी फैसला नही हुआ। गवाही हो गई है। उनके गवाह बिगड़ गये है। जान पडता है, बेदखली न होगी।"

रामविलास ने कहा—"हूँ।"

हरदत्त वास्तव मे अपनी कथा सुनाना चाहता था।

"भला हमारा और राजा का क्या मुकाबला ? वे समरथ हैं; जितने गवाह चाहे जुटा सकते हैं।"

"लगान पूरा भरने पर भी बेदखली हो, यह तो अत्याचार है।"

"कारिन्दे पर विश्वास किया। उसी समय रसीद नहीं ले ली उसका यह फल है। मैं समझता था कि दिन-रात का उठना-बैठना है ऐसी बेईमानी क्या करेंगे ?"

"हूँ।"

"ज्यादा से ज्यादा खेत छुड़ा लेंगे पर दुबारा लगान मैं न दूँगा।"

रामविलास को लगा कि क्या ये बातें वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। उसे अभी तक कुडकी बेदखली मे काम नही पडा है। आगे नहीं पड़ेगा, यह वह नही कह सकता।

नागरिक न्यायालय की दीवारो की छाया मे रह कर न्यायालय से दूर रह सकता है, पर ग्रामीण जितना न्यायालय से दूर है उतना ही निकट है।

गाँव मे जिसने न्यायालय का मुख नही देखा, वह परम भाग्यशाली है। बात-बात पर कचहरी वहाँ सजग हो जाती है, और जोंक की भाँति उनका जीवन-रक्त चूसती रहती है।

हरदत्त और रामविलास काफी दूर तक साथ-साथ चलते रहे। कोई बोला नही।

रामविलास के मन मे रह-रह कर एक बात गूँजने लगी। यह बटवारे की बात कैसी ? और हरदत्त तक कैसे पहुँची ?

रामाधीन और दादा के बीच कोई बात अवश्य हुई होगी। रामाधीन द्वारा वह हरदत्त तक पहुँची होगी। पर बटवारे के लिए यह कौन समय है। जब कारिन्दे के विरुद्ध कचहरी मे उपस्थित होना है तो उन्हें अपनी शक्ति संगठित रखना चाहिए।

इस प्रश्न को वह बार-बार भूलने का प्रयत्न करता रहा, पर समस्या थी कि कुतुबनुमा की सुई की भाँति घूम कर उसके सम्मुख आ जाती।

हरदत्त कब उसका साथ छोडकर चला गया, उसे पता न चला।

६

पशुओं की सानी-पानी के पश्चात् जब रामविलास हरिसुन्दर को गोद

मे लेकर चुप कराने का प्रयत्न कर रहा था, तो किसोरी उसके निकट गई। बोली—"वैजंती ने दो दिन से नहीं खाया है।"

समाचार छोटा, पर गम्भीर था। रामसरन की बहू ने यदि दो दिन से भोजन नही किया तो उसका कारण भी ऐसा विकट होना चाहिए। क्या केवल पति-वियोग ही है ?

"वात क्या है ?"

किसोरी ने चारो ओर देखा, बाहर के आँगन मे अन्धकार था। भीतर के आँगन के दूसरे सिरे पर रसोई मे अंडी के तेल का दिया जल रहा था। उस प्रकाश मे सहदेई भोजन बना रही थी।

किसोरी ने पति का हाथ पकड़ उसे और बाहर के आँगन मे खीच लिया। रामविलास की समझ में न आया। उसने प्रश्न दुहराया—

"बात क्या है ?"

किसोरी ने धीरे-धीरे, लगभग फुसफुसाकर, कहा—"दोनो जनो ने उसे और देवर को खूब गालियाँ दी हैं। कहा है स्वयं तो वहाँ जाकर आराम से बैठ गया और इसे खाने को हमारी छाती पर बैठा गया।"

रामविलास ने सुना; क्रोध से उसके नयन लाल हो गये। शरीर काँप उठा। वैसे चाहे विश्वास न होता, पर हरदत्त से जो बटवारे की बात वह सुन आया है ! अब उसे यह असम्भव न जान पडा। पर उसने अपना चित्त स्वस्थ किया। एक क्षण सोचा। फिर किसोरी से पूछा—"कहाँ है बहू ?"

"अपनी कोठरी बन्द किये पडी है।"

नगर था नहीं। रामविलास को नगर का अनुभव भी न था। यदि होता तो बाज़ार से कुछ लाकर खिला देने की बात उसे सूझ जाती। वहाँ उसे भोजन दिया जा सकता था तो घर में से ही।

रामविलास का मस्तिष्क घूम-फिर कर वहीं आ गया। कोई उपाय उसे न सूझा। "तो क्या करें ?" उसने किसोरी से प्रश्न किया। "रामसरन की बहू को भूखा नहीं सोना चाहिए।"

किसोरी ने एक क्षण सोचा। फिर बोली—"जाऊँ, देखूँ, वैजंती खाने

को राजी हो तो कुछ चबेना ले जाऊं। जेठानी से कुछ कहा तो एक झगड़ा खड़ा हो जायगा।"

"जैसा ठीक समझो, करो। रामसरन की बहू भूखी नहीं रहनी चाहिए।"

रामविलास हरिसुन्दर को लिये आँगन में टहलने लगा। किसोरी ने जाकर वैजंती के किवाड़ स्पर्श किये। उसकी कोठरी बाहर के आँगन में थी।

रामाधीन भीतर के आँगन में रहता था, रामसरन बाहर के और रामविलास के पास दो कोठरियाँ भीतर थीं और एक बाहर।

तनिक दबाने से किवाड़ खुल गये। भीतर अँधेरा था। धीरे से पुकारा—"वैजंती।"

कोई उत्तर प्राप्त न हुआ।

किसोरी सावधानी से कोठरी में घुसी। टटोलती उनकी खाट के निकट पहुँची। स्पर्श किया, वैजंती वहाँ न थी। उसने पुन: पुकारा—

"वैजंती।"

भूमि पर लेटी वैजंती ने शब्द से इसका उत्तर न दिया। पर उसकी साँस जोर से चलने लगी। जैसे कि शरीर ने एक मार्ग रुद्ध होने पर दूसरे से उत्तर दिया हो।

किसोरी उस दिशा में बढ़ी और टटोल कर वैजंती को पा गई।

"वैजंती उठ न! कुछ खा ले। ऐसे कैसे काम चलेगा।"

सहानुभूति के कुछ कण पाकर वैजंती के नयनों में अश्रु आ गये। बोली—"नहीं, मैं नहीं खाऊँगी।"

"क्यों?"

"क्या तुमने सब सुना नहीं है?"

"सुना तो है, पर।"

"नहीं, मैं नहीं खाऊँगी। मरना होगा तो ऐसे ही मर जाऊँगी।"

वैजंती के मन में एक सम्भावना जगी। जब उसके अनशन की बात फैलेगी तो वह ससुर तक अवश्य जायगी। वह चाहती है कि उनके घर में

क्या हो रहा है, यह उन्हे मालूम हो जाय। उसे विश्वास था कि वे न्याय करेंगे और वह झुकेगा उन्ही की ओर।

"पगली हुई है!" उसने प्यार से उसके माथे पर हाथ फेरते हुए कहा।

"मै पगली-वगली नही हूँ। वे लोग मुझे गाली दे लेते, मैं सह लेती, सहती आई हूँ; चुप रहती। पर उन्हे जो गालियाँ दी गई हैं वे तुमने स्वयं सुनी है। क्या वे अपनी खुशी से, काम से डरकर जेल गये है? नही, मैं भोजन नहीं करूँगी।"

यही शब्द कितने ही प्रकार से कहे जा सकते थे। शब्दों का अर्थ उनमे विशेष नही है। उनके पीछे जो मन का स्वरूप होता है वही उनका अर्थ निश्चित करता है।

किसोरी ने देखा। वह समझ गई कि वैजंती दृढ़ है। उसे वह हिला न सकेगी। किसोरी को भी सहदेई के विरुद्ध वैजंती से सहानुभूति है। वह भी चाहती है कि यह समाचार ससुर तक पहुँच जाय तो बुरा नहीं। इसलिए उसने भी विशेष प्रयत्न न किया।

रामविलास ने यह सुना और संकट में पड़ गया। क्या करे? पिता रामसरन को लेकर वैसे ही चिन्तित है। बटवारे की बात यदि सच्ची है तो उससे उनकी चिन्ता बढ़ी होगी और अब यह गृह-कलह लेकर उनके निकट जाय।

पर किसोरी ने कहा कि वह खायेगी केवल ससुर के कहने से।

इस कलह का सम्बन्ध यदि रामसरन से न होता तो रामविलास उसे पिता तक न ले जाता। जब रामसरन नही है तो उसकी बहू के प्रति उसका कुछ कर्त्तव्य हो गया है।

रामविलास ने पिता से जाकर समाचार कहा। रामावतार ने सुना और उनका शरीर क्रोध से जल उठा।

कल रामाधीन के बटवारे के प्रस्ताव को उन्होंने केवल दोअर्थी 'हाँ' कहकर स्थगित कर दिया था। बीच के समय मे उन्होंने इस समस्या पर खूब सोचा-विचारा है और इस निश्चय पर पहुँचे हैं कि अपनी ओर से वे

अभी इस चर्चा को नहीं उठायेंगे। यदि रामाधीन उसे चलाये तो भी वे उसे टालने का प्रयत्न करेंगे। पर जब उन्होंने वैंजती के अनशन का समाचार सुना, और उसका कारण ज्ञात हुआ तो वे रामाधीन पर क्रुद्ध हो गये।

सच है कि रामाधीन बड़ा है, और रामसरन सबसे छोटा है। गाली-गुफ्ता देने का, मारने-पीटने का अधिकार जैसा सब बड़ों को होता है वैसा उसे भी है। पर उनका रामसरन सोने का है, मिट्टी का रामाधीन उसकी समानता क्या करेगा ?

वे तत्क्षण भीतर गये। रामविलास से दीपक मँगाया।

भूमिका देख सहदेई घबराई।

वैंजंती, क्या हो रहा है, अनुमान कर गई। इससे पहले कि ससुर प्रकाश-सहित उसकी कोठरी में प्रवेश करें, वह उठकर बैठ गई, वस्त्र ठीक कर लिये। उसे सफलता प्राप्त हुई थी।

ससुर ने द्वार पर से कहा—"बिटिया उठो, खाना खाओ।"

वैंजंती ने उत्तर न दिया। वह बैठी रही। ससुर ने फिर कहा—"बिटिया, उठो।"

वैंजंती ने उठने का प्रयत्न किया। पर उसे दीवार का सहारा लेना पड़ा।

रामविलास ने पुकारा—"हरिसुन्दर।"

और किसोरी निकट आ खड़ी हो गई। देखा और फिर सब समझ गई।

उसने वैंजंती को सँभाला, कोठरी से बाहर निकाल लाई।

रामावतार ने गाली का प्रयोग करते हुए कहा कि उन लोगों ने बिटिया की यह दशा कर दी है!

वे कुछ क्षण शान्त रहे। भावनाएँ उनके हृदय मे घुमड़ती रही और फिर एकाएक क्रोध के रूप में भड़क उठी।

उन्हें लगा कि रामाधीन का निर्वाह परिवार के साथ इस प्रकार कठिन है। वह स्वयं भी पृथक होना चाहता है, अब वे रोकेंगे नही। उसे आज, अभी, इसी समय, हिस्सा बाँट देंगे। वह परिवार मे रहने के नितान्त अयोग्य है।

वे वैजती को चौके मे लिवा ले गये। सहदेई सन्न ! जो बालक जग रहे थे, वे तटस्थ आशंकित इस दृश्य को देख रहे थे।

ससुर ने सहदेई से कहा—"बहू के लिए भोजन परस।"

सहदेई को परसना पडा। पर उसे इस क्रिया मे हार्दिक कष्ट हो रहा था। जिस समय वह कलछी से दाल थाली मे डाल रही थी तो भावना थी कि यह दाल वैजंती के लिए विष हो जाती तो ...।

सहदेई ने भोजन परस दिया और जेठ की आज्ञानुसार वैजंती को भोजन के लिए बैठना पड़ा।

अपने पर ससुर की इतनी ममता देख वैजंती विभोर हो गई। पति का अभाव कुछ क्षणो के लिए भूल सा गया। इस प्रसन्नता से ही उसका पेट जैसे भर गया।

सहदेई के मन मे उठा, कल की छोकरी और कितना तिरिया चरित्तर आता है। ससुर को कैसा बस मे कर लिया !

वैजंती से खाया न गया। दो कौर मुख से लगा वह रुक गई। दाल मे आँसू गिर पडे। पास बैठी किसोरी ने कहा—"वैजंती खा न !"

"खाया नही जाता।"

"तो फिर....।"

"खा लूँगी। जी सुस्थ हो जाय तो।" वह थाली पर से उठ गई। मर्द चले गये थे।

इतना भोजन छूटते देख सहदेई से न रहा गया। अपनी पराजय का बदला लेने का सवसर उसने न जाने दिया।

बोली—"अब वह जो इतना छोड़ गई है, तो कौन उसका बाप खायेगा। छूना ही था तो इतना क्यों परसवाया ? जिसका पसीना बहता है उसे तो दुखेगा ही।"

वैजंती को जेठानी की इस झुंझलाहट मे आनन्द प्राप्त हुआ।

रामावतार ने रामविलास से कहा कि वह अभी खलिहान चलेगा। उन्होने निश्चय कर लिया था कि रामाधीन अलग होगा और अभी होगा।

पित्रा पुत्र खलिहान पहुँचे। रामाधीन अँधेरे मे लेटा था। सेवक नारियल गुडगुडा रहा था। दोनों के मन मे एक ही बात थी; हरिनाथ आज भी एक भार गेहूँ ले जाने आयेगा।

सेवक सोच रहा था कि क्या रामाधीन कल की भाँति उसे आज भी निर्विरोध ले जाने देगा? यदि हाँ तो रामाधीन का निर्वाह गाँव मे कैसे होगा?

रामाधीन के मन मे था कि हरिनाथ के साथ कैसा व्यवहार करे?

कल उसने हरिनाथ के अत्याचार का विरोध नहीं किया। उसका कथन भी उसने निर्विरोध स्वीकार किया। आज क्या वह उसका विरोध कर सकेगा? कौन कह सकता है कि कुछ नवीन बहाना बनाकर वह परसों फिर न आ उपस्थित होगा।

क्या इस प्रकार उसके परिश्रम की कमाई इस पटवारी के साले और कारिन्दे के बहनोई के पेट मे चली जायगी?

वह अपनी समस्त नैतिक शक्ति को एकत्र करता और पाता कि इतनी पराजय स्वीकार करने के पश्चात् हरिनाथ से लोहा लेने की सामर्थ्य उसमे नहीं रह गई है।

रामाधीन इस प्रकार के दु खद विचारों मे व्यस्त था कि पिता का कण्ठ-स्वर उसे सुनाई पड़ा। सूखते खेत को जैसे पानी मिल गया। वह अब उन्हें किसी प्रकार रोक रक्खेगा, जिससे हरिनाथ का सामना किया जा सके।

उसकी आत्मा प्रफुल्ल हो गई। उसे लगा, देवता प्रसन्न है, तभी अयाचित सहायता उन्होंने भेज दी है।

पर दूसरे ही क्षण उसकी यह प्रसन्नता आशंका मे परिवर्त्तित हो गई।

रामावतार का क्रोध, जो भीतर ही भीतर घुमड़ रहा था, रामाधीन के प्रति भयानक विस्फोट के साथ उमड़ पड़ा। गाली देते हुए उन्होने कहा कि वे उसे अब अपने घर में नहीं रखना चाहते। वह अलग हो जाय, अभी अलग हो जाय। उनकी आँखो से ओझल हो जाय।

उन्होंने सूचना दी कि वे सब का चार भाग करेंगे। तीनों पुत्रों को

एक-एक देंगे और स्वय एक रक्खेंगे। उनका भाग उनकी मृत्यु के बाद पुत्रों मे बँट जायगा। अभी रामाधीन को कुल का चौथाई मिलेगा।

रामाधीन बुत बना सब सुनता रहा। वह सन्न हो गया। हरिनाथ को विरोधी बना वह अकेला उसके तलवे चूम कर ही रह सकता है।

पिता ने जो कहा उसमे उसे घोर आपत्ति थी। पर कुछ नहीं बोला—
"दादा....!"

रामावतार क्रुद्ध थे। बोले—"मेरी आँखों के सामने से चला जा। तुझे और तेरी बहू को रामसरन से जलन है। वह मेरे लिए जेल गया है। उसकी बहू को दो दिन से खाने को नहीं दिया। चाण्डाल कहीं के। जा अभी चला जा।"

रामाधीन में साहस न था कि पिता की आज्ञा का विरोध करे। और उस समय उसे वहाँ से चले जाने में एक सन्तोष भी था। वह यह कि उसका हरिनाथ से सामना न होगा।

रामावतार ने सेवक से कहा—"सेवक भई, रामविलास के साथ आज कुछ अधिक समय तक खलिहान पर रह जाना। कल से ठीक प्रबन्ध कर लेंगे।"

खलिहान से चले जाने पर रामाधीन को हरिनाथ से भेंट की आशंका न रही और उसका समस्त ध्यान पिता के वाक्यों में भरे भविष्य पर जा लगा।

पिता के इतने क्रोध का कारण वैजंती का दो दिन तक भूखा रहना है। गाँव मे भूखा रहना कोई महत्वपूर्ण बात नहीं; उसका अन्त तिल-तिल करके और भी महत्वहीन मृत्यु से हो सकता है, परन्तु जब उस भूखे रहने से इतना महत् कार्य और प्रभाव उत्पन्न हो जाय, तो वह वास्तव में महत्व-पूर्ण है।

रामाधीन ने सोचा, न वैजंती भूखी रहती और न यहाँ तक बात पहुँचती। वह उस समय पृथक किया गया है जब कि पृथक होने की उसकी इच्छा बिलकुल न थी।

उसके भूखे रहने का कारण सहदेई है। वह इस दुर्घटना का उत्तर-

दायित्व दूसरे पर डालना चाहता था। उसके लिए सहदेई उपयुक्त पात्र मिल गई और वह सहदेई पर क्रुद्ध होता चला गया।

घर पहुँच कर उसने सबसे पहला कार्य जो किया वह चौका समेटती सहदेई को वहाँ से घसीटना और बीच आँगन मे ला अँधेरे मे उसे पीटना था।

किसोरी से कहा—"बहू, तू चौका समेट ले।"

सहदेई उस रात रोती सोई।

बटवारे की बात जानकर उसने कहा कि यह तो वह चाहती ही थी। अच्छा हुआ अलग कर दिया और इस प्रसन्नता मे वह अपनी मार भूल गई।

इन वाक्यों के निकलते ही फिर एक थप्पड उसके लगा और गालियो का फव्वारा रामाधीन के मुख से छूट पडा। वह स्तम्भित रह गई।

उसका पति अभी कल तक अलग होने का प्रयत्न कर रहा था; आज जब उसके परिश्रम से वह अलग कर दिया गया है तो इतना उत्तेजित, दुखित और घबराया क्यो है ?

बच्चे जगे। रोये, पिटे और पुन. सो गये।

उनके माता-पिता अँधेरे मे एक दूसरे को समझने की चेष्टा करते रहे। पर जो अन्धकार बाहर उन्हे एक दूसरे को देखने से रोक रहा था वही भीतर भी उनके प्रयत्न विफल कर रहा था।

१०

रामाधीन को घर भेज, रामविलास को खलिहान मे छोड रामावतार वहाँ से लौट पड़े। वे वहाँ रह न सके।

लौटे घर की ओर नही। उस अँधेरी रात में वे और दूर खेतो की ओर निकल गये। उनके भीतर एक तूफान उठ रहा था, जो उन्हे निरन्तर चले जाने को बाध्य कर रहा था।

कई मील इधर-उधर निरुद्देश घूमने के पश्चात् उन्हे लगा कि कुछ थकन और श्रान्ति उन पर आ रही है।

एक गिरे वृक्ष के तने पर वे बैठ गये, लाठी अपने निकट रख ली और फिर दोनों हाथों से सिर थाम लिया। दो क्षण के लिए उनमें भीतर बाहर अन्धकार छा गया। सिर भारी-भारी हुआ, हृदय भरा, गले मे अटकन पैदा हुई। रोने की प्रवृत्ति, इच्छा, हुई और फिर टपाटप आँसू उनके नयनों से झरने लगे।

रामावतार उस बालक के समान थे, जो झुंझला कर अपने प्यारे खिलौने तोड़ डालता है। और फिर क्या, कैसे हो गया है? यह समझने में असमर्थ होकर रोने बैठ जाता है। वह पिता था, जिसने अपने हाथों से अपने परिवार का खण्ड-खण्ड कर दिया था। वह मनुष्य था जिसने नशे मे अपना हाथ काट कर फेक दिया था और जो अब विह्वल हो गया था।

वह रोते रहे। उनके चारो ओर रात्रि का अन्धकार घुमड़-घुमड़कर अपनी रहस्यमयी वाणी के करुण स्पर्श से उनके शरीर और आत्मा को सिहरा रहा था।

रात धीरे-धीरे बढी। उसमे नमी आने लगी। रामावतार वहाँ बैठे अन्धकार मे शून्य की ओर देखते रहे। इस क्रिया मे उनके आँसू न जाने कब थम गये।

उन्हे लगा कि उनके यहाँ किसी प्रिय की मृत्यु हो गई है। यह भावना धीरे-धीरे शरीर धारण करने लगी। यहाँ तक कि वे इससे भयभीत हो गये।

इन विपत्ति के दिनों मे ऐसी धारणा अशुभ है। और सबसे अधिक विपत्ति मे है रामसरन।

रामसरन के अनिष्ट का ध्यान आते ही वे सजग हो गये। अपनी दुर्बलता को बलात् दूर कर दिया। उठे, लाठी सँभाली, चारों ओर देखा। समय पर्याप्त हो गया था।

वे जगे और उठकर घर की ओर चल दिये।

२

१

हरिनाथ का गाँव से प्राचीन सम्बन्ध न था । वह पटवारी भगीरथलाल की पत्नी के साथ सात वर्ष की अवस्था मे गाँव मे आया था । वही खेला कूदा और जो कुछ विधाता ने लिख दिया था उसी के अनुसार, न तनिक कम न अधिक, पढ-लिख गया ।

उसकी बहिन का विचार था कि हरिनाथ पढ़-लिखकर कम से कम डिप्टी साहब का मुहर्रिर बनेगा । पर जब उसने पढने के स्थान पर पाठशाला से पुस्तकें चुराने मे अधिक रुचि दिखाई, तो शिक्षक और बहनोई दोनों सतर्क हो गये ।

बहिन ने बहुतेरा समझाया; बहनोई ने उससे भी अधिक भय दिखाया। ग्यारह वर्ष के हरिनाथ ने भय का उत्तर भय से दिया । उसने बहिन से स्पष्ट कह दिया कि यदि उसके प्रति वे लोग अपने व्यवहार मे परिवर्त्तन नहीं करेंगे तो वह उन्हे छोड़कर भाग जाने को बाध्य होगा ।

बहिन रामकली पिता के अकेले कुलदीपक को इस प्रकार नयनों के ओटे न होने देना चाहती थी । वे दोनों एक विशाल, और कुछ अर्थो में समृद्ध, परिवार के अवशेष थे ।

परिवार की परम्परा का का संचालन अब हरिनाथ के हाथ मे था और रामकली पिता के परिवार का अन्त नही देखना चाहती थी । जब हरिनाथ ने पाठशाला में रुचि न दिखाई तो बहिन ने उसके लिए ससुराल की व्यवस्था की । और उनके बारह बरस के भाई के लिए चौदह बरस की भाभी आ गई । छोटे भाई के लिए बड़ी भाभी की व्यवस्था जान-बूझ कर की गई । बहिन

ने सोचा था कि भाभी ऐसी होनी चाहिए जो उसके प्रखर भाई का शासन कर सके, उसे संयत रख सके। जब उन्होंने चुनाव किया, अथवा जब उन्होंने समझा कि उन्होंने चुनाव किया, तो इस बात का ध्यान रक्खा कि बहू सुन्दर ही नहीं स्वस्थ भी हो; और हरिनाथ की बहू चम्पा सुन्दर से अधिक स्वस्थ थी।

पिता पटवारी थे, भाई कानिस्टिबिल और चम्पा स्वयं, कहा जा सकता है, माँ होने से पहिले ही माँ-जैसी लगती थी। शरीर से स्थूल, मुद्रा से गम्भीर, वर्ण मे चम्पा से अधिक नील कमल के निकट।

अब हरिनाथ तीस के आस-पास था। परमात्मा की दया से, उसके बहिन-बहनोई के आशीष से, उसके परिश्रम और पत्नी के संरक्षण से, उनके अब चार पुत्रियाँ थीं। रामकली को बड़ी इच्छा थी कि हरिनाथ के एक पुत्र हो जाता। पितृ-वंश आगे चलने का कम से कम बहाना ही मिल जाता। पर एक कन्या और होकर मर गई। पुत्र नहीं हुआ।

चम्पा पुत्र की माता होना चाहती थी। पर रामकली समझती थी कि उसे चिढ़ाने के लिए पुत्र को पुत्री मे परिवर्त्तित कर लेती है। इस क्रिया के कारण वह भाभी से असन्तुष्ट थी और क्रुद्ध हो चली थी। मन ही मन न जाने क्या-क्या योजनाएँ बनाती पर जो प्रकट होता था वह था तीव्र असन्तोष।

भाई की इस गृहस्थ-समस्या को लेकर पटवारी-पत्नी अपनी चिन्ता गूँथती रहती थीं। परिवार के अन्य सदस्य इस ओर जैसे ध्यान ही न देते थे और इसीलिए उन्हे अच्छे नहीं लगते थे। उनके अपने पुत्र थे; पर एक भाँजे का अभाव उन्हें बुरी प्रकार खल रहा था।

हरिनाथ को इसकी चिन्ता न थी। उसे केवल एक बात की चिन्ता कभी-कभी हो जाती थी और वह यह थी कि उसकी बहिन बहुत चिन्तित रहती है। बहिन जब तक है, उसे अन्य चिन्ता व्याप नहीं सकती; वह व्यापने नहीं देती। परन्तु उसकी मृत्यु के पश्चात् बहनोई की कृपा भी उन पर से उठ जायगी, इस पर उसे पूर्ण विश्वास है।

बहिन ने उसे मकान और दो बीघा खेत दे दिया है। नये कारिन्दा ने और खेतो का सुभीता भी कर दिया है। हरिनाथ गाँव के उन लोगो मे से है जिनका आय-व्यय का लेखा हानि मे नहीं रहता। इसके कई कारण हैं; प्रथम यह है कि सब दारू-प्रेमी समझते है कि गाँव मे दारू की दुकान न होने पर भी वह हरिनाथ के यहाँ प्राप्य है। कारिन्दा साहब, थानेदार साहब और इनके अतिरिक्त और किसी साहब को वह इस विषय मे अनुग्रहीत कर सकता है।

हरिनाथ ने जीवन मे निर्द्वन्द्व रहना सीखा है। उसकी चिन्ता केवल अपने तक है। वह सब से अधिक ऐसा लगता है कि, अपने को प्यार करता है। इसी मे उसकी परम स्वतन्त्रता का मूल जटिलता से सम्मिलित है।

हरिनाथ का खलिहान रामाधीन से खलिहान से आध मील अमराई की दूसरी ओर था। दोनों के बीच सीधा मार्ग अमराई मे होकर था। इस मार्ग के दोनों ओर दो-तीन खलिहान और थे पर इतनी दूर कि झुटपुटे मे वहाँ से मनुष्य नहीं पहिचाना जा सकता था।

हरिनाथ का खलिहान केवल उसका खलिहान न था। वह उसकी बहिन का, बहिन के जेठ का और जेठ के सब से छोटे भाई का भी खलिहान था। यदि हरिनाथ का खलिहान किसी रहस्य-मय रीति से वृद्धि को प्राप्त होता है, तो इसमे सभी को प्रसन्नता थी। क्योंकि उतना ही उनपर भार कम होता जाता था।

हरिनाथ तीसरे पहर अपने खलिहान में बैठे थे। सामने सिल पर भंग रक्खी थी। रामधन कहार पानी लेने गया था। रज्जू गडरिया एक छोटी झोंपड़ी के लिए छप्पर बना रहा था। हरिलाल चमार चार बैलों को गेहूँ के ऊपर एक गड़े डंडे के चारों ओर हाँक रहा था। उसका लड़का निरधुन फैलते गेहूँ-तृणों को समेट-समेट बैलों के खुरों के नीचे डाल रहा था और उसकी चमारी ज्वर से काँपती एक ढेर की आड़ मे पडी बैलों के ही समान सतृष्ण नयनों से गेहूँ के दानों को देख रही थी।

फसल के इन्ही दिनों मे चुराकर, सिल्ले बिनकर, वह वर्ष मे दो-चार दिन गेहूँ की रोटी खा सकती थी। भगवान ने इन्ही दिनों उसे बीमार डाल दिया।

पशु वर्ष के अन्य महीनो मे गेहूँ का भूसा खा सकते है; पर चमार परिवार को गेहूँ का कोई भाग भी स्पर्श करने को न मिलेगा। पैसे के रूप मे यदि मज़दूरी पाना सम्भव होता तो चाहे वे गेहूँ खरीद कर खाते चाहे मटर। पर मज़दूरी का रूप पाने वाले की इच्छा पर नही; देनेवाले की इच्छा पर है।

देनेवालो के पास इतने सिक्के नही कि वे उन्हे अपनी लोलुपता से बचा कर चमार को दे सके। देश मे अब भी सिक्के अभी इतने व्यापक नही हुए है कि साधारण ग्रामीण उन्हे अपने प्रत्येक कार्य मे प्रयोग कर सके।

हरिनाथ स्वच्छ और महीन धोती पहिने था और शरीर मे अंगौछा लपेटे था। सूर्य की किरणें पुरानी झोपडी से टकरा, उसके शरीर से बाल-बाल बच निकली जा रही थी मानों वे भी इस प्रतापी पुरुष के प्रताप से भयभीत हों।

भंग घोटने मे हरिनाथ के परम सहयोगी थे छदम्मी साहु। वे थे कत्थावर्णी; उनके ओष्ठद्वय निरन्तर ताम्बूल-सेवन से रक्तवर्ण हुए रहते थे। उनके शरीर मे सब से प्रमुख स्थान उनके घटाकार उदर को प्राप्त था। साहु ने सौभाग्य की अथक प्रतीक्षा की थी। जो दूसरो के प्राय: दुर्भाग्यपूर्ण समय-श्रोत में से बूंद बूंद उनकी ओर रिसा था। उसे बटोरने मे वे प्रयत्नशील रहे थे।

वे गाँव के ही नहीं, पटवारी के, कारिन्दे के, थानेदार के और तो और राजा के कृपापात्र थे।

चार वर्ष पहले जब ताल्लुकेदार राजा साहब गाँव पधारे थे तो अकेले छदम्मी साहु को ही गाँव मे उनके सम्मुख बैठने को मोढ़ा दिया गया था उन्होंने ही उनसे हाथ मिलाने का सौभाग्य प्राप्त किया था। शेष प्रजा को

अन्नदाता अथवा भूमिदाता को दूर से ही जुहार-प्रणाम करके सन्तोष करना पड़ा था।

दूसरे सहयोगी थे ठाकुर शिवनन्दन सिंह। वे वृद्ध होते हुए भी क्षत्रिय थे। पन्द्रह वर्ष कानस्टिबिल रहने के पश्चात् वे कुछ धन ले गाँव लौट आये थे। कहते है कि बड़े साहब से झगडा हो जाने के कारण, उन्होंने नौकरी त्याग-पत्र दे दिया है। यद्यपि कुछ लोग ऐसे भी है जो इस कथन को सन्देह की दृष्टि से देखते है। वे पुराने भंग-भक्त है। पुलिस बारक मे, जहाँ अन्य क्लब और समितियाँ थी, वहाँ उनके अथक परिश्रम से भग भक्त असोसिएशन की स्थापना हुई थी। स्वयं डिपटी सुपरिण्टेण्डेण्ट साहब एक बार उसके अधिवेशन मे सम्मिलित हुए थे। ठाकुर शिवनन्दन किसी समय कसरती पहलवान थे। पर अब चुचके जा रहे थे।

इन तीनों के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति समयानुकूल होने पर ही इस यज्ञ मे सम्मिलित होते थे। स्थायी सदस्य यही तीनो थे। समिति के कोषाध्यक्ष थे छदम्मी साहु। आगे बढ़कर व्यय करते और कहना नही होगा कि चन्दा भी वे अकेले ही देते थे।

हरिनाथ अपनी कल की विजय पर प्रसन्न था। प्रसन्न था कि दो पहर रात जाने की प्रतीक्षा है और एक भार गेहूँ उसके यहाँ भाग्य के झोके से आ पडेगा। यह प्रसन्नता पक्की थी। उसने नीव ऐसी जमा दी कि हिलेगी नहीं।

सेवक चमार को विश्वास हो गया कि हाँ, हरिनाथ उधार दिया हुआ ही ले रहा है। और रामाधीन! कितना डरपोक है वह!

वह मुस्कराया। छदम्मी साहु को अपने निकट आसन देते हुए और ठाकुर के लिए बैठे-बैठे खाट बिछाकर अपने निकट खीचते हुए उसने सिल की ओर देखा। यह भंग जो बिना कुछ व्यय किये हुए चली आती है।

रामधन ने चार गोले बनाये। सबसे बडा ठाकुर के लिए और सबसे छोटा अपने लिए। सिल की धोवन हरिलाल और रज्जू मे बँट गई।

हरिनाथ भंग के विषय मे कंजूसी नहीं बरतता था। जो उपस्थित होते

सभी को भाग मिलता था। हरिनाथ का प्रसाद सहर्ष स्वीकारा जाता था।

भग पीकर वे मिल बैठे और बातों का शिलसिला जम चला।

"छदम्मी साहु ने जितनी भंग पुण्य की है उससे उन्हे स्वर्ग मे बड़ी सरलता से भंग का बगीचा प्राप्त हो सकता है।" निकाले कान्सटिबिल और अब कारिन्दे के नीचे चार रुपये की सिपहगीरी के अभिलाषी ठाकुर बोले।

"भला ठाकुर इसमे भी कोई बात कहने की है। छदम्मी साहु के प्रताप से ही गॉव मे बड़ो की प्रतिष्ठा बची हुई है।"

साहु को अपनी प्रशंसा सुनने का अभ्यास था। जब किसी को रुपये की आवश्यकता होती तो वह उनके पास याचनार्थ आता। वे प्रथम स्पष्ट कह देते कि जो जमा-पूँजी बाल-बच्चों का पेट काटकर उन्होंने लोगों के लाभार्थ एकत्र की थी वह समाप्त हो गई है। जो लेता है लौटाने का नाम नही लेता। बीस रुपये बीस वर्ष से अदा नही हुए। वे याचक की सहायता करने मे असमर्थ है।

पर छदम्मी साहु को पिघलाने के उपाय थे। जिन्हें रुपयों की आवश्यकता होती थी उन्हे वे तत्क्षण और स्वयं ज्ञात हो जाते थे।

वे उनके सम्मुख रुवासे हो जाते, गिड़गिड़ाते, अपनी प्रतिष्ठा का सहायक-संरक्षक उन्हे बनाते और फिर हाथ उनकी ठोड़ी मे देते-देते पैरों में टोपी दे देते। इस अनुष्ठान से लक्ष्मी उनके कोष मे द्रवित हो जाती थीं और गॉव के एक परिवार की मान-रक्षा हो जाती थी।

ये प्रशंसात्मक वाक्य उनके लिए नवीन नही थे। पर अभ्यस्त हो जाने पर भी उनका आनन्द उनके लिए प्राचीन नही हुआ था। उनके अस्तित्व को सुखी बनाये रखने के लिए वह आवश्यक हो गया था। चाटुकारी उनके लिए खाद थी। वे उसीमे पनप और फल-फूल सकते थे।

हरिनाथ को साहु की प्रशसा इतनी न भाती थी। उसका विचार था कि पैसा कमाता कोई और है, रखता कोई और है, तथा व्यय होता है किसी अन्य के भाग्य से।

जितने नर-नारी वहाँ उपस्थित है उन सब मे अधिक भाग्यवान वह हैं ।

परिश्रम करने पर यदि सुख प्राप्त होता है तो वह सुख परिश्रम-द्वारा जीता जाता हैं । भाग्य का उसमें विशेष हाथ नही होता, भाग्यवान तो वह होता है जो बिना परिश्रम किये दूसरे के धन पर सुख-भोग करता है ।

इस परिभाषानुसार कदाचित् वही सब से अधिक मात्रा मे भाग्य का स्वामी था । उसे छदम्मी साहु की प्रशंसा यदि बुरी लगी तो यह स्वाभाविक ही था ।

ऐसे समय मे जो अस्त्र प्रयोग किया जाना था वह उसे ज्ञात था । वह अस्त्र था कारिन्दा साहब की चर्चा । कारिन्दे वैसे घर मे चाहे कुछ भी हो, पर जब तक कारिन्दे है और उस गाँव मे है, तब तक अफसर है । छदम्मी साहु कितने ही धनाढ्य क्यो न हों, उनसे हेठे हैं ।

कारिन्दे साहब के साथ अपने सम्बन्ध की चर्चा कर वह महत्त्व को अपनी ओर आकर्षित करने मे सफल होता था ।

बोला—"यह जो अपने कारिन्दा है, इन्ही के भतीजे के मामा की बारात में मै गया था बारात क्या राजाओं की बारात थी । समधी कलक्टरी में सदर बाबू थे । उन्होंने जैसा भंग का प्रबन्ध किया वैसा मैंने अपने जीवन में कहीं देखा नही ।

सब का ध्यान इस राजा की बारात की ओर आकर्षित हुआ । भंग-प्रबन्ध का वर्णन सुनने के लिए सब उत्सुक हो गये ।

ठाकुर इसलिए कि अपने भंग-भक्त-असोसिएशन के प्राचीन विशेष अधिवेशनों से उसकी तुलना कर सकें । और छदम्मी साहु इसलिए कि अभी चाहे न हो कभी तो उनके बेटा होगा ही और उन्हे उसका विवाह करना होगा । आज राजा के यहाँ का जो वर्णन सुनेंगे तभी से उसकी नकल की तैयारी में लगेंगे जिससे हरिनाथ बुढ़ापे में सुना सके कि भंग का प्रबन्ध या तो देखा था राजा के यहाँ या फिर छदम्मी साहु के यहाँ ।

"भंग से ड्योढ़ा बादाम, रबड़ी-सा दूध और सुन्दर बूटेदार काँच के गिलासों मे । ऐसा कि पीते ही जाइए ।"

छदम्मी साहु ने सोचा इसमें क्या है ? वे भंग से दूना बादाम देंगे और बादाम का भाव उनके सम्मुख आ गया।

"हम जो भंग खाते हैं यह तो लकीर पीटना है। जैसा मयस्सर हो जाय उसी में परमात्मा को धन्यवाद देते हैं।"

हरिनाथ ने कभी मानव को धन्यवाद देना नहीं सीखा। उसने अपने प्रत्येक लाभ के लिए कृतज्ञता प्रकट की केवल परम पिता के प्रति; जिनके प्रताप से वह है और सब कोई है। जो मूल को सींचता है उसे पात-पात सींचने की आवश्यकता क्यों होनी चाहिए।

उसने आशा की थी कि छदम्मी साहु अपनी नित्य प्रति की भंगचर्या की आलोचना सुनकर कुछ कहेंगे, अपने को नीचा समझेंगे। पर उसने अनुभव किया कि इसका उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा है।

पटवारी का साला और कारिन्दे का बहनोई छदम्मी साहु का ध्यान उनकी क्षुद्रता की ओर आकर्षित न कर सके, यह उसकी असफलता, उसका अपमान है। असहनीय है।

अब उसने तेज प्रहार करने की सोची। बोला—"समय था कि इस प्रकार की भंग की ओर मैं आँख उठाकर भी नहीं देखता था। चमारों हरवाहों को बाँट देता था।" और फिर उसने छदम्मी साहु की ओर देखा।

उसे सफलता प्राप्त हुई थी। साहु के कत्थई चेहरे पर यद्यपि लालिमा प्रत्यक्ष नहीं हो पाई थी तथापि अपना साधारण भाव वे खो बैठे थे और सोचने को बाध्य हुए थे।

उनके भीतर से किसी ने कहा—"अच्छा ? भीख माँगकर, चोरी कर, पेट भरते हो और ऐसी भंग तुम बाँट देते थे ?" अन्दर से विद्रोही हो उठे। पर शान्त बैठे रहे।

ठाकुर इस वार्तालाप पर चौंके। वे दोनों में से किसी को अप्रसन्न न करना चाहते थे, इससे विषय बदलने के लिए पूछा।

"क्यों हरिनाथ, तुम्हारे सदर मुहर्रिर के यहाँ भंग के अतिरिक्त और कोई तेज़ चीज नहीं थी क्या ?"

"थी क्यों नही ठाकुर ।" अपने सम्बन्धियों की प्रशंसा हरिनाथ हृदय खोलकर किया करता था। इस विषय में वह साधारण ग्रामीण से भिन्न था।

गाँव में लोग महत्व प्राप्त करना चाहते हैं पर अपने बल के आधार पर या अपनी महत्ता के कारण नहीं, वरन् दूसरों की निर्बलता के कारण। अपने को सबल तथा महत् बनाने की चेष्टा का स्थान दूसरे को दुर्बल और ओछा दिखाने की चेष्टा ले लेती है।

इसीलिए बाप बेटे की बुराई, बेटे बाप की बुराई, भाई भाई की बुराई करते रहते हैं। सद्वाक्यों और कार्यों की कमी और असद्विचारों की अधिकता हो गई है।

गाँव मे मानव-प्रतिभा और शक्ति के विकास के लिए विस्तृत क्षेत्र नही है। वह वहाँ तालाबों के जल की भाँति सीमित, संकीर्ण, बँधी रह कर सड गई है। उसमें से जब निकलती है तो दुर्गन्ध ही निकलती है।

यदि किसी प्रकार उस पर से यह पहाड़-सा भारी ढक्कन हटा दिया जाय तो प्रथम दुर्गन्ध के उफान के पश्चात् जो निकलेगा वह शिव और स्वस्थ होगा।

हरिनाथ का अपना महत्त्व सम्बन्धियों के महत्त्व पर आश्रित था इसलिए वह इस नियम का अपवाद था।

"भग के साथ 'रम' थी और पीने के लिए ...। जितने सुन्दर गिलास मैंने वहाँ देखे कभी देखने से नहीं आये।"

साहु ने मन मे कहा—"तूने देखा ही क्या है ?"

रामधन ने हरिनाथ का महत्त्व बढ़ाते हुए पूछा—"कैसे गिलास थे हरिनाथ दादा ?"

हरिनाथ इस प्रश्न से प्रसन्न हो गया।

"क्या बताऊँ रामधन, बस देखते ही बनता था। गिलास थे कि जैसे देवताओं ने बनाये हों। रंग-बिरंगे बेल-बूटो से सजे। ये बूटे भी शीशे के अन्दर। बाहर-भीतर काँच और बूटे उसके भीतर बन्द !"

प्रशंसा की तीव्रता से वह आगे न बोल सका। प्रभाव सभी पर पडा। काँच के भीतर बेल-बूटे बन्द !

"बडे मँहगे रहे होंगे ?" साहु की रुचि जागी। उन्हे लगा कि कम से कम एक ऐसा गिलास उनके यहाँ अवश्य होना चाहिए।

"दाम तो मैने पूछे नही। पूछने की सुधि ही किसे थी। पर पाँच सात रुपये से कम क्या रहे होंगे। सुना था कि दिल्ली मे मँगाये है। सोचा दिल्ली राजधानी है। ऐसा भाग्य कहाँ कि उसके दर्शन करे। इससे गिलास हाथ मे लेकर ही मैने अपने दिल्ली मे समझा।"

हरिनाथ का महत्त्व बढ गया। साहु को लगा कि हरिनाथ के अनुभव मे कुछ है जो उनके पास नही है। ठाकुर शिवनन्दन भी आश्चर्य कर रहे थे कि पन्द्रह वर्ष की कान्सटिबिली मे एक बार भी वैसा गिलास उन्हे देखने को न मिला। पर सरलता से हार मानने वाले वे न थे। बोले—"एक बार हमारे सरकारी वकील साहब ने कलक्टर साहब को पार्टी दी थी। पचास से ऊपर आला अफसर थे। मैंने अपने हाथो से दर्जनो गिलास उठाकर रक्खे थे। काँच के भीतर ऐसा सुनहरा काम कि देखते ही बनता था। मैंने वैसे काहे को ह्विस्की चखी होती। वह तो उस दिन खानसामा से मित्रता हो गई। उसने एक पेग बढ़िया चितकबरी निकाल दी। जी खुश हो गया। उस दिन जैसी नीद मुझे कभी नही आई।"

हरिनाथ ने सोचा "ह्विस्की"। और वह केवल "रम" की चर्चा कर पाया है। पर अब ऊँचा चढ़ने की सम्भावना न थी। साहु को यह विषय विशेष रोचक न था। भंग से आगे का क्षेत्र उनके लिए अपरिचित था इसलिए वे सुनते रहे।

वकील की चर्चा जो बीच मे आ गई तो उन्हे अपने मुकदमे स्मरण आ गये। जो मनुष्य व्यापार या लेन-देन करता है, उसका एक पाँव कचहरी में होता है। जब कचहरियों की इतनी बहुतायत न थी तब मनुष्य इस जन्म मे दिया आगामी जन्म मे लेने के लिए छोड़ दिया करता था। फल होता था कि वह उसे यहाँ और वहाँ दोनों स्थानों में प्राप्त हो जाता

था। पर कचहरियों ने इस व्यवस्था मे विघ्न डाल दिया है। अब देनदार को यदि यहाँ प्राप्त नही होता तो परलोक मे भी प्राप्ति की विशेष सम्भावना नही रह जाती।

"धन तो वकील कमाते है।" ठाकुर ने सरकारी वकील का वैभव स्मरण करते हुए कहा।

"क्यों नही! योग्यता भी तो वैसी ही रखते है।" साहु बोले—"आदमी को फाँसी से उतार लाते है। जजों की आँखों मे धूल झोकना क्या साधारण काम है?"

"जज क्या यह तो यमराज को ठगना है।"

"रुपया उनके यहाँ नहीं तो क्या हमारे यहाँ बरसेगा जिन्हे दो बाते भी करनी नही आती।"

हरिनाथ ने अनुभव किया कि वह बाते तो खूब कर लेता है। कैसी भी झूठ बात हो सच्ची जँचा देता है। कम से कम श्रोता उसे सत्य स्वीकार कर लेते है! यदि वह केवल बी० ए०, एल-एल० बी० और होता तो आज वकील होता। और उसका भाग्य जो बिना बी० ए०, एल-एल० बी० हुए ही इतना तेज़ है उस समय पता नही उसे कहाँ पहुँचाता। धन उसके ऊपर मेंह-सा बरसता। नही पढ़ा, बुरा हुआ। पर न पढकर भी कौन-सा बुरा है। हजारों से अच्छा है।

"अपने नगर मे तो आज माथुर से बढ़कर कोई वकील नही। जिले मे उसकी धाक है। जब वह बोलता है तो हाकिम काँप उठते है।"

"एक बार तो जज साहब की कलम छूट गई।"

"दीना ठाकुर के लडके को कालेपानी से ऐसा बचा लाया कि सीधा घर।"

"दिमाग़ की करामात है।" ठाकुर ने कहा—"वे लोग घी-बादाम खाते हैं। उससे दिमाग़ बढ़ता है। परमात्मा जिसे देता है उसे दिमाग़ भी देता है।"

"तुम्हारे बहनोई के मामले का ...?" साहु ने पूछा—"यदि रामावतार

ने माथुर को कर लिया तो पुलिस को कठिनाई होगी।"

"है भी लडका कितना ढीठ। झिझका नही, छूटते ही एक झापड़ दिया तो।"

ठाकुर का स्वर हरिनाथ को न भाया। पर भौंहे सिकोडने के अतिरिक्त उसने और कुछ न किया।

"हाँ, कुछ तो सोचना चाहिए था। ज़मीदार के कारिन्दा है। आज चाहे तो गाँव से निकाल बाहर करें। पानी मे रह कर मगर से बैर।"

"आज नही तो किसी दिन इसका फल मिलता ही।"

"रामावतार का दिमाग आज कुछ चढ़ भी रहा है। तीन बेटे है। कमाऊ है; खर्च कुछ है नही, पैमा इकट्ठा हो रहा है। उसी की गर्मी है।"

"अब सब गर्मी निकल जायगी।" हरिनाथ ने सब टिप्पणियाँ सुन-कर कहा।

हरिलाल, जो अब तक बैल हाँक रहा था, एकाएक खडा हो गया। उसने कुछ सुना था, कुछ अपने पास से पूरा कर लिया। मुँहफट होने के लिए बदनाम था। अच्छी लगे या बुरी, मुँह पर स्पष्ट कह देता था। वह स्पष्ट कहता था कि यदि उसे कोई कुछ देता है तो मुफ्त नही देता। वह दिन भर हाड तोड़ता है तब कही आधा पेट भोजन पाता है।

बोला—"ठाकुर दादा, कारिन्दा साहब भी तो आदमी को आदमी नही समझते। गाली सदा ज़बान पर बनी रहती है। यदि एक पड़ गया तो क्या बुरा हुआ?"

हरिनाथ अपने चमार की इस स्पष्टवादिता पर चौंक पड़ा। चीखा—"क्यों रे चमार के, चुप नही होता? अभी कान पकड़ कर बाहर निकाल दूँगा।"

"साले बाबू, तुम बैठे रहो, तुम अभी कान पकड़ कर निकाल दोगे, यह हो सकता है। मैं चला जाऊँगा; पर अभी घण्टे भर मे तुम्हारी बहिन का सदेशा पहुँचेगा।"

हरिनाथ के मन मे तो आया कि हरिलाल को पकड़ कर पीटे और

इतना कि बस जान निकल न जाय पर उसे अपनी इस इच्छा पर संयम करना पड़ा।

हरिलाल के अस्वस्थ हो जाने पर उनके खलिहान का सब काम रुक जायगा। उसने सोचा कि इस सदिच्छा को वह कुछ समय के लिए स्थगित कर रक्खे यही सब के लिए और विशेषतया उसके लिए अच्छा है।

हरिलाल उसकी बहिन का खेती-बारी मे दाहिना हाथ है। रामकली उसके सब उपद्रव सहन कर सकती है, पर इसे सहन कर सकेगी इसमे उसे सन्देह है।

साहु, रामधन और ठाकुर ने हरिनाथ, हरिलाल के विरुद्ध असमर्थ हरिनाथ, की ओर देखा। हरिलाल पुनः बैलों को हाँकने लगा।

रामधन मे भी हरिलाल के वाक्यो ने बल-संचार किया। उसे भी कारिंदा के विरुद्ध शिकायत थी। बहुत दिनों से मन मे घुमड़ रही थी। वैसे उसकी इच्छा कुछ कहने की न थी। पर हरिलाल ने जब इतना कह दिया और किसीने कोई विरोध नहीं दिखाया, तो वह अपने को संयत न रख सका।

मुँह से निकल ही तो गया—"हरिलाल ठीक कहता है, उसने और भी कारिन्दे देखे हैं; उनकी सेवा की है, पर ऐसा बदमिज़ाज नहीं देखा।"

यहाँ रामधन से भारी भूल हो गई। हरिलाल के मूल्य ने उसकी रक्षा की। पर रामधन का उस तराजू पर विशेष मूल्य न था। इसलिए मुँह से वाक्य निकलते ही हरिनाथ ने उठकर एक थप्पड लगाया।

रामधन समझ न पाया। हरिलाल उससे भी अधिक कहकर शान से छाती फुलाकर काम करता रहा और उसे हरिनाथ ने तनिक सी बात पर पीट दिया।

रामधन तगड़ा था। यदि केवल भौतिक बल पर निर्णय होना होता तो वह हरिनाथ से दुर्बल न था। पर इसके अतिरिक्त अन्य तत्व भी इस विरोध में सम्मिलित थे।

ठाकुर और साहू कुछ बोल नही सके। रामधन ने अपना अँगौछा उठा लिया; लाठी सँभाल उठकर चल दिया।

सम्भावना थी कि साले और बहनोई दोनों इस विषय मे डाटे जायँगे।

रामधन स्वयं मे तो कुछ नही; पर उसकी स्त्री है जो थानेदार साहब के यहाँ काम करती है। नारी की सिफारिश, वह अपने उदाहरण से जानता है, कभी व्यर्थ नहीं जाती।

ठाकुर शिवनन्दन सिंह ठहरे रहे। उन्हे कारिन्दे की सिपहगिरी प्राप्त करनी थी। और इस विषय मे भावी स्वामी के दूरस्थ बहनोई की सेवा और चाटुकारी से लाभ ही हो सकता था।

साहु के चले जानेपर बोले—"आजकल ये शूद्र वहुत सिर चढ़ गये है। ताडना न दीजिए तो वश मे न आयें। अच्छा किया जो रामधन के एक लगा दिया। इस चमार के भी यदि एक लग जाता तो....।"

उनकी दृष्टि इन वाक्यों से हरिनाथ के मुख पर आने वाली प्रसन्नता की मुस्कान खोजने लगी।

हरिलाल ने ठाकुर की बात सुन ली। उसने काम छोड़ दिया और इस बार दोनो के सामने आकर खड़ा हो गया।

ज्वर से काँपती घरवाली चिल्लाई—"क्या हो गया है तुम्हे? बड़े आदमियों के मुँह लगते हो।"

हरिलाल ने कहा—"हाँ दादा, चमार पीटने के ही लिए तो है। अपना काम छोड़कर, आराम छोड़कर, हारी-बीमारी भुलाकर तुम्हारा काम करें और ऊपर से गाली खायँ, मारने की धमकी खायँ। हरिनाथ बाबू, ये हैं तुम्हारे बैल। कहो तो खोलकर बाँध दूँ। मेरे बस का यह काम नहीं। पिटना और मजदूरी करना है तो सड़क पर मदद लग रही है। भगवान सब को देता है। चल रे निरगुन।"

हरिनाथ भड़कने वाला था, पर पीछे सँभल गया। उसने ठाकुर की ओर देखा। ठाकुर को स्पष्ट हो गया कि उसने जो कहा हैं उससे हरिनाथ अप्रसन्न हुआ हैं, क्योंकि उसका प्रभाव हरिलाल पर बुरा पड़ा है। उनकी चाटुकारी हानिकारक सिद्ध हुई हैं।

हरिनाथ बोला—"जाओ भई, काम करो। ठाकुर ने कुछ कह दिया हं, पुलिस के आदमी है। मैंने कुछ कहा नही।"

इससे अधिक हरिलाल चाहता भी न था। वह पुन. अपने काम मे लगा। बैल हाँकते-हाँकते बोला—"ठाकुर नीच के भी जी है।"

दोनो ने सुन लिया। बोले नही।

ठाकुर ने कुछ स्वर नीचा करके कहा—"बाबू समय आ रहा है, जब इन लोगो का राज होगा। कायथ-छत्री हल जोतेंगे।"

हरिनाथ ने इस वाक्य पर भी कुछ ध्यान न दिया।

ठाकुर ने पूछा—"बीड़ी पियोगे, बाबू ?"

फिर दोनों ने पान छाप बीड़ी सुलगाई। ठाकुर को कुछ सन्तोष हुआ। कहीं न कहीं तो बात जमी ही। पूछा—"क्यो बाबू हमारी नौकरी के विषय में कारिन्दा साहब से कुछ बातचीत हुई थी ?"

"ठाकुर, क्या मै मित्रों की बात भूल जाने वाला हूँ! तुम्हारे विषय में लगातार तीन घण्टे तक बातचीत होती रही।"

ठाकुर ने अपने को महत्वपूर्ण अनुभव किया।

"कारिन्दा साहब कहते थे कि ठाकुर सिपहगिरी के योग्य नहीं हैं और मैं बराबर कहता रहा कि उनके समान योग्य मनुष्य इस काम के लिए आस-पास के गाँवों में नहीं है।"

"फैसला क्या हुआ ?" ठाकुर ने उत्सुकता से पूछा।

"कुछ नही मेरे निरन्तर कहने का भी उनपर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। हाँ, एक बात उन्होने स्वीकार कर ली है कि वे यदि ठाकुर को नहीं रख रहे है तो अभी किसी और को नही रक्खेंगे।" हरिनाथ झूठ पर झूठ कहता गया—"इस बीच मे यदि तुम कहो तो मैं खास कोशिश कर सकता हूँ।

उसने अर्थपूर्ण दृष्टि से ठाकुर की ओर देखा। ठाकुर बोले—"पान-तमाखू के लिए सोरह आना ले लेना, बाबू।" अपने पुलिस विभाग के ज्ञान और अनुभव का उन्होने प्रयोग किया।

हरिनाथ खिल उठा। बोला—"ठाकुर मैं कोशिश करूँगा पूरी। वैसे

रखना न रखना कारिन्दा साहब के हाथ में है। हाँ, आशा बीस बिस्वे है कि रक्खे तुम्ही जाओगे।"

"बाबू यह काम कर दो तो तुम्हारे गुन गाऊँगा। आजकल बड़ी तंगी है।"

"समय बड़ा नाजुक आ रहा है। न धन में कन है न जन में कन है। जैसे निभ जाय वही जानो!"

"ठीक कहते हो बाबू।"

इसके पश्चात् हरिनाथ उठ गया। ठाकुर शिवनन्दन ने अपनी नौकरी के विषय में एक बार पुन उसे स्मरण कराया और फिर गाँव की ओर चले।

२

भोजनादि से निश्चिन्त होकर हरिनाथ खलिहान पर आ पहुँचा। रात झुकी आ रही थी।

वह भूला न था कि रामाधीन के यहाँ से आज एक भार और लाना है पर रात के चढ आने की प्रतीक्षा थी।

इस विषय पर विचारने से उसके मन में हठात् उठा कि उसने केवल दो बोझो की बात क्यों कही। अब यदि वह कल एक बोझ और लाना चाहे तो किस बहाने लायेगा?

जो वह कर रहा है, अत्याचार है, यह उसे अज्ञात नहीं था। पर यह अधिकार उसका है। बडी मछली छोटी मछली को खाकर रहती है यह उसने चाहे पढा न हो, पर गाँव के जीवन में इस सत्य को वह भली भाँति समझ पाया था। बडी मछली का बडप्पन उसी समय तक स्थिर रह सकता है जब तक कि वह छोटी मछलियों को खाती रहे। जिस क्षण वह अपनी इस क्रिया में चूकने लगती है, उसका अपना अस्तित्व खतरे में पड़ जाता है। 'बली की जय' के नियमानुसार हरिनाथ जानता था कि वह जो कुछ बिना दण्ड पाये कर जाता है, वह सब न्याय-संगत है। कम से कम क्षमा

तो है ही। जीवन की दौड़ मे यदि दूसरे को जीवित रहना है तो उसे भी रहना है। जीवन-साधनो की छीना-झपटी मे वह पीछे नहीं रहना चाहता।

इस प्रश्न का एक नवीन दृष्टिकोण भी था। राममरन-काण्ड के कारण रामावतार का परिवार उसके माले का बैरी है, उसका बैरी है, इसलिए उसे अधिकाधिक हानि पहुँचाने की चेष्टा उसकी होनी ही चाहिए। वह इसमे चूकेगा नहीं। गुसाई जी ने कहा है—रण चढि करिय कपट चतुराई। रिपु पर कृपा परम कदराई।

हरिनाथ को अपने खलिहान मे बैठना असम्भव हो गया। वह उठा और शीघ्र ही अमराई की सघन अँधियारी मे खो गया। वहाँ अन्धकार स्थिर वृक्षो के कानो मे अपने प्राणो का रहस्य फुसफुसाता प्रतीत होता था।

जिस समय हरिनाथ अमराई मे प्रविष्ट हो अदृश्य हो गया, उसी समय अमराई से निकल निरघन अपने पिता की ओर चला।

हरिलाल ने नारियल भूमि पर रख दिया। जो गेहूँ अभी अधूरा बैलो द्वारा लतियाया गया था; उसमें से हिलोर कर पाँच-सात सेर एक कपडे मे बाँध निरघुन की बगल मे दे दिया और उस अधूरे चूर्ण भूसे को वैसा ही फैलाकर नारियल ले बैठ गया।

निरघुन जिस प्रकार अन्धकार में से प्रकट हुआ था उसी भाँति उसमे घुल गया।

हरिलाल ने आज जो किया वह एक दम नवीन तो न था; पर बहुत दिनों पश्चात् था और चोरी की भावना से नहीं, बदला लेने, दण्ड देने की भावना से अधिक किया गया था।

उसे ज्ञात था कि हरिनाथ दूसरों का माल चुरा अपना भण्डार भरता है। उसने अस्पष्ट तर्क किया कि क्यों न वह उनमे से अपना भाग ले ले।

उसकी गुडगुडी रात की निस्तब्धता पर प्रहार करती रही।

हरिनाथ ने अपने खलिहान की ओर से निश्चिन्त हो रामाधीन के खलिहान की ओर दृष्टि उठाई। वह हरिनाथ के कल्पना-पटल पर अपनी

मब सूक्ष्मताओं-सहित प्रत्यक्ष हो गया। हरिनाथ को लगा कि यदि वह अधिक बलवान होता तो और भी बडा भार बाँध मकता।

उसने विचारा रामाधीन होगा और होगा सेवक। वे ही कलवाले। उनमे से किसी की इतनी सामर्थ नही जो उसे रोके। वह आज कल से बड़ा बोझ बाँधेगा। और कल्पना मे वह बोझ अपने आकार-प्रकार मे उसके सम्मुख प्रत्यक्ष हो गया।

अब यह चोरी नही है, ऋण वसूल करना है। बोझा बाँधकर वह रामाधीन से ही उठवा देने को कहेगा। उसकी आत्मा को कितना आनन्द होगा जब रामाधीन स्वयं बोझा उठाकर उसके सिर पर रक्खेगा।

रात का अन्धकार और अन्धकार की सघनता बढती जाती थी और उसके साथ-साथ हरिनाथ का हृदय भी बढता जाता था।

रामाधीन के खलिहान के निकट पहुँच कर हरिनाथ ठिठका। अन्धकार मे भी चारो ओर देखा। फिर चादर बिछाकर गेहूँ के पूले उठा-उठा कर रखने लगा।

सेवक इसकी प्रतीक्षा कर ही रहा था। आज हरिनाथ आयेगा अवश्य। उसकी इच्छा कहाँ तक पूर्ण होगी, यह एक रोचक प्रश्न था।

सेवक हरिनाथ से प्रसन्न न था। हरिनाथ के अतिरिक्त महत्व ने छोटे-बड़े सभी को उसका बैरी बना लिया था।

जब खलिहान मे आहट हुई तो सेवक सतर्क हो गया। उसी समय उठकर रोकना उसने उचित न समझा।

रामविलास को इस प्रकार की सम्भावना का पता न था इसलिए उसने इसे वायु के कारण समझा, वास्तव मे कुछ न समझा।

सेवक आहट-द्वारा हरिनाथ के क्रिया-कलाप को कल्पना मे देखता रहा। ये क्षण उसके लिए अत्यन्त कष्टकारी थे, पर निकट भविष्य मे प्राप्त होने वाले आनन्द की भावना उन्हें सह्य बना रही थी। सुन्दर नाटक प्रारम्भ होने के पहिले उत्सुकता के क्षणों में जो दशा दर्शको की होती है, लगभग वही दशा सेवक की थी।

मेवक ने सुना कि हरिनाथ ने बोझ बाँधना प्रारम्भ कर दिया है। बोझ बांधने का कार्य अभी आधा ही हुआ था कि रामविलाम की झपकती आँख खुल गई। और जैसे स्वप्न में से उठकर पुकारा—"कौन ?"

मेवक तत्क्षण उसके पीछे बोला—"कौन ?" और फिर कूद लाठी ले हरिनाथ की ओर लपका।

"चोर है, महराज !" मार्ग मे से ही सेवक चिल्लाया।

रामविलास की निद्रा जैसे पर लगाकर उड गई। रामविलास के खलिहान में उसके होते चोरी ! और चोर अछूता निकल जाय !

स्प्रिंग के समान उसके पैर तन गये। वह उछल कर खडा हो गया। लाठी हाथ मे सँभाल ली।

"रोक लेना काका, जाने न पाये।" और स्वयं उधर लपका।

"कौन ?" रामविलाम ने निकट पहुँचकर पूछा।

"अरे, यह तो हरिनाथ दादा है।" सेवक ने भोला बनकर उत्तर दिया।

"हरिनाथ दादा !" और रामविलास हरिनाथ के अत्यन्त निकट चला गया।

रामाधीन के स्थान पर दूसरा कण्ठ सुनकर हरिनाथ चौंका। उसे ज्ञात हो गया कि आज उसका कार्यक्रम और योजना दोनों असफल हो गये है।

"हरिनाथ दादा, क्या चोरी करने को यही खलिहान मिला है ?" रामविलास ने पूछा।

"कौन ? रामविलास ?"

"हाँ दादा, मैं ही हूँ। कहो ?"

वह उसके और भी निकट चला गया। हरिनाथ एक डग पीछे हटा। बोला—"रामाधीन कहाँ है ?"

"क्यों ? मै हूँ तो। अब तो चोरी करते पकड़े गये हो। काका, चौकीदार को पुकार तो लो।"

"नही सेवक, ठहरो।" हरिनाथ ने विनती की और रामविलास की

मुद्रा अन्धकार मे पढने की चेष्टा की। पर अन्धकार-अन्धकार था, रामविलास, हरिनाथ और सेवक सब के लिए।

एक क्षण हरिनाथ स्तब्ध रहा। फिर जैसे बुद्धि उसकी रक्षार्थ आगे बढी। बोला—"रामविलास, यह चोरी नही है। रामाधीन को मैने रुपये दे दिये है और उसने दो बोझ मेरे हाथ बेच दिये है। एक आज ले जा रहा हूँ, एक कल ले जाऊँगा।"

"मै नही जानता दादा, रामाधीन कौन है? वह अलग हो गया है। उसे रुपये दिये है तो उसके खलिहान पर जाओ। काका, चौकीदार को पुकार लेना जिससे वह भी देखे कि....।"

"नही सेवक।" हरिनाथ ने विनय की।

"अच्छा दादा, जाओ इस बार तो छोड़ दिया। दूसरी बार इतनी दया मै न दिखा सकूँगा।"

हरिनाथ ने अब कुछ कठोरता का प्रयोग करना चाहा। सोचा वैसे काम बन जाय तो....।

"तो तुम लोग मेरे रुपये मार खाना चाहते हो? यह कोई भलमनसाहत नहीं है।"

रामविलास को क्रोध आ गया। एक दम उसके निकट जाकर बोला—

"जाते हो या नहीं?"

स्वर मे धमकी थी। हरिनाथ सहम गया। वह अपनी चादर बोझ से अलग करने को झुका।

"क्या कर रहे हो दादा? मै कह रहा हूँ, जाओ।"

"चादर तो निकाल लूँ।"

"चादर!"

"हाँ!"

"हमारे खलिहान में तुम्हारी चादर कैसे आई। समझे कि नही। मै यहाँ से कोई वस्तु न ले जाने दूँगा। खैर चाहते हो तो चुपचाप चले आओ।"

चादर हरिनाथ की थी। जिस सच्चाई से रामविलास अपने खलिहान की रक्षा के लिए प्रस्तुत था, उसी मनोयोग से हरिनाथ अपनी चादर लेने को अग्रसर हुआ। बोझ की गाँठ खोलने लगा।

सेवक ने याद दिलाई—"दादा, कल भी तो तुम एक बोझ ले गये थे न ?"

"हाँ, भई सेवक। क्या तुम्हारे सामने रामाधीन ने आज एक बोझ देने का वचन नहीं दिया था।"

"दादा, मुझे याद नहीं पड़ता।"

हरिनाथ भौचक रह गये। यह चमार भी उसके विरुद्ध हो गया है। आज हवा ही वैसी चल रही है। उसने सोचा कि चादर लेकर वहाँ से चल देना ही उचित है।

"दादा, गये नहीं ?"

रामविलास सोच रहा था कि हरिनाथ कारिन्दे का सम्बन्धी है और रामसरन कारिन्दे के कारण आज जेल में बन्द है। जमानत तक नहीं हुई है। उस पर हत्या की चेष्टा का अभियोग लगाया जाने को है। इसी के कारण आज दादा रामाधीन को पृथक कर देने को बाध्य हुए हैं।

यह विचारधारा इस समय हरिनाथ को अपने खलिहान मे चोर रूप मे पाकर क्रोध संयत करनेवाली न थी।

हरिनाथ बोझ की गाँठें खोल रहा था कि अचानक रामविलास उसके ऊपर टूट पड़ा; उसने कमर पकड़ कर उसे उठाया और सिर के बल भूमि पर दे मारा।

हरिनाथ के मुख से चीख निकलने वाली थी, पर वह सँभल गया। रामविलास ने कहा—"चिल्लाओ दादा, चिल्लाओ, जिससे सब लोग आ जायँ और देख ले कि कारिन्दा का बहनोई कैसे चोरी करता पकड़ा जाता है। चिल्लाओ !

इन शब्दो के साथ उसने उसकी पसलियो पर घूसों से प्रहार करना

प्रारम्भ किया। हरिनाथ चिल्ला नही मकता था। चुपचाप पिटना रहा। सेवक वहाँ मे हट गया।

'मेवक" पर्याप्त पिट चुकने पर हरिनाथ ने विवश होकर पुकारा।

'मेवक नही है। एक आदमी को बुलाने गया है।"

हरिनाथ को मन्तोप हुआ कि वह सेवक के सम्मुख नही पिट रहा है। पर भय हुआ कि यह मनुष्य कौन है. जिसे वह बुलाने गया है।

कुछ देर बाद रामविलाम ने उठते हुए कहा—"जाओ, अब मीधे चले जाओ।"

"चा""दर ?"

"मै कहता हूँ कि अभी चले जाओ।"

"नो तू चादर नही देगा ? जानता नही है किससे वैर मोल ले रहा है। सारे परिवार को धूल मे मिला कर छोडँूगा।"

इम वार दो थप्पड खा, लाठी-चादर वही छोड़ हरिनाथ चल खडा हुआ। अपने खलिहान मे पहुँच खाट पर बैठा और कराह कर लेट गया। उसे गहरी भीतरी चोट आई थी।

कराहने का स्वर मुनकर हरिलाल उठकर आया।

"कौन ? बाबू, तुम लौट आये ?"

हरिनाथ बोला नही। पर स्वर मे सहानुभूति पा रोकने पर भी पीड़ा-मूचक स्वर कण्ठ से निकल ही गया।

"क्या जुर हो गया है ? आजकल मौमम बडा खराब हो रहा है। ओढ़ लो, ऐसे न लेटो।"

हरिनाथ ने उत्तर न दिया।

"चादर कहाँ है झोंपडी मे ?"

हरिनाथ चुप रहा।

"क्यो ? क्या हाल है ?" हरिलाल की चिन्ता कुछ बढ़ी।

वह उसे स्पर्श नहीं कर रहा था। यह अत्यन्त अस्वाभाविक बिलगाव दो मानवो को उस हार्दिक सहानुभूति के चण मे पृथक रहने को विवश कर

रहा था। जब दो बार और पुकारने पर भी हरिनाथ ने ठीक उत्तर न दिया तब हरिलाल ने उसे स्पर्श करने का निश्चय किया।

चरण स्पर्श करके बोला—"बाबू, क्या बात है?

"कुछ नही। तू जा लेट रह। मै जग रहा हूँ।"

"नही तुम सो जाओ। जुर हो आया है।"

हरिनाथ का विचार था कि जो कुछ उसके साथ हुआ है वह उस पर विशेष प्रभाव न डाल सकेगा। इसके कारण उसे ज्वर हो आयेगा, यहाँ तक वह कल्पना न कर सका था। पर स्थिति अधिक गम्भीर जान पडी, वह चुप रहा।

हरिलाल ने पूछा—"बाबू, चादर कहाँ है? बताओ ऊपर डाल दूँ।"

"झोपड़ी मे होगी।"

हरिलाल झोपडी मे गया। अन्धकार मे टटोला पर चादर न मिली।

"नही है वहाँ।"

"रहने दे, जा लेट रह।"

हरिलाल विवश अपने स्थान पर लौट नारियल गुडगुड़ाने लगा। उसने सोचा कि जुर ही ऐसी वस्तु है जो उसकी पत्नी और कारिन्दे के बहनोई दोनों मे भेद नही मानती।

हरिनाथ के चले जाने के बाद रामविलास ने कहा—"काका, चादर खोल लो, अपने काम मे लाओ।"

"भैया?"

"हाँ, अब वह कई दिनों मे उठेगा।"

"बहुत मार दिया है क्या?"

"नही काका।"

सेवक ने हरिनाथ की चादर खोल उसे तीन हिस्सो मे बाँट दिया।

३

आदेश्वर के आगमन का समाचार धीरे-धीरे गाँव मे महत्व प्राप्त करता जा रहा था। कुछ लोग थे जो उत्सुकता से उसके आगमन की राह

देख रहे थे । वह आयेगा, अपने साथ चाहे और कुछ लाये या न लाये, धन अवश्य लायेगा । गाँव की भूमि यदि भूखी है तो लक्ष्मी की । लक्ष्मी सागर मे निकल कर धीरे-धीरे इन गाँवो मे समाती जा रही है । जिन गाँवो को उत्पादक होना चाहिए था वे धन पचा जाने वाले बन रहे है । धन बाहर से आता है और पता नही कहाँ चला जाता है । गाँव वैसे ही दरिद्र और दीन बने रहते है ।

एकाएक एक दिन दो इक्के आकर शिवनरायन के दरवाजे पर खड़े हो गये । तीन ट्रंक थे, एक बिस्तर और एक बोरा बर्तन । उन सब के साथ एक मनुष्य था । सम्पूर्णत वह मनुष्य था भी, यह भली-भाँति पहिचाने बिना नही कहा जा सकता क्योंकि उसका समस्त शरीर साधारण मनुष्य का सा न था । रंग उसका पक्का था । शरीर मे केवल मुख ही उसका सम्पूर्ण था । उसके दाहिने ओर का समस्त अंग भग था । दायाँ हाथ उसके नही था । उसके स्थान पर अब भाँगे वृक्ष की शाखा की भाँति एक छ-सात इंच का ठूँठ रह गया था । इस ओर की पसलियाँ भी टूट कर पुन: जुड़ी थी इसलिए खाल के नीचे वे स्पष्ट टेढी-मेढी जान पड़ती थी । उसका दाहिना पैर था तो पूरा, पर बेकार था । वह सूखा हुआ था और मृत शाखा की भाँति वृक्ष के तने से लटक रहा था ।

वह एक बैसाखी दाहिने कन्धे के नीचे लगा कर कुछ उछल कर ही चल सकता था । ऐसे व्यक्तित्व को देखने के लिए जो नर-नारी वहाँ एकत्र हुए वे अपने नयनो पर विश्वास न कर सके ।

इन लोगो ने एक स्वस्थ और स्वरूपवान आदेश्वर की कल्पना की थी । इसी से जो मनुष्य उन्होंने अपने सामने देखा, उसे वे आदेश्वर मानने को प्रस्तुत न हुए ।

सगे-सम्बधियों ने पूछा—"भैया, तुम कौन हो ? किसके यहाँ आये हो ?"

क्योंकि आकर चाहे लडे झगडे ही, उनका आदेश्वर ऐसा अंगहीन नही हो सकता ।

उम लँगडे तथा लूले ने बताया कि वह आदेश्वर है और अब जहाँ वह उत्पन्न हुआ था वही, अपने माता-पिता की भमि मे, मरने के लिए आया है।

उसे बोलता पाकर दर्शको, विशेषत· लडकियों, के आश्चर्य का ठिकाना न रहा। यह लँगडा इतनी अच्छी तरह बोल सकता है!

वडो ने देखा, आदेश्वर वात मरने की कह रहा है, पर मरने के उसमे कोई लक्षण दृष्टिगोचर नही होते। वह स्वस्थ है। जब मौत की बात करता है तो हँसता है।

इक्के से कूद आदेश्वर एक ओर खड़ा हो गया; बैसाखी अपनी काँख मे लगा ली। दोनो इक्के वालों ने सामान उतार कर नीचे रख दिया। उसने पैसे दिये और चलते समय एक ताँगेवाले से कहा—"महमूद, अधिकारी से कह देना एकाध चक्कर लगा जाये।"

"ज़रूर कह दूँगा, बाबूजी।"

ताँगेवालों की उसके प्रति आदर-भावना देखकर ग्रामीणो की हृदय-भावना मे भी कुछ आदर आ गया। उन्हे अनुभव हुआ कि यह जो मनुष्य इस प्रकार किसी कारण लँगड़ा-लूला हो गया है, अपने मे कुछ असाधारणत्व रखता है।

हरे कृष्ण की दृष्टि उसके मुख की ओर गई। उसने देखा कि मुखाकृति साधारण होने पर भी मुद्रा मे कुछ असाधारणत्व है। वह इतने मनुष्यो के वीच तमाशा बना खड़ा तनिक भी कुण्ठित नहीं होता।

ऐसा लगा कि वह इन सब से पृथक, सब से ऊँचा, उन सबको कुछ देने आया हो। मुद्रा से जान पडता था कि वह ऐसे बहुत से भेद जानता है जिससे वे लोग अनभिज्ञ हैं। उसके मुखमण्डल पर खिन्नता का नाम नही है। एक हल्की मुस्कान बार-बार थिरक कर गम्भीरता मे परिवर्तित हो जाती है।

भगौती पण्डित ने उसके आने का पत्र पढ़कर शिवनरायन को सुनाया था। वे साथ के थे भी। आगे आये। पूछा—"आदेश्वर हो क्या?"

आदेश्वर ने ध्यान से उनकी ओर देखा। "भई, आप का चेहरा पहचाना तो लगता है पर नाम स्मरण नही आता।"

"मै हूँ भगौती। हम सब साथ उस इमली के नीचे खेला करते थे।"

आदेश्वर के नयन कुछ क्षण के लिए अन्तर्मुखी हो गये। वह अतीत मे लौट कर अपने खेल देखने लगा। एक समय था, उसे भी प्यार करने वाले थे। माँ थी, पिता थे, प्यारे परिजन थे। वह भगौती के साथ हँसता-खेलता था; और आज है कि कोई उसके प्रति क्रियात्मक सहानुभूति प्रकट करने का साहस नहीं कर पाता। वह एक समय संसार का प्यारा था। संसार उसके साथ था और आज वह उसके विरुद्ध खड़ा अवहेलना से मुस्करा रहा है! भूत मे उसने भगौती को पकड़ पाया। पहिचान की मुस्कान उसके ओठो पर दौड़ गई—नयनो से झाँकने लगी।

वह उछल कर उसके निकट पहुँचा। ध्यान से उसके मुख का निरीक्षण किया, जैसे कि किसी पत्थर का निरीक्षण बारम्बार जौहरी करता है और अपने बायें हाथ से उसका दाहिना हाथ पकड़ कर दबा दिया। बोला—"अरे भगौती, तुम ऐसे हो गये कि पहिचाने भी नहीं जाते। कहो मजे मे तो हो न? कितने बाल-बच्चे है भई?"

भगौती ने देखा कि लँगड़ा आदेश्वर प्रश्न करने मे बहुत तेज है। आत्मीयता की मात्रा भी विशेष है। उत्तर दिया—"सब भगवान् की दया है।"

"भगवती पर भगवान की दया न होगी तो किस पर होगी?"

सबके चेहरे शान्त थे। जैसे उसने बड़ी गहरी बात कही हो और उसका समझना साधारण जन-बुद्धि के परे हो। भगवती और भगवान का एक वाक्य में प्रयोग असाधारण जँचा। पर इससे अधिक उन लोगों के लिए उसमें न था। स्वयं भगौती पण्डित ने हलकी सी खीस निकाल दी।

"सामान वामान रखवाओ, तो फिर निश्चिन्त बैठकर बातचीत होगी।" भगौती ने कहा।—'कहाँ हैं शिवनरायन दादा?'

शिवनरायन थे नहीं। उनकी पत्नी ने भगौती की इच्छा समझ अपने

पंचवर्षीय पौत्र को घर के भीतर बुला लिया और द्वार बन्द कर लिया। यह लँगड़ा-लूला उसके बालकों का दुर्भाग्य बन कर आया है।

शिवनरायन की पत्नी का यह व्यवहार किसी को अच्छा न लगा। अन्य लोगों ने उसका सामान उठाकर उसकी बैठक के सामने रख देना चाहा पर आदेश्वर ने इस पर आपत्ति की।

"ये लोग यदि मुझे घर मे नही लेना चाहते तो मै भी इनके यहाँ ठहरने को तैयार नहीं हूँ। क्या तुम लोगों मे से मुझे कोई एक कोठरी रहने को देगा। मैं किराया दूँगा।"

दो-चार मनुष्य और एकत्र हो गये। किराया मिलेगा यह सुनकर कई आदमियों ने उसे अपने यहाँ निमन्त्रित करना चाहा। पर तनिक विचारने पर सभी लोग एक ही निश्चय पर पहुँचे। किसी ने उसे एक कोठरी देने की धृष्टता न की।

कोठरी देने का अर्थ शिवनरायन से वैर मोल लेना हो सकता है। इस नवीन व्यक्ति के लिए, लँगड़े-लूले के लिए कौन समर्थ से वैर मोल ले?

किसी को पता नही, आदेश्वर कैसा व्यक्ति है। अभी कुछ ऐसा वैसा निकल आवे तो? कुछ खोट है तभी तो नगर से भाग कर गाँव मे आया है।

गाँव में घर बनते है स्वयं रहने के लिए—अपने परिवार के लिए किराये पर देने के लिए नहीं। परिवार मे पराये व्यक्ति को कौन सम्मिलित करना चाहेगा?

आदेश्वर गाँव के सम्मुख अपनी एक किराये की कोठरी की माँग लिये खड़ा रहा। कोई भी आगे नहीं आ रहा है, इसीलिए सभी ने इस दिशा मे सहानुभूति दिखाना अस्वीकार कर दिया। इस विशेष असफलता से आदेश्वर एक क्षण कुण्ठित हुआ, फिर मुस्काया।

बोला—"तो इतने बड़े गाँव मे मुझे एक कोठरी भी किराये पर न मिलेगी?"

उपस्थित मनुष्यों ने कठोर मौन साध भूमि अथवा आकाश की ओर देखना प्रारम्भ किया। कुछ वहाँ से चल दिये।

आदेश्वर को अब तक आशा थी कि कोई न कोई उसे आश्रय देने को प्रस्तुत हो जायगा। अब अनुभव ने बताया कि वह व्यर्थ थी। वह संसार में अकेला है, एकदम अकेला है। संसार उसे उसके गाँव में, अपनी पितृ-भूमि में मरने देने को प्रस्तुत नहीं है। उसका हृदय भर आया। नयनों में आँसू आ गये।

वह कितनी इच्छाएँ, भावनाएँ, हौंस और साध लेकर इस गाँव में आया था। वह किसी का हृदय दुखाना नहीं चाहता था। चाहता था केवल अपने बचपन के रहस्यमय मोहक दृश्यों को देखते रहना और उन्हीं के मध्य जीवन की अन्तिम घड़ियाँ पूरी करना।

ये इच्छाएँ और आकांक्षाएँ बालकों जैसी कही जा सकती है। पर डाक्टरों ने उसे अपने जीवन को अधिक समय तक बनाये रखने के लिए नगर छोड़ने का आदेश दिया था। नगर का तीव्र गतिमान जीवन उसके स्वास्थ्य के लिए भार हो रहा था।

गाँव में लौटने की सम्भावना ने उसके सम्मुख बचपन के दृश्यों और चित्रों को पुनर्जीवित कर दिया था। प्राचीन स्मृतियों के नवीन चित्र उसके हृदय को पुलकित करते थे।

उसने गाँव में एक स्वर्ग की कल्पना कर ली थी। कोई उसका अपना न था। जो कुछ कमाया खाया; पुस्तकों, सभाओं को भेंट किया और इससे भी जो बचा वह क्षण में लखपति होने की लालसा में सट्टे में गवाँ दिया।

उसके सब दुःखों, असफलताओं, और निराशाओं के विरुद्ध गाँव का कल्पित जीवन उसे आशा से भर देता था। आशा की क्षीण रेखा उसे वृक्षों, तालों और ऊबड़-खाबड़ भूमि पर दिखाई देती थी। पर आज वह भूमि उसे स्वीकार करते मुख बिचका रही है। जहाँ वह अपनापन कल्पित कर रहा था वहाँ उसे घोर परायापन मिला।

नगर में, किराया देने पर, उसे स्वागत करने वालों की कमी नहीं थी। पर गाँव है कि न उसे स्वीकार करता है, न किराया स्वीकार करता है।

सब लोग धीरे-धीरे वहाँ से चले गये। केवल कुछ बालक रह गये।

आदेश्वर अपने ट्रंक पर बैठ गया। उसने सुना, शिवनरायन के घर में बालक रो रहे हैं। वे बाहर निकल लंगडे-लूले का तमाशा देखने को उतावले हैं और उनकी माँ उन्हें मार रही है, धमका रही है और डरा रही है कि किवाड न खोल, नही तो वह लंगडा-लूला घर मे घुस आयेगा।

आदेश्वर के हृदय मे एक ऐंठन हुई। उसके घर का द्वार उसके विरुद्ध ही बन्द है। जहाँ वह उत्पन्न हुआ है, जहाँ उसका नाल गड़ा है, उस घर मे घुसने का अधिकार उसका नही है। वह उस पर अधिकार करने नहीं आया है। मृत्यु, जिसे डाक्टरो ने कह-कहकर उसके लिए अत्यन्त प्रत्यक्ष बना दिया हैं, जिसे अब वह मूर्तिमान देखता है, जो बात-बात में, अनन्त एकाकी क्षणों मे उसके सामने होकर निकल जाती है, उसी मृत्यु की केवल सा प्रतीक्षा करने आया है।

नारी से विवाह की आकांक्षा पूर्ण होने से पहले ही दुर्घटना ने उसके गले मे हार डाल दिया। मशीन का पट्टा वह हार बन गया और वह छोटा फोरमैन उस मशीन को अपने अंग भेट दे बैठा।

सर्पिणी की भाँति उस मशीन ने अपनी ही सन्तान को खा डाला। उसी ने आदेश्वर के हृदय मे महान आशाओ की सृष्टि की और उसी ने उसे मसल कर नष्ट कर दिया। वह महानता के स्वप्न उसी के बल पर देख रहा था, उसी ने उसे घसीट कर, साधारण से भी नीचे, अँधेरे मे, सब कुछ छीन कर, छोड दिया। वह यन्त्रवाद के हताहतों मे से था।

यन्त्र ने जो किया वह नियम की निर्ममता से, पर आदेश्वर उस निर्ममता से उसे सह न पाया। उसके हाथ-पैर क्या टूटे वह भीतर-बाहर से टूट गया। उसे कोई आश्रय यदि जीवित रखे हुए था तो वह था उसका स्वेच्छाचारी अहंकार। वह अहंकार, जिसे पीस-पीसकर अन्याय और अत्याचार का आधार प्रस्तुत किया जाता है।

आदेश्वर का समस्त निराशाओं, समस्त असफलताओ के बीच बल केवल इसी स्थान से मिलता था। निराशा के क्षणों मे वह अपने से

कहता—आदेश्वर पराजय नही स्वीकार करेगा। पीठ नही मोड़ेगा। रोयेगा वह क्यो ? वह सहेगा, सब सहेगा और हँसते-हँसते।

अन्तिम मंजिल पर जो मृत्यु चिकित्सको के लिए भयानक बन बैठी है, वह उसे भयानक नही लगती। वह उसके लिए एक विचित्र अस्पष्ट रहस्य-मय वातावरण मे लिपट गई है। वह अपार सौन्दर्यमयी हो गई है।

वह उसका स्वागत करेगा। इसी तैयारी मे वह लगा है। वह अपने हृदय का द्वार खोल देगा। जीवन के वसतकाल मे जो उसने कमाया वह सब उसके सम्मुख भेट चढा देगा।

उसके पश्चात् मृत्यु और वह एक गाढालिगन से निमग्न हो जायँगे। मृत्यु सुन्दर है और दिनो दिन अधिकाधिक सौन्दर्य एकत्र करती जा रही है।

आदेश्वर वहाँ अकेला रह गया। धूप उसकी ओर धीरे-धीरे, मृत्यु की ही भाँति, सरकने लगी।

उसके पैर के नख सूर्य के रंग से रँग उठे। पर उसका हृदय अन्धकार-मय रात्रि के रंग से रँगा था। वह क्या करे ?

क्या यहाँ से लौट जाय ? पर यहाँ सड़क से दूर इक्का बुलाकर कौन लावेगा ?

सब चले गये है पता नहीं शिवनारायण है या नही ? यदि नही है तो भी उनका रुख उसे ज्ञात हो गया है। भिखमगे की भाँति प्राप्त आश्रय वह स्वीकार न करेगा। इसी द्वार के निकट अथवा उससे दूर एक वृक्ष के नीचे अपनी पुस्तकों के बीच वह मर जाना स्वीकार करेगा। पर दया की लपटों में वह अपना बचाखुचा शरीर न झुलसायेगा।

पर वह असहाय है। यदि उसके हाथ-पैर काम के होते तो वह सब सामान कभी का वहाँ से हटा लेता। पर हाथ पैर काम के होते तो....?

कैसा मूर्ख है वह,। अथवा ये क्षण कितनी मूर्खता से भरे थे। यदि उसके हाथ पैर काम के होते तो वह वहाँ क्यों होता ?

नगर में अपने मकान में होता, जहाँ सेवा यदि वैसे नहीं प्राप्त होती

तो खरीदी जा सकती है। इस समय की अपनी विचारधारा पर उसे हँसी आ गई।

सूर्य की किरणें और आगे बढीं। वे उसके घुटनो तक पहुँचीं। निकट की नीम ने वायु के प्रति अपना सिर हिलाया। वायु मे गर्मी आ चली। लू का एक झोंका आदेश्वर के मुख को भूरा बना गया। उसका हृदय इस समय भी खिल उठा!

लू का यह झोका आज उसने कितने दिनों पश्चात् अनुभव किया है। इस मिट्टी का स्पर्श आज कितने समय पश्चात् उसे प्राप्त हुआ है। वह इसे अधिकाधिक अनुभव करने को कई वर्षों के भूखे की भाँति उतावला हो गया।

इस तप्त लू के स्पर्श ने कुछ क्षणो के लिए उसे निराशा से पृथक कर दिया। जिस ओर से झोंका आया था उसी ओर मुँह फेर लालसा-भरी अधमिची आँखों से और की प्रतीक्षा करने लगा।

वह इस कार्य मे व्यस्त था कि उसका ध्यान ट्रंक पर किसी के कर-स्पर्श से भंग हुआ।

घूम कर देखा। पाया, एक नारी है। जो युवती है, पान से उसका मुख रचा है। वस्त्र भी उसके एकदम दरिद्र नही है।

दोनों के नयन मिले। उसने नारी के नयनों मे भय, संकोच, उत्सुकता, और समर्पण का भाव देखा। वह उसकी कठिनाई समझ गया। बोला—"क्या है?"

युवती के नयनों मे जल आ गया। आदेश्वर के साथ क्या हुआ है, यह उसने देखा है। वह आदेश्वर को पहले से नहीं जानती।

आदेश्वर जब गाँव से चला गया था, उसके बहुत दिनो बाद इन गाँव मे आई है। और अब अपना सब कुछ खोकर, मिट्टी बन कर, मनुष्य की ठोकर खाती यहीं रह गई है।

बोली—"महाराज, मेरे यहाँ चलोगे? मै नाइन हूँ।"

उसे भय था कि नाइन होने के कारण उसकी प्रार्थना अस्वीकार न हो

जाय। वह उस पर एहसान नहीं कर रही थी। वह अपनी आत्मा की एक क्षुधा के कारण यह करने को वाध्य हुई थी।

आदेश्वर गम्भीर हो गया। ध्यान से उस नारी की ओर देखा, जो वरदान बनकर उसके अभिशप्त-जीवन मे प्रविष्ट होने की चेष्टा कर रही है। वह मुस्कराया। बोला—"तुम नाइन हो ?"

युवती ने शीघ्रता से उत्तर दिया—"हाँ।" जैसे कि इस विषय मे यह अधिक समय तक कष्ट नहीं सह सकती थी।

"परन्तु तुम्हारे परिवार के लोग क्या इसे स्वीकार करेंगे ? मै नही चाहता कि मेरे कारण तुम बुराई मे पडो।"

युवती ने उस मनुष्य को, जिसके मुखसे ऐसे वाक्य निकले, ध्यान से देखा। जीवन मे यह प्रथम पुरुष है, जिसने उसकी भलाई-बुराई के विषय मे सोचा है। और भी है पर उनके लिए तो वह नारी है, नगण्य नारी है।

बोली—"मेरे तो कोई नहीं है।"

"अच्छा। जैसी तुम्हारी इच्छा हो। कहाँ है तुम्हारा घर ?"

"ताल के उस ओर, पीपल के पेड़ के नीचे।"

युवती ने हाथ उठाकर संकेत किया। पर आदेश्वर ने उसीकी ओर देखा ध्यान से। उसके मुख को मन मे अंकित किया। बोला—"तुम स्वतन्त्र हो तभी परोपकार कर सकती हो। पर यह तो बताओ कि यह सामान तुम्हारे यहाँ तक जायेगा कैसे ?"

"कैसे जायेगा ?" युवती का मुख-मण्डल प्रसन्नता से खिल उठा। "मै ले चलूँगी। तुम यही बैठे रहो। मैं इन्हें रख आऊँ तो फिर तुम्हे लेती चलूँगी।"

आदेश्वर को यह सब अत्यन्त रोचक लगा। बोला—"अच्छा जो तुम्हारी इच्छा हो करो।"

दुपहरी में नाइन के यहाँ पहुँचकर आदेश्वर ने उससे सबसे पहले पानी माँगा। रूपमती ने उसकी ओर अविश्वस्त नयनों से देखा। जो हो गया था उस पर वह विश्वास नहीं कर रही थी।

"मैं तुम्हे पानी दूँ ?"

"क्यों क्या हुआ ? पानी ही नहीं खाने को भी देना होगा। देखती हो कि मैं इस अकेले हाथ से चूल्हा-चौका नही कर सकता।"

रूपमती ने आदेश्वर की हीनता पर ध्यान दिया। कैसा सुन्दर पुरुष इस प्रकार अपाहिज हो गया है। उसका हृदय द्रवित हो गया।

पानी देते हुए उसने पूछा—"यह सब कैसे हुआ ?"

"बैठोगी तो बताऊँगा। जो हमे उठाता है, वह गिराता भी उतनी ही बुरी प्रकार है। मिल मे सब पिस गया है।"

रूपमती ने उसके हाथ के ठूंठ का स्पर्श किया। पैरों मे जहाँ खाल सिकुड कर पैर को सदा के लिए मोड गई थी, उसे देखा।

फिर उसकी दृष्टि उन ट्रंकों की ओर गई। उत्सुकता बढ़ी—इनमे क्या है ?

पूछा—"इन मे क्या है ?"

आदेश्वर ने ताली का गुच्छा उसके सामने फेक दिया।

"देख लो जो कुछ है, यही है।"

रूपमती ने धडकते हृदय से ट्रंक खोला। पाया कि वह पुस्तकों से भरा है।

पुस्तकें ! उसे विश्वास न हुआ। उसने दूसरा ट्रंक खोला। उसमे भी पुस्तके; तभी तो इतने भारी थे ! तीसरे ट्रंक मे उसे कपड़ों के दर्शन हुए।

इन पुस्तको का क्या होगा ? उसने सोचा। विचार यह भी हुआ कि चुराई हुई होंगी। आदेश्वर पढ़ लिख सकता है, यह कल्पना उसकी न थी। वह नगर से आया है। पैसा, कपडा, लत्ता पास होगा, यह कल्पना उसकी थी। पर ये पुस्तकें ! उससे रहा न गया।

पूछा—"ये कैसी है ?"

"अरे, ये बडी अच्छी है, इन्हो के आश्रय मेरा जीवन है।"

उसे विश्वास न हुआ।

"क्या करते हो इनका ?"

"पुस्तकों को पढ़ने के अतिरिक्त और क्या किया जाता है ?"

"तुम पढ़ते हो ?"

"हाँ, भई, हाँ।" उसने रूपमती की ओर देखा। तुम्हे विश्वास नहीं होता। मैंने पढाई की परीक्षा किसी के सम्मुख नही दी; पर तुम्हे, जान पड़ता है, बिना परीक्षा लिये विश्वास न होगा।

बोला—"क्या पढ़ कर सुनाऊँ ? हिन्दी या अंग्रेजी ?"

अंग्रेज़ी ! रूपमती के कानों ने सुना। उसे विश्वास न हुआ। हिन्दी तक बात ठीक थी, पर अँग्रेज़ी !

उसका मुख आश्चर्य से खुल गया। वह अपने घर किसे ले आई है ! वह आदेश्वर को साधारण मानव समझ कर घर लाई थी, पर वह तो अब धीरे-धीरे देव मे परिवर्त्तित हो रहा है।

आदेश्वर ऐसा है ! यदि वह पहले से यह जानती तो कदापि उसे अपने यहाँ निमन्त्रित करने का साहस न कर पाती।

उसकी मुद्रा देख आदेश्वर मुस्काया। साधारण भारतीय नारी के अज्ञान पर द्रवित भी हुआ।

बोला—"लाओ, यह ऊपर की पुस्तक दो ; तुम्हे अंग्रेजी पढ़कर सुनाऊँ।"

रूपमती ने यन्त्रवत् आज्ञा-पालन किया। आदेश्वर ने मनुष्य के अधिकारों पर वह पुस्तक हाथ मे लेली। और रूपमती से कहा—"बैठ जाओ; सुनो; यह अंग्रेज़ों की; गोरों की भाषा है।

रूपमती मूर्तिवत् बैठ गई।

आदेश्वर ने पढ़ना प्रारम्भ किया। रूपमती कुछ क्षण बैठी सुनती रही। फिर उसकी दृष्टि आदेश्वर के मुख की चेष्टाओ की ओर जा लगी। गिटपिट के साथ उसने उन ओठों के विचित्र आकारों को देखा। उसे मुस्कराहट आई।

आदेश्वर ने देखा। उसने और भी तेज़ी से पढ़ना प्रारम्भ किया। अंग्रेज़ी के वे शब्द अब जैसे रूपमती को गुदगुदाने लगे। उसकी मुस्कान शीघ्र ही हँसी में परिवर्त्तित हो गई।

आदेश्वर की गति और भी तेज़ हुई। वह खिलखिला पड़ी। और फिर हँसी और इतनी हँसी कि पेट मे बल पड गये। लोट गई। आदेश्वर ने पढना बन्द कर दिया।

"मुझे घर में लाकर भूखा ही रखना है क्या ?"

रूपमती शीघ्र ही उठ बैठी। उसने अपने को संयत किया। पूछा—"जो पढ़ा है इसका अर्थ समझते हो ?"

"क्यो नही। तुम समझोगी ? बैठो, समझाऊँ।"

"नही, अभी नही। तुम्हारे लिए खाने को बना दूँ। मुझे तो अब तुम से डर लगता है।"

हँसी से बीच की दीवार पर्याप्त गिर चुकी थी।

"क्यो ?"

"तुम पढ सकते हो। गाँव मे कोई अंग्रेजी नही जानता। पटवारी का लड़का पढ़ने जाता है। पर खरच बहुत है, वे भी अब छुड़ाने वाले है।"

"मै तुम्हे पढाऊँगा। पढ़ोगी न ?"

"न भई, तुम्हारी गिटपिट मै नही पढूँगी। हाँ, यदि हिन्दी पढ़ा दोगे तो पढ़ लूँगी। फिर मै रामायण बाँच सकूँगी। नाई की रामायण वैसी ही बँधी रक्खी है, उन बातों को आज आठ बरस हो गये।"

उसके नयनो मे आँसू आ गये।

"चलूँ, तुम्हारे लिए कुछ बना दूँ। हाँ, यहाँ धुवाँ होगा। बाहर पीपल के नीचे खाट डाले देती हूँ। वहाँ लेट जाओ। वही नहाने को पानी रख दूँगी।"

आदेश्वर पीपल के नीचे लेट कर सोचने लगा। रूपमती रस्सी-गगरा ले पानी लेने गई।

४

आदेश्वर के ताऊ पैसठ वर्ष के थे। उन्होंने अपनी गृहस्थी बहुत सँभाल कर बनाई थी। कभी कोई कच्चा काम नहीं किया था। वे स्वयं भी

पण्डित थे। संस्कृत श्लोक बोल सकते थे। समय पड़ने पर उसका अर्थ भी कर सकते थे। पर उस अर्थ का क्रियात्मक संसार में क्या स्थान है, इसकी जानकारी से कोरे थे।

उनका सब से बड़ा पुत्र जो तीन पुत्रियों में छोटा था, अब अठारह वर्ष का था। परन्तु वैसे उसका होना न होना बराबर था। उसे पराये तो दूर अपने शरीर के विषय में भी विशेष ज्ञान न था। वह सनक गया था। कुछ का विचार था कि किसी ने कुछ कर दिया है और उसका दिमाग खराब हो गया है। पर मस्तिष्क का विशेष सम्बन्ध प्रजनन से नहीं जान पड़ता, इसी से उसका विवाह पण्डित शिवनरायन ने बारह वर्ष की अवस्था में ही कर दिया था।

कन्या के पिता ने पण्डित शिवनरायन को देखा, उनकी खेती-बारी का देखा और लड़के को देखने की आवश्यकता ही न समझी। विवाह अपने अर्थ में सफल हुआ था। पुत्रवधू ने परिवार को दो पुत्र और एक पुत्री दी उन्ही पोती-पोतों को द्वार के भीतर बन्द कर उनकी दादी चिल्ला रही थीं।

शिवनरायन की पत्नी में कोई असाधारणता न थी। यह कहा जा सकता है कि उनकी असाधारणता उनके अत्यन्त साधारण होने में थी।

आदेश्वर जब तक उनके दरवाजे ट्रङ्क पर बैठा रहा तब तक वे बार-बार किवाड के छिद्र से झाँक-झाँक देखती रही और उसकी विवशता में कदाचित् आनन्द लेती रहीं। कदाचित् मनाती भी रही कि वह यहाँ से टल जाय जिससे उनके परिवार में जो शान्ति है वह नष्ट न हो, पोतों के लिए भूमि सुरक्षित रहे।

पर जब उसने रूपमती को एक-एक कर सब ट्रंक ढो ले जाते देखा, तो उनकी छाती पर साँप लोटने लगा। कुछ भी हो आदेश्वर उनका है। उसे लगा कि उन ट्रंकों में जो कुछ है, उस सब की स्वामिनी वह नाइन होगी।

जब ट्रंक हैं, उनमें ताला लगा है और वे भारी हैं तो उनमें कुछ होगा

अवश्य। वह आदेश्वर की जीवन भर की कमाई है। चाहे कितना ही थोड़ा हो, कुछ होगा अवश्य।

जब आदेश्वर बैसाखी के सहारे रूपमती के साथ चला गया, तो वे पड़ोसिन के द्वार पर चिल्ला कर बोली—

"वह गाँव भर की रंडी हमारे बेटे का सामान अपने यहाँ ढोकर क्यों ले गई। हमारे बीच पड़ने का उसे क्या काम?"

पड़ोसिन की अवस्था उतनी अर्थात् तिरसठ वर्ष की तो न थी पर अपने पति से वे बड़ी थी और शिवनरायन की पत्नी से आठ वर्ष छोटी।

उसने सोचा—लड़का धूप में तपता रहा, तब कुछ नहीं बोली और अब छाती फट रही है!

पर ऐसा खोल कर तो कहा नहीं जा सकता। उसे भी आवश्यकता पड़ती है। बोली—"भरे-भरे ट्रंक देखे, मुँह में पानी भर आया। सब माल हथिया लेगी और उसके यार बेचारे लड़के को मार-पीटकर बाहर कर देंगे।"

तभी मार्ग चलती तेलिन ने ब्राह्मणियों की यह कथा सुन उसमें रस लिया। आज इनकी नीची हुई है। बोली—"जब आप लोगों ने उसे अपने घर में स्थान नहीं दिया तो वह बेचारी लिवा ले गई। कोई गोद में उठाकर नहीं ले गई। अपनी खुशी से गया है।"

वृद्धाओं को उसका यह बीच में बोलना बुरा लगा। शिवरायन की पत्नी बोलीं—"तेलिन, तुम जाओ, अपना काम करो।"

"हाँ, महराजिन, जा तो रही हूँ। पर रूपमती ने बुरा नहीं किया। वैसे चाहे वह कितनी ही बुरी हो पर यह काम उसने अच्छा किया है। अपाहिज की सेवा की है। जितनी सेवा वह कर सकती है उतनी तुम से नहीं होती महराजिन!"

शिवनरायन की पत्नी कट-कट गई। जी में आया कि उसे कच्चा खा जाय। तेलिन वहाँ से चली गई।

बलदेव कायथ उधर होकर निकले। उन्होंने हरपाली को सुनाकर

कहा,—"अब तो कलजुग आ गया है। बाँभन के लड़के वेश्या-नाइनों के हाथ का बनाया खाने लगे हैं।"

"क्या बात हुई भैया ?' पड़ोसिन ने इस नवीन समाचार में रुचि लेते हुए पूछा।

"अरे हरबक्स की दादी ! बात क्या होती ? मैं अभी रूपमती के द्वार पर होकर आ रहा था। देखा धूमधाम से चूल्हा जल रहा है। पूछा, क्या बात है। तो वह बोली—"देखते नही मेरे यहाँ अतिथि आये हैं।" मैंने पूछा—क्या यह तेरे हाथ का बनाया खायेंगे ? तो सुनकर बोली—'जब मेरे वहाँ आये हैं, और बनवाया हैं, तो क्यों न खायेंगे ? क्या मैं आदमी नहीं हूँ।' तभी तो हरबक्स की दादी, मैं कह रहा हूँ कि कलजुग, घोर कलजुग आ गया है। बाँभन सूद्रों के हाथ का खाने लगे। धरम कहाँ रहा ?"

यह समाचार शिवनरायन की वृद्धा पत्नी को अत्यन्त कष्टकर हुआ। यह क्या किया आदेश्वर ने ? कुल मे कलंक लगाया।

बोली—"भैया ! परदेस करके आया है। परदेस में कोई क्या करता है कौन देखता है। परदेस मे तो सँभलकर रहना चाहिए।"

"तभी तो कहता हूँ काकी, बाँभनों में वह धरम नही रहा।" और वह अपने मार्ग चले गये।

दोनों वृद्धाएँ एक दूसरे की ओर देखने लगी। दोनो ने सोचा कि कैसे चाहे उसे घर मे लौटा लेने की बात भी होती, पर अब वह असम्भव है। नाइन के हाथ का खाकर जो अपने को पतित कर चुका है, उसे घर मे नही घुसाया जा सकता और वे झुंझला उठीं—आदेश्वर से अधिक रूपमती से ऊपर। आदेश्वर नाइन के यहाँ क्यों जाता ? अवश्य ही इस गाँव की बेसवा ने उसके ऊपर कोई जादू-मन्तर कर दिया है।

आदेश्वर रूपमती के यहाँ टिका है, उसके हाथ का उसने खा लिया है, यह समाचार गाँव-भर में विद्युत्-गति से फैल गया। मौन सर्वसम्मति से निश्चय हो गया—आदेश्वर ब्राह्मण परिवार से बाहर।

परिवार से, जाति से उसे बहिष्कृत कर दिया, पर मनुष्यता से बाहर उसे न कर सके, गाँव के बाहर उसे न कर मके। फल इसका विपरीत ऐसे मनुष्य को देखने के लिए बहुत और वार्तालाप करने के लिए कुछ, मनुष्य लालायित हो गये।

जब शिवनरायन तीसरे पहर घर लौटे, तो हरपाली ने दुखित होकर कहा—"देख लो तुमने अपने प्यारे भतीजे की करतूत ?"

शिवनरायन मार्ग मे उसे दस स्थानों पर सुन आये थे। उनके परिवार पर टिप्पणियाँ हो रही थी। उस परिवार का भूत खोलकर देखा जा रहा था। अपने परिवार के प्रति गाँव की इस भावना से वे प्रभावित हुए बिना नही रह सके। फिर भी बोले—"क्या हुआ ?"

"क्या तुम्हे नही पता ?

"मैं अभी खेत से आ रहा हूँ। मुझे क्या पता ?"

"तुम्हारे भतीजे उस रंडी रूपमती के यहाँ ठहरे है और वही उसके हाथ का खाया है।"

शिवनरायन ने सब सुन लिया था और उसके ऊपर शत्रु-मित्रों की टिप्पणियाँ भी उनके कानो मे पड़ चुकी थीं, इसलिए वे आकाश से न गिरे। पर उन्हे महान् कष्ट अवश्य हुआ।

बोले—"मेरे बुढापे मे दाग लगाने के लिए यह कमबख्त क्यों जीता रहा। मशीन मे आया तो पूरा ही क्यो न आ गया!"

न पत्नी ने, न उन्होंने और न समाज के किसी उत्तरदायी मतदाता ने इस बात पर विचार किया कि यदि वह रूपमती के साथ नही जाता तो क्या करता ? क्या सदा उसी पेड़ के नीचे पड़ा रहता ?

पर अब वह समस्या तो थी ही नही। स्वय कुछ करने को रह ही नही गया था। रह गया था केवल दूसरे को दोष देना।

इस शुभ कार्य को सब ने करना प्रारम्भ किया।

सामान्य भावना थी कि आदेश्वर को वही पड़े-पड़े मर जाना चाहिए था, वह बेसवा नाइन के यहाँ क्यों गया और उसके यहाँ क्यों खाया।

मब कुछ मोच-ममझ कर. शुद्ध होकर, शान्त होकर, शिवनरायन ने निश्चय किया कि वे अब उससे बोलेंगे भी नही कोई वास्ता न रक्खेंगे। पर एक बात और यह होती तो अच्छा होता। यदि मरकार भी जाति-बहिष्कृत मनुष्य को उमका भाग जब्त कर दण्ड देती तो ...। आदेश्वर का भाग शिवनरायन के पाम रह जाता और ममस्त घटना शुभ हो जाती। पर मरकार के तो धरम-करम कुछ है ही नही। उन्होंने पत्नी से कह दिया—"मै उसका मुँह भी नही देखना चाहता।"

पर घरवाली इमके विरुद्ध थी। आदेश्वर का मुख चाहे देखा जाय या न देखा जाय। न देखा जाय तो बुरा न होगा, पर उमके ट्रंको मे क्या है वह अवश्य देखा जाना चाहिए और यही देख लेने को वह उतावली हो रही थी।

बोली—"नही तुम्हे जाना चाहिए। लोक-दिखावा हो जायगा। और.... उसके साथ चार बडे ट्रंक थे, जिन्हें वह बेसरम बेसवा उठा ले गई है। जाओ, देख आओ, वह क्या लाया है ? कह देना कि जिसे अपना माल सौप दिया है, उसी से जमीन-जायदाद ले। अब इस द्वार आने की आवश्यकता नही है।"

"नही, मै नही जाऊँगा।"

पर ट्रंकों की बात सुनकर निश्चय हिलता प्रतीत हुआ। यदि वे ट्रंक, ट्रंक नही उनमे रक्खे कपडे और रुपए, उनके घर मे आते तो—

हरपाली ने उसका स्वागत क्यो नही किया। मन मे आया कि उसके ऊपर क्रुद्ध हो, पर उसका फल क्या निकलेगा ? जो होना था हो गया।

"नहीं, मै उसका मुँह भी नहीं देखूँगा।"

पर आश्चर्य कि वह घर से बाहर निकल, सबसे छोटे मार्ग से, रूपमती के घर की ओर चले।

आदेश्वर भोजन कर चुका था; कुल्ली कर रहा था। रूपमती उसके हाथ पर पानी डाल रही थी। एक स्वच्छ तौलिया हाथ पोंछने के लिए उसने ले रक्खा था।

शिवनारायन ने वह देखा और जो किसी ने नहीं देखा था। औरों ने, चाहे ठीक ही हो, अनुमान किया था कि आदेश्वर ने बेसवा नाइन के यहाँ भोजन किया है; पर शिवनारायन ने प्रत्यक्ष ही देखा।

शिवनरायन जाकर दूर खड़े हो गये। उनकी दृष्टि तौलिये की स्वच्छता पर लग गई। कौन है गाँव मे कारिन्दा के अतिरिक्त जो इतना स्वच्छ वस्त्र प्रयोग करता है? एक प्रकार का आतंक उन पर छाने लगा। उन्होंने अपने को सँभाल लिया। इस पतित का आतंक वह मानें! यह नाइन के हाथ का बनाया भोजन करनेवाला कुलांगार!

आदेश्वर ने ताऊ की ओर देखा। उसने उन्हे पहचान लिया। धीरे-धीरे तौलिया से अपना अकेला हाथ पोछा और फिर अपने पूज्य को प्रणाम किया।

शिवनारायन ने देखा कि नाइन के यहाँ खाकर वह तनिक भी लज्जित नही है और न कुण्ठित ही है। जैसे कितने दिनों से उसके यहाँ रह रहा हो।

कुछ बोलना था इसलिए बोले—"कहो आदेश्वर, अच्छे तो हो?"

आदेश्वर ने उत्तर नही दिया, वह बैसाखी के सहारे पीपल के नीचे अपनी खाट की ओर चला। रूपमती ने शीघ्रता से जाकर एक और खाट वहाँ डाल दी और उस खाट को सरकाकर छाया मे कर दिया।

आदेश्वर जाकर खाट पर बैठ गया। बोला—"हाँ, दादा! अच्छा क्या जीवित हूँ। सोचा, शेष दिन यहाँ आकर पूरा करूँ। इसीसे चला आया।"

"अच्छा किया। अपना घर अपना ही है।" शिवनारायन ने यन्त्रवत् कहा। रूपमती चली गई थी; फिर भी उसके द्वार की ओर तथा चारो ओर देख कर बोले—"पर इस नाइन के यहाँ....?"

आदेश्वर सब समझ गया। किसी को दोष देना उचित न समझा। बोला—"दादा, हम लोगो के लिए छुआछूत क्या? नगर मे रह आये है, दिन भर काम करने के बाद चूल्हा फूँकने की हिम्मत नही रहती। ढाबे में मे खाना होता है। वहाँ कौन जाने बाँभन है कि चमार। तीसों जाति खाती है।"

शिवनारायन आदेश्वर की इस धृष्टता से चकित हो गये। ऐसे भयानक सत्य को न छिपाना, न उसके लिए लज्जित होना! उन्होंने तत्काल फल निकाल लिया। उन्होंने उसके कर्म को उसकी शारीरिक अवस्था से जोड़ दिया। समझ लिया कि यह जो उसका अंग-भग हुआ है, इसका कारण उसका यह अधरम ही है। जो धर्म से गिर जाता है; धर्म उसे अछूता नही छोड़ता। ट्रंको मे क्या है, वे केवल यही देखना चाहते थे। ऐसे भतीजे के निकट बैठने की उन्हे तनिक भी इच्छा नही थी। पर उठने की इच्छा होने पर भी वे उठ न पा रहे थे। भय भी था कि रूपमती के द्वार पर इस बुढापे मे बैठा कोई उन्हे देख न ले। पर वे ट्रक! वे ही उन्हे बाँध कर रख रहे थे।

कुछ क्षण बीते। दोनो स्तब्ध। आदेश्वर को यह शान्ति भारी ज्ञात हुई। पूछा—"दादा, कोई नई बात हुई है गाँव मे?"

शिवनारायन ने सोचा—इसे गाँव की बात से मतलब? पर उत्तर देना चाहिए। और उन ट्रंको को देखने की इच्छा तभी पूर्ण हो सकती है जब आदेश्वर की सदिच्छा उन्हे प्राप्त हो। अन्यथा रूपमती सब दबाकर रख चुकी होगी। बोले—"हाँ, बहुत दिनो से कुछ नहीं हो रहा था, पर आज-कल एक घटना हो गई है।"

"क्या?" ग्राम्यजीवन मे आदेश्वर को रुचि जगी।

"रामावतार के छोटे लड़के ने कारिन्दे के थप्पड़ मार दिया है और अब वह फौजदारी...।" इसके बाद पूरा हाल उन्होंने उसे सुना दिया।

आदेश्वर ने बड़ी रुचि दिखाई। उसे लगा कि नगर छोड़कर उसे कोई विशेष हानि नहीं हुई है, वहाँ वह मजदूरों मे भाषण देता था, यहाँ किसानों मे देगा। वर्ग-संघर्ष कहाँ नही है? दलित पीडित सभी स्थानो पर है। वह लेटा था उठकर बैठ गया।

"आगे क्या होगा, दादा?"

"होगा क्या? रामसरन को जेल हो जायगी। उसका भाई पहले ही अलग हो गया है। बुढ़ापे मे रामावतार की मट्टी खराब होनी थी, वह

होगी। मेरा बेटा यदि ऐसा करता तो मै उसकी ओर देखता तक नही; पैरवी करना तो दूर रहा। भला भैया, तुम्ही बताओ; कारिन्दा यहाँ के राजा हैं। ज़मीन-जगह सब के मालिक है। पटवारी उनके है। नही भई, राजा से वैर नही चल सकता। चक्की के पाट के नीचे दाने की क्या बिसात ?"

आदेश्वर बोला नही। दादा की बात सुन ली। उसने सोचा—हमारे राष्ट्र-निर्माता इन लोगो के कन्धे पर राष्ट्र बनाने जा रहे है। जो अपने पुत्र के लिए कष्ट सहने को प्रस्तुत नही वे राष्ट्र के लिए क्या कष्ट झेलेंगे। उसने नयन मूँदे और पुन. लेट गया।

शिवनरायन ने सोचा—ट्रंको मे क्या है, कैसे ज्ञात हो ? वे घर जाकर क्या उत्तर देगे।

तभी आदेश्वर के मन मे एक विचार जगा। गाँव मे आने से भोजन-प्राप्ति की समस्या उसका पीछा नही छोड़ेगी। उसे भोजन का प्रबन्ध करना ही होगा। कमाना ही होगा। वह उठा, घर की ओर चला। शिवनारायन उसके पीछे-पीछे। यदि वह इस समय अपने ट्रंक खोले तो वह सब देख पायेगे।

रूपमती उसके सामान को ठीक से लगा रही थी।

"लाना, जरा ताली देना।"

रूपमती ने गुच्छा आदेश्वर के हाथ मे दे दिया। शिवनरायन ने देखा—आदेश्वर ने सब कुछ रूपमती को सौप दिया है। उनका सिर घूमने लगा पर वे खड़े रहे।

आदेश्वर ने बड़े ट्रंक का ताला खोला। उत्सुकता शिवनरायन मे लहरा गई। वे दृष्टि गड़ाकर उसमे देखने लगे। देखा—उसमे कुछ घास जैसी रेशेदार साफ-साफ वस्तु भरी है। एक कोने मे कुछ कपड़े रक्खे है। वे स्वच्छ थे; मूल्यवान भी जँचे।

आदेश्वर ने सींकों का एक अधबना टोप निकाला और दो तीन औज़ार। शिवनरायन सोच रहे थे कि आदेश्वर वस्तुओ को उलटे-पुलटेगा, तो उन्हे

और भी देखने को मिलेगा। पर उसने उसके बाद ट्रंक बन्द कर दिया। तानी रूपमती के सामने फेंक दी।

बायें हाथ से वस्तुओं को सँभाल वह खाट पर आ बैठा। शिवनरायन की इच्छा तत्क्षण वहाँ से चले जाने की थी। पर आदेश्वर इस सामान का क्या करेगा, यह देखने की उत्सुकता वे दबा न सके। शिशुत्व वृद्धावस्था मे पुन: अवतीर्ण होता है।

आदेश्वर ने बाये पैर की अँगुलियो से टोप को पकडा, शिथिल दाहिनी अंगुलियाँ उसकी सहायता करने लगी। वह बाये हाथ से शीघ्र ही तेज़ी से टोप बुनने लगा।

उसके इस कौशल को शिवनरायन देखते रहे। पूछा—"आदेश्वर क्या करोगे इसको बुनकर ?"

"बेच दूँगा। अब मुझसे और कोई काम नहीं होता, तो यह सीख लिया है।"

शिवनरायन को लगा कि आदेश्वर के प्रति प्रारम्भ से ही विरोध भाव रखकर उन्होने अपनी हानि ही की है। अपने घर रहता तो ट्रंकों मे जो है वह अपना होता। इस मज़दूरी की आय भी उन्हीं के घर मे आती। भूमि बाँट देने की बात उठती ही नही।

उनकी इच्छा हुई कि उससे घर चलने को कहे। पर अब वह नाइन के हाथ का खा चुका है। समस्त गाँव यह समाचार जानता है। वे कह नही सके।

सोचा—प्रायश्चित्त किया जा सकता है! वह गंगा-स्नान कर आये, ब्राह्मण-भोजन करा दे।

पर वे यह उस समय उसे सुझा न सके। ज्यो-ज्यों उसके हाथ शीघ्रता से चलते देखते त्यों-त्यों उन्हे आन्तरिक कष्ट अनुभव होता। उसके हाथ चलते गये, जैसे कि वे शिवनरायन के हृदय पर चल रहे हो। उनका कष्ट बढ़ता गया, पर धीरे-धीरे पीड़ा असह्य हो गई।

विचार आया कि गाँव में इसे खरीदेगा कौन ?

पूछा—"ये कहाँ बिकेंगे ?"

"नगर से कोई न कोई आकर ले जायगा। मै प्रबन्ध कर आया हूँ। अथवा मै ही चला जाऊँगा।"

शिवनरायन की पराजय सम्पूर्ण थी। आदेश्वर को पैसे प्राप्त ही होंगे। वह परकटा होने पर भी उनसे अधिक उड़ सकता है। उनकी पीड़ा घनीभूत होकर उनके मस्तिष्क मे भर गई। उन्हें लगा कि वे वहाँ बैठे न रह सकेंगे। वे उठ खड़े हुए और बिना कुछ बोले वहाँ से चले गये।

द्वार से रूपमती और खाट से आदेश्वर उन्हें देखते रहे।

रूपमती जाकर आदेश्वर के निकट खड़ी हो गई। आश्चर्यचकित नयनों से उसके शीघ्रता से चलते हाथो को देखती रही। यह केवल पढ़ा-लिखा ही नही, कैसे-कैसे काम जानता है।

पूछा—"यह क्या बना रहे हो ?"

"टोप।"

"टोप ?"

"हाँ।"

"किसके लिए ?"

"क्यो, तुम्हारे लिए। तुम पहनोगी नही ?"

रूपमती लज्जित हो गई। उसके कपोलो पर अरुणिम छा गई।

उसके इतने मनुष्य हैं पर कभी किसी ने उससे टोप पहनने की बात नही कही।

"नही, ठीक बताओ।" उसने प्रसन्नता से उसके कार्यव्यस्त चेहरे को देखते हुए कहा।

"ठीक ही तो बताया है। आओ, देखूँ तुम्हारे सिर पर ठीक बैठता है या नही ?"

रूपमती की तीव्र इच्छा वहाँ बैठ जाने की हुई। वह स्थान खुला था। भीतर संकोच था, वह एक डग पीछे सरक गई।

"भागती क्यों हो ? अब मैं तुम्हारे यहाँ आ गया हूँ तो टोप पहिनाये बिना जाऊंगा नही।"

रूपमती आनन्द मे नहा उठी। उससे किसी ने इस प्रकार की बात नही की थी। वह आकर उसकी खाट के निकट बैठ गई। दो क्षण उसके पैरो की पकड़ को हाथ की चाल को और दृष्टि की सतर्कता को देखती रही। बोली—"सच बताओ, इसका क्या करोगे ?"

"यह काम है जो मै करता हूँ। इसे नगर मे बेच दूँगा। जो मजदूरी मिलेगी, उससे अपना निर्वाह होगा।"

"तुम बाज़ार मे बेच आओगे ?"

रूपमती को अभी पूर्णतया विश्वास नही हुआ।

"क्यो नही ? तीन वर्षो से मै यही कर रहा हूँ।"

"कितना मिल जाता है ?"

"यदि अच्छी तरह काम किया जाय तो चालीस-पचास रुपये मास मे बच सकते है।"

रूपमती मे स्वाभिमान जाग उठा। उसे जीवन मे नवीन द्वार खुलते दिखाई पड़े। उनके सम्मुख विस्तृत खुले मैदान थे, जहाँ वायु मे दुर्गन्ध, विलासिता और अपवित्रता न थी।

"तो तुम मुझे यह काम सिखा दोगे ?"

"सीखोगी ?"

"हाँ।"

"क्या-क्या सीखोगी ? पहले पढ़ना सीखोगी या टोप बुनना ?"

"दोनों साथ-साथ। फिर दोनो जने बैठकर टोप बुनेंगे और एक-साथ नगर में जाकर बेच आयेंगे।"

रूपमती ने यह कह तो दिया। पर उसका चेहरा लाल हो आया।

"तो जरूर सिखाऊँगा तुम्हें। मैं बुनता हूँ, तुम देखो। ध्यान से देखना ही सीख लेना है।"

तब वह वह बुनने लगा। रूपमती देखने लगी।

उसके सम्मुख भविष्य का पवित्र पट फैला हुआ था। वह अब प्रतिष्ठित नारी जीवन बिता सकेगी।

५

रामाधीन को पृथक कर देने से रामावतार की गृहस्थी में एक नवीन समस्या का प्रवेश हुआ। अब तक घर के भीतर का सब प्रबन्ध रामाधीन की बहू करती थी। पर अब सहदेई से यह आशा नहीं की जा सकती थी।

किसोरी बड़ी थी; सब भार उसी पर आ पड़ा। फिर भी घर मे जबतक कोई बड़ी-बूढ़ी न हो बात बनती नही।

आन्तरिक प्रबन्ध मे कोई कठिनाई नहीं थी। भोजनादि ठीक समय पर मिल जाता था। घर को सफाई, पशुओं की देख-भाल सब हो जाती थी। पर जब दूसरे घरो से इस घर के सम्बन्ध की बात आ पड़ती थी, तो कठिनाई होती थी। सहदेई इस विषय मे विशेष सहायक होने की उत्सुकता नही दिखाती थी। ससुर के विरुद्ध उसका अभियोग यह था कि उन्होंने सम्पत्ति के तोन न करके चार भाग क्यों किये? अपने लिए एक भाग क्यो रक्खा। जब वे अपने प्यारे दो बेटो के साथ रह रहे है तो क्या वे बेटे उन्हे खाने को नहीं देंगे?....

उसके ये विचार मन मे ही न रहे। परिवार मे क्या, आधे गाँव मे व्याप गये। वे इतने शक्तिशालो हो गये कि रामावतार को बहू के सामने अपनी स्थिति रखने को विवश होना पड़ा।

शिक्षक के सम्मुख बालक की भाँति वे बोले—"बहू, रामाधीन मेरा सब से पहला बेटा है। सब से अधिक प्यार मैंने उसे ही किया है। जब उसी ने मुसीबत के समय मुझ से अलग हो जाने को उत्सुकता दिखाई तो बता मैं और किस पर विश्वास करूँ? वृद्धावस्था मे रामविलास और रामसरन ने यदि भोजन न देकर मुझे घर से निकाल दिया, तो मै कहाँ भीख माँगता फिरूँगा। मै उस चौथाई को छाती पर रख कर तो ले नहीं जाऊँगा। मरने के बाद वह भी तुम्ही लोगों का है।"

सहदेई कुछ बोली तो नही, पर उन्हे ज्ञान हो गया कि वह सन्तुष्ट नही हुई है। उसकी ज़िद यही रही कि जो बेटे प्यारे है, वही खाने को क्यो नही देते। उसे इस पर विश्वास नही हुआ कि रामाधीन को कभी उन्होने प्यार किया है। वे अब अर्द्ध-वैरी मे परिवर्त्तित हो गये थे।

रामावतार इन दिनो विशेष चिन्तित इसलिए थे कि पुलिस ने रामसरन पर अभियोग कठोर लगाया था। उसका कहना था कि यदि अन्य लोग बीच-बचाव न करते, कारिन्दे को न बचाते, तो यह रामसरन उन्हे जान से मार डालता।

सज़ा तो होगी ही, इसमे सन्देह न था, पर कम और अधिक का प्रश्न था। वैजंती थी कि रो-रो कर मरी जा रही थी। उसका रोना देख वृद्ध की छाती और भी फटती। जो साहस वे बटोरते थे, वह बहू की दशा देख छूट जाता था। वकील के लिए रुपयों की चिन्ता अलग सवार थी।

हरेकृष्ण ने कहा—"आदेश्वर नगर से आया है। इतने दिनो तक रहा है। वह कदाचित् कुछ काम की सलाह दे सकेगा।"

रामावतार सोचता था कि इस मुकदमे मे यदि वह माथुर को कर पाता तो....। वह सब से बड़ा वकील है। यह कदाचित् उनके जीवन का अन्तिम मुकदमा है। इससे आगे वे जीना नही चाहते।

अपने आदर्शों को उन्होने अपने ही हाथों खण्डित होते देखा है, और अधिक देखने के लिए वे पीड़ित नही रहना चाहते। बस एक बार रामसरन को बचाकर ला पाते। उनके जीवन की यही अन्तिम साध थी।

रामावतार को अनुभव हो रहा था कि यह झगड़ा दूसरे झगड़ो से भिन्न तल पर है। अन्य झगड़े आपसी थे, प्रायः दीवानी से सम्बन्ध रखते थे। यह है फौजदारी, शासक और शासित के बीच। शासक की प्रतिष्ठा का प्रश्न था; शासित का अपराध कुछ तो था ही।

वे अनुभव कर रहे हैं कि उनके इष्टमित्रों की संख्या मे कमी होने लगी है। लोग उनके निकट आते सकुचाते हैं। रामाधीन का अलग हो जाना भी प्रायः इसी का द्योतक है। जो उनके साथ है, उनके आस आता जाता है,

वही कारिन्दा के विरुद्ध है ? ऐसे व्यक्ति को अपमानित करने, हानि पहुँचाने, कष्ट देने की अलिखित और अकथित आज्ञा कारिन्दा के सिपाहियों को मिल जाती थी। वे तदनुसार कार्य प्रारम्भ कर देते थे!

दो दिन हुए हरिकृष्ण को एक सिपाही, पुलिस का नही कारिन्दे का, बुलाने आया।

"कारिन्दा साहब ने बुलाया है।"

अभी सूर्य पूर्णत. निकल नहीं पाये थे। वह तत्काल कपड़ा पहन तैयार हो गया। हरवाह से कहा— 'भई, तू खेत पर चल। मै आ रहा हूँ।"

गढी मे पहुँच सिपाही ने कहा—"पण्डित, बैठ जाओ। कारिन्दा साहब अभी आते है।

हरेकृष्ण खाट पर बैठ गया। सिपाही नारियल गुड़गुड़ाने लगा। बैठे-बैठे हरेकृष्ण को कई घण्टे हो गये। दोपहर होने को हुआ। खेत मे आवश्यक कार्य था।

"अरे महमूद, कारिन्दा साब कितनी देर मे आयेंगे ?"

"बैठे रहो पण्डित, अभी आते ही होगे।"

और महमूद वहाँ से उठकर चला गया।

हरेकृष्ण की वहाँ बैठे-बैठे विचित्र दशा हो गई। उसे एक-एक क्षण महीने के समान बीत रहा था। कारिन्दे का भय था जो उसे वहाँ बाँधे हुए था। यदि वह वहाँ से उठकर चला जाता है तो पता नहीं कि वे उससे कितने क्रुद्ध हो जायँ।

वह बैठा रहा। उसने मेज़ का और टूटी गद्देदार आरामकुर्सी को देखा, जिस पर बैठने का अधिकार अपनी उपस्थिति मे कारिन्दा सा'ब को, और उनकी अनुपस्थिति मे केवल उनके सम्बन्धियों को था। उसकी दृष्टि मेज से दूर बिखरे उन मोढ़ों पर गई। जिनके पैरों का चमडा कट चुका था और जिनके सरकंडे वर्षों से घिसते चले आ रहे थे।

साधारण ग्रामीण के बैठने के लिए भूमि थी या दो खाटें।

कोई वहाँ और था नही। अकेला हरेकृष्ण बैठा असाध्य रोगी की

भाँति मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे कष्ट होता था, भीषण कष्ट होता था, तड़प-तड़प उठता था। पर मौत न आती थी।

उसने अपनी दृष्टि ऊपे भगवान् की ओर प्रार्थना के लिए उठाई और वह जाकर उस भवन के दो शहतीरों के ऊपर लगी पैंतालीस कड़ियों में अटक गई। वह उन्हे गिनने लगा।

वे कड़ियाँ एकदम साफ, सीधी और चिकनी थीं। गोल रंदे द्वारा उनके किनारों पर हल्की रेखाएँ अंकित थी। उन विशालकाय शहतीरों की लम्बाई चार बडे-बडे कमल-पुष्पो द्वारा पाँच भागों मे विभाजित कर दी गई थी।

पैंतालीस कडियाँ उसने गिनी। खरीदने वालों ने उन्हे गिना था, बढइयो ने उन्हे गिना, फिर छोटे इंजीनियर और राजों ने उन्हे गिना, और उसके पश्चात् जो कोई अभाग्य का मारा उनके नीचे बैठा उसने उन्हे गिना। ऐसे लोगो ने उन्हे एक बार नही, दो बार नहीं; बार-बार गिना है। उन कडियो के साथ विचित्रता यह है कि पैंतालीस होने पर भी प्रत्येक गिनती मे वे पैंतालीस नहीं होती। उनकी संख्या चालीस और पैंतालीस के बीच कम ज्यादा होती रहती है। हरेकृष्ण ने बार-बार ध्यान लगाकर उनकी ओर देखा। और झुँझला-झुँझलाकर अपने संख्या-ज्ञान को उनके विरोध में उपस्थित किया।

तनिक-सी आहट हुई और उसका ध्यान उसी ओर चला गया। हृदय उछल पड़ा। कारिन्दा सा'ब आ गये, अब उसे छुट्टी मिल जायगी।

पर जिस ओर से वह शब्द आया था, उस ओर दृष्टि डालने पर ज्ञान हुआ कि वहाँ दीवार में कोई मार्ग नहीं है। तीन-चार हाथ ऊँची दो खिड़कियाँ हैं और कारिन्दा सा'ब उसकी उपस्थिति मे, उछलकर उन खिडकियो से न कूदेंगे। ध्यान से देखने से ज्ञात हुआ कि खार लगी दीवार की एक परत गिर पड़ी है और उसे ही उसने कारिन्दा समझ लिया है।

बैठे-बैठे-दोपहर हो गई पर कारिन्दा साहब का पता नही। महमूद

पर वैसे ऊठकर चल देते । कोई बहाना उठ जाने का निकाल लेते । इस तरह यह परिवार गाँव अछूत बन गया । पर सहानुभूति प्राय: सब की उनकी ओर ही थी । क्योंकि वह उनमे था और उसने गाँव की प्रतिष्ठा के लिए हाथ उठाया था ।

उनकी, बडे-बूढ़ो की, प्रतिष्ठा इन अधिकारियो ने धूलि मे मिला रक्खी है जो बिना गाली बोलना नही जानते, जो मनुष्य नही समझते, जो अपने पिता के समान वृद्धों से पशुवत् व्यवहार करते है ।

उन्हीं के विरुद्ध रामसरन ने हाथ उठाया था । उस दिन समस्त गाँव मे प्रसन्नता की लहर दौड़ गई थी ।

गाँव की आत्मा घुट रही थी । ऊपरी शान्त आवरण के नीचे भीषण विस्फोटक कसमसा रहे थे, मन ही मन भडक रहे थे ।

कौन-कौन शासन-यन्त्र के विरुद्ध है यह जानने के लिए अधिक व्यक्तियो की सेवाओं को कारिन्दा साब ने स्वीकार किया था । किसी ने सेवाओं के परिवर्तन मे धन स्वीकार किया था, किसी ने भविष्य मे स्थायी नौकरी का आश्वासन माँगा था और किसी ने इस ढंग से कारिन्दा साब की मैत्री जीत लेने की धृष्ट योजना बनाई थी ।

खेत कौन-से दो व्यक्ति साथ गये, गूलर के वृक्ष के नीचे कौन बातें कर रहे थे, ताल में पशुओं को पानी पिलाते समय कौन-कौन उपस्थित थे, यह सब समाचार, पूरे ब्यौरे के साथ, कारिन्दा साब को प्राप्त होते । अपराधी सेवा में बुलाये जाते और उन्हे उचित आदेश तथा चेतावनी दी जाती थी ।

इस व्यवस्था के परिणाम-स्वरूप गाँव मे किसी व्यक्ति को दूसरे का विश्वास न रहा । प्रत्येक दूसरों को कारिन्दे का व्यक्ति समझने लगा ।

किसी समाज को नष्ट-भ्रष्ट या पराजित करने को इससे घातक दूसरा अस्त्र आज तक आविष्कृत नही हुआ है । कारिन्दे ने कुशल अनुभवी शासक की भाँति उसका प्रयोग किया और फिर प्रसन्नता से समाचार सुना कि रामावतार का परिवार गाँव में अकेला और असहाय बना दिया गया है ।

मुकदमा कायम हो चुका था। पुलिस अपनी कार्रवाई कर चुकी थी। हत्या का प्रयत्न प्रमाणित करने की सब चेष्टाएँ हो रही थीं। थानेदार और कारिन्दा को पूर्ण विश्वास था कि रामसरन को वे लम्बी सजा दिलवा सकेंगे। सजा इतनी लम्बी कि समस्त गाँव उससे भयभीत हो जाय और भविष्य मे शासन-यन्त्र के दाँतों में उँगली देने का कोई साहस न करे।

फिर भी कारिन्दा साहब चाहते थे कि रामावतार आकर उनके सम्मुख रोये, गिडगिड़ाये, रामसरन के लिए क्षमा-याचना करे, और वे उसकी प्रार्थना ठुकरा देने अथवा झूठे व्यर्थ आश्वासन देने का आनन्द प्राप्त कर सकें। वह चाहते थे कि उन्हे वह आनन्द प्राप्त हो, जो बधिक को जीव की हत्या करने से पहले, उसे खिलाने-पिलाने और उसके साथ खेलने से प्राप्त होता है।

गाँव से यह अलगाव रामावतार को खल रहा था। यदि वह युवक होते तो कदाचित् इतना अनुभव न होता; वृद्धावस्था मे इतना दु:ख और अकारण उन्हे भाया नही। वह प्राय: टूट से गये और अपनी असहाय अवस्था पर रो पडे। पर जब भी वह रोये, अकेले मे रोये। अपने रोने को उन्होने परमात्मा से भी छिपाने का यत्न किया। रोना लज्जा का विषय है यह उनकी आत्मा अत्यन्त कटु अनुभव से जानती थी।

इस अवस्था मे लज्जा ही उनकी रक्षक थी। लज्जावश लजवंती झुक जाती है। पर जो भीतर तक लजालु है वह तन कर खडा हो जाता है। उसे विपत्ति के सामने झुकने मे लज्जा आती है।

रामावतार रोते-रोते अचानक रुक गये। अँगौछे से आँसू पोंछ डाले। और फिर अपने सम्मुख देखा। धूप फैली थी और उसके बीच-बीच बादलों की छाया थी। मन में उठा कि जीवन धूप-छाँह है। यदि बादल आ जाते है तो धूप क्या चमकना बन्द कर देती है? यदि वे समस्त कष्ट नही सहेंगे तो कौन सहेगा? क्या होगा? अधिक से अधिक रामसरन को पाँच-सात वर्ष की जेल हो जायगी। पर उसकी बहू जो है। यही सबसे कोमल और कठिन स्थान है।

उनके मस्तिष्क मे एक जटिलता और अस्पष्टता भरी हुई थी; यह जैसे धीरे से, चुपके से, घुल गई। आलोक का धब्बा उस अन्धकार मे दृष्टि-गोचर हुआ। वे अपना कार्य करेगे। फल ? उसका क्या करना; वह उनके हाथ मे नही है। होइहै सोइ जो राम रचि राखा। को करि तर्क बढावै साखा।

उन्होंने निश्चय कर लिया कि वे भावुकता छोड़ काम करेगे। वे जानते है कि इस प्रकार का निश्चय अधिक चलेगा नही। जहाँ वे वैजंती को रोते सुनेगें, वही घर से निकल अकेले बैठ स्वयं रोने लगेगें, पर निश्चय तो कर ही लेना चाहिए कि अब वे न रोयेंगे।

गाँव मे उन्हे सहायता देना तो दूर कोई सम्मति देने को भी प्रस्तुत नही। स्वयं रामाधीन अब उनसे बचकर रहता है। वह कारिन्दा के भय मे आजकल जैसे परम भयभीत है। उन्होने निश्चय किया कि वे अब जातिच्युत आदेश्वर के पास जायँगे ; वह कदाचित् क्या करना चाहिए, इस विषय मे उनकी सहायता कर सकेगा।

आदेश्वर इस मुकदमे में रुचि ले रहा था। पर अब तक उसके निकट इस परिवार मे से कोई नहीं गया था। अन्य लोग भी विशेषतया उसकी ओर आकर्षित नहीं हुए थे। लोगों का आकर्षण प्रारम्भ हुआ ही था कि एक बात चल पड़ी।

आदेश्वर के आ जाने से रूपमती को उसका पत्नीत्व प्राप्त हो गया। वह सिपाहियों की इच्छा-पूर्ति की सामग्री नहीं रह गई। आदेश्वर का लूला-लँगड़ा व्यक्तित्व समर्थ व्यक्तित्व था।

कारिन्दा सा'ब आदेश्वर के आगमन से प्रसन्न न थे। वह बाहर से आया था। और गाँव से बाहर व्यक्ति प्राय: सभी स्थानो मे अपने अधिकारों के प्रति जग पड़ा है। जागरण का आलोक गाँव मे पहुँचने से ग्रामीणो के नेत्र खुल जाने का भय था। जहाँ प्रकाश नहीं होता वहाँ जीवों के नेत्र होने पर भी उनमें दृष्टि का विकास नहीं होता। भय था कि आदेश्वर गाँव मे कहीं दीपक न बन जाये।

एक बात और थी। उन्होंने विचारा था कि आदेश्वर को अपने पास बुलावे और उसे ऊँच-नीच समझावें। पर जब से उन्हे यह ज्ञात हुआ कि उसके पास पुस्तके अंग्रेजी की है और वह धारा-प्रवाह पढ सकता हैं तब से वे इस विषय मे संकुचित हो गये है।

उनके बडे भाई का लडका एफ० ए० में पढ रहा हैं। उसकी छुट्टी होने वाली हैं। वह हो जाये तो वे उसे बुलवायेंगे और तभी आदेश्वर को भी। ज्ञात हो जायगा कि वह कितने पानी में हैं।

भय था कि आदेश्वर जब इतना पढा है तो अग्रेजी लिख भी सकता होगा। अंग्रेजी मे लिखी अर्जियां से वे घबराते थे। उन्हे विश्वास था कि अंग्रेज़ी की अर्ज़ियों पर हाकिम अवश्य और शीघ्र विचार करते है। वे हाकिमो को प्रभावित कर सकती है। यही सब सोच-विचार कर उन्होंने इस आस्तीन के साँप को अभी छेडना उचित नही समझा।

वह पड़ा रहता है तो पड़ा रहे। उसके कारण उनके मुंशी, उनके सिपाहियो को यदि असुविधा होती है तो भले हो।

आदेश्वर टोप बुन रहा था और रूपमती ध्यान से देख कर सीख लेने का प्रयत्न कर रही थी। उसने भी कुछ रेशे हाथ मे लेकर उन्हे मोडना प्रारम्भ किया था, तभी पुलिस के दो सिपाही आधी वर्दी पहिने उधर आये।

उन्होंने चार मोटी-मोटी पुस्तकों को बगल मे विचित्र-शरीरी आदेश्वर को टोप बुनते देखा तो ठिठक गये। कुछ क्षण खडे रहे फिर एक ने रूपमती को संकेत से बुलाया।

रूपमती ने शान से उसे कुछ ठहरने का संकेत किया। वे लोग आदेश्वर की रूप-रेखा देखते उसके हाथ-पाँव की चाल अवलोकन करते खडे रहे।

रूपमती देर लगा कर उनके निकट गई। दूर ले जाकर उन्हे समझा दिया कि वह अब साहबों के लिए टोप बनाती हैं। वे ही लोग उसे खाने को देते हैं। यह लँगडा लूला व्यक्ति उन्हीं का आदमी है।

साहबो का आदमी है, यह गाँव के सिपाहियो के लिए बड़ी बात थी।

ऐसे आदमी को उन्होंने सलाम करना उचित समझा और अपने विचार को कार्यान्वित किया। आदेश्वर ने कुशल-प्रश्न पूछ उन्हे विदा दी।

उसकी तटस्थता एवं वार्तालाप की ऊँची रीति देख उन्हे रूपमती के कथन पर विश्वास हो गया। विवशता हृदय मे मचल कर रह गई। यदि वह साहब का आदमी न होकर और कोई होता तो वे पराजित होने पर भी उसके प्रति द्वेष रखते; पर साहब का मनुष्य होने से उनकी पराजय इतनी पूर्ण हुई कि आगे द्वेष रहने को कहीं स्थान न रह गया।

७

इतने दिन आदेश्वर को आये हो गये, रामावतार कभी उसके निकट न गये। कारण प्रत्यक्ष था। उसने न केवल नाइन के हाथ का खाया था वरन् नाइन के यहाँ रह रहा था। गाँव वाले कहते थे कि उसने नाइन को घर में डाल लिया है।

ऐसे मनुष्य से कोई भी प्रतिष्ठित प्राणी सम्बन्ध न रक्खेगा। हाँ, आदेश्वर यदि उसके स्थान पर आता तो वे कभी उसे दुतकारते नही।

गावों मे लोगो को टहलने की आवश्यकता अनुभव नही होती इसलिए वहाँ टहलने की बात करना हँसी उडवाना है। पर आदेश्वर वहाँ टहलने जाता था और उसके जाने की दिशा थी रामावतार के घर को ओर नही, दूसरी ओर। वह बैसाखी के सहारे उन खेतों के चारों ओर चक्कर काटा करता था, जो उसके थे और अब भी उसके हो सकते थे।

वह उन आम्र वृक्षो के चारो ओर मँडराया करता था जिनपर चढ-चढ कर उसने आम तोडे थे। वह उस गूलर को स्पर्श कर पुलकित होता जिसके खोंते में से उसने छोटी मक्खियों का मधु तोडकर खाया था।

इस भ्रमण में वह पुरातन घटनाओ और उनसे सम्बन्धित व्यक्तियो का स्मरण कर हृदय भर-भर लाता। जब वह लौटता तो उसके नयन प्रायः आँसुओं से तर होते थे। वह आँसू बहाता और नित्यप्रति उसी ओर घूमने जाता।

लौटने पर रूपमती उसके अश्रु पोंछती । दोनों दुखी अपना भूत स्मरण कर रो देते । कुछ क्षण पश्चात् एक दूसरे के करुण अश्रुओं मे वे अपनी-अपनी शान्ति पा जाते थे । आँसुओ के समुद्र मे भावना का आश्रय ले वे सहानुभूति से मुस्करा पड़ते । फिर रूपमती का रामायण-पाठ महुवे के तेल के दीपक के प्रकाश मे प्रारम्भ हो जाता था । वह अशोक वाटिका मे विरहिणी सीता की कथा को बार-बार बढ़ती और उसमे एक अपूर्व शान्ति का अनुभव करती । इस पतित समझे जाने वाले घर में दो खण्डित जीवन पुर्ननिर्माण की चेष्टा कर रहे थे ।

रामावतार को इस समय भी आदेश्वर के निकट जाने मे एक झिझक अनुभव हुई । पर आवश्यकता होती है जो इस प्रकार की सब बाधाओं को तोड़ डालती है ।

रामावतार ने देखा कि आदेश्वर खाट पर लेटा है परिश्रम से थककर । एक पूर्ण टोप उसके निकट रक्खा है, दूसरे का प्रारम्भिक भाग बन रहा था । उसकी खाट से कुछ दूर रूपमती एक नवीन नीव पर चुन रही थी । रूपमती के द्वार पर होने की कल्पना कर वे सिहर उठे ।

उन्हें देख रूपमती उठकर खडी हो गई । दौड़कर एक खाट उठा लाई । बिछाकर बोली—"बैठो, काका ।"

रामावतार बैठ गये । रूपमती की ओर और फिर लेटे आदेश्वर की ओर देखा ।

"अभी लेटे है । पाँच मिनट मे उठ बैठेंगे । जगाने की आवश्यकता न पडेगी । तुम बैठो ।"

रामावतार बैठ गये । यदि सन्ध्या तक भी बैठा रहना पड़ेगा तो वे बैठेंगे ।

पीपल के पेड़ से छनकर धूप के चकत्ते भूमि पर बिखरे हुए थे । उनमें से एक आदेश्वर के पैर पर पड रहा था । यहीं उस लुज पैर पर रामावतार की दृष्टि जम गई ।

उन्होंने देखा आदेश्वर कितना अपाहिज है । पर फिर भी जिये जा

रहा है। और अपने जीवन से कितना सन्तुष्ट है। उन्हे उमसे ईर्ष्या-सी हो आई। इतनी प्रसन्नता! इतना मन्तोष!

वे देख ही रहे थे कि आदेश्वर जैसे उनकी दृष्टि के गुदगुदाने से जाग गया। नेत्र खोले तो रामावतार को बैठा पाया।

"पालागी काका!"

रामावतार ने आशीष दिया।

"बाल-बच्चे सब प्रसन्न?"

"कहाँ आदेश्वर! रामसरन की विपत्ति तो तुमने सुनी ही होगी। अब तो जैसे समस्त गाँव वैरी हो रहा है। सूझ नही पड़ता कि क्या करूँ?"

"हाँ, काका, जमीदार के विरुद्ध कौन खडा होगा, पर साहस नही छोड़ना। यदि जायेगा तो रामसरन भले काम के लिए जेल जायेगा।"

रामावतार का बूढा हृदय कृतज्ञता से भर गया। गॉव में आदेश्वर ही पहिला व्यक्ति है जिसने खुलकर रामसरन की प्रशंसा की है।

इस प्रशंसा ने वृद्ध को अत्यधिक बल प्रदान किया। आदेश्वर के प्रति वह अपने को खोल देने को लालायित हो गया।

"भैया, जेल हो चाहे जो हो; जो होना है वह तो होगा ही। पर एक बार कोई अच्छा वकील उसके लिए कर पाता। भलीभाँति लड़ लेने पर मेरी साध पूरी हो जाती।"

उनका हृदय भर आया।

"काका, घबराओ नहीं; भगवान् सब भला ही करेगा। यदि नगर मे रामसरन ने ऐसा कार्य किया होता तो आज सहस्त्रों आदमी उसके पीछे होते पर यहाँ गाँव मे तो लोग चूहों की भाँति डरते है।"

"क्या करें भैया, रहना यहीं है; राजा है; चाहे जितना दुख दे सकते हैं।"

आदेश्वर चाहे उसकी विशेष सहायता न कर सके, पर इतने वाक्यों ने उनके हृदय से भार उतार लिया। उन्हे अपने पर विश्वास हो चला। उन्हें ज्ञात हो गया कि वे अकेले नहीं है। एक व्यक्ति है जिससे वे अपने

मन की बात निःसकोच कह सकते हैं; जो इस सम्बन्ध मे सहानुभूति और साहस के दो शब्द कह उनका उत्साह बढ़ा सकता है; जिसे साधारण भय छू तक नहीं गया है। उस समय उन्हे लगा कि निर्भीकता का मूल्य कितना बड़ा है।

पूछा—"भैया, अब क्या करना चाहिए? तुम सहर मे रहे हो तुम्हे ...।"

उन्हे लगा कि आदेश्वर उन्हे बीच में टोकना चाहता है; उन्हे यह भी लगा कि यह कहकर वे अपनी सासारिक अनभिज्ञता प्रकट कर रहे है। उन्होने सुधारा।—"मैंने मुकदमे लड़े है फौजदारी के नही, दीवानी के।"

आदेश्वर ने कहा—"काका, सब ठीक हो जायगा। यहाँ मेरी जानपहिचान विशेष नही है। कानपुर होता तो मै आपकी पर्याप्त सहायता कर सकता था। फिर भी जैसा काम रामसरन ने किया है, उसके पीछे जनता को खड़ा होना ही चाहिए।"

रामावतार को आदेश्वर बहुत अच्छा लगने लगा। ऐसे पुरुष का अंग-भंग परमात्मा ने क्यों किया? कदाचित् इसीलिए कि वह यहाँ आकर उनका साहस बढ़ाये।

आदेश्वर ने रामावतार की ओर देखा और ध्यान से देखा। वह उनसे एक ऐसा प्रश्न करने वाला था, जिसका ठीक उत्तर देने मे मनुष्य की आन्तरिक बाधा बहुत अधिक होती है। पर वही प्रश्न वास्तव मे रामसरन की रक्षा की कुजी है।

रामावतार ने सिर ऊँचा किया। उसके नेत्रो से नेत्र मिलाये, फिर निकट खड़ी रूपमती की ओर देखा।

आदेश्वर ने पूछा—"काका, यह बताओ, तुम इस मुकदमे मे कितना रुपया व्यय करना चाहते हो? कचहरी में काम या तो गहरी जान-पहिचान से होता है या रुपये से।"

यह प्रश्न रामावतार के लिए भयंकर था।

वे अब तक सब कुछ रामसरन पर वार देने की बात सोच रहे थे।

पर अब प्रश्न तुरन्त वार देने का था। वे तीव्रता से विचारने को विवश हुए। पहले भी इस प्रश्न पर उन्होंने विचारा था, पर इतनी स्पष्टता से नही।

इस कठिन और जटिल प्रश्न के हल को वे उस समय तक टालते रहे हैं जब तक कि अन्तिम निर्णय का समय नही आ गया और निर्णय तुरन्त करना आवश्यक नही हो गया।

दो हल थे और दोनों सुलझावों से दु.ख और पीडा का निकास होता था। इस विषय मे गोलमाल कर वे अपने को ठगते रहे थे। जो वे नही कर सकते थे, वही करने की उनकी इच्छा थी और समझते थे कि कर ले जायँगे। पर अब वे अपने को असमर्थ पा रहे थे।

उन्होंने सोचा था कि रामसरन के लिए के अपना सर्वस्व दाँव पर लगा देगें। घर बेच देगें, भूमि गिरवी रख देगें, ऋण ले लेगे। पशु बेचेगे और मुकदमा लडेगे। रुपया पानी की तरह बहायेंगें और रुपया ऐसा तरल है जो पीछे अपना चिन्ह छोड़ जाता है। यह प्रभाव रामसरन के पक्ष मे होगा।

पर अब आदेश्वर को उत्तर देना है। वे कितना रुपया व्यय करना चाहते हैं; अर्थात् कितना रुपया व्यय करने की सामर्थ्य उनमे है। इच्छा और आकाक्षा का प्रश्न है नहीं है, प्रश्न है सामर्थ्य का। उन्हें वास्तविकता पर उतरने को बाध्य होना पड़ा।

जिस हतोत्साहक फल को वे टालते रहे थे वह सम्मुख आ गया। उन्होंने देखा कि रामसरन जेल जाकर कुछ वर्षो मे छूट आयेगा। पर जो भूमि वे कुछ सौ मे गिरवी रक्खेगे उसके छूटने की विशेष आशा सुदूरवर्ती भविष्य मे भी नहीं दिखाई पड़ती। और फिर यदि गिरवी ही रखनी है तो वे खायेंगें क्या? रामसरन की बहू क्या खायेगी? एक दुःख के ऊपर भूख का दुःख और आरोपित होगा।

रामसरन और भूमि के बीच जब द्वन्द्व हुआ तो उन्होने निर्णय रामसरन के विरुद्ध किया। परिवार के लिए व्यक्ति के स्वार्थ की बलि देनो उन्होने स्वीकार की।

जब वे भूमि गिरवी रखने नही जा रहे है तो उनकी धनराशि अत्यन्त

मीमित हो गई। उन्होंने आदेश्वर की वेधक दृष्टि से अपने को बचाते हुए उत्तर दिया—"भैया, बहुत कुछ करके डेढ़ सौ रुपये से ऊपर जाने की मेरी सामर्थ्य नही है।"

आदेश्वर ने सुन लिया; कुछ कहा नही।

इससे रामावतार को सन्तोष हुआ। वे सोच कुछ और रहे थे। उन्होंने सोचा था कि डेढ़ सौ सुनकर आदेश्वर कहेगा; जिस पुत्र ने तुम्हारे लिए अपना जीवन झोंक दिया, उसके लिए आज तुम डेढ़ सौ रुपये लेकर कचहरी चले हो। डेढ सौ रुपये में क्या होगा ?

यह सत्य है कि डेढ़ सौ रुपये मे क्या होगा ? पर वे आगे असमर्थ थे।

आदेश्वर ने कहा—"काका, फौजदारी का मुकदमा है। रुपया अधिक खर्च होगा। परन्तु तुम चिन्ता न करो। रामसरन की रक्षा सारे गाँव का कार्य है। रुपया आयेगा और हमसे जो कुछ हो सकेगा सभी उसकी रक्षा के लिए किया जायगा। तुम वकील करो और अच्छा वकील करो।"

आदेश्वर के चेहरे पर एक तेज आ गया। श्रमिकों के उस नेता की आत्मा पीड़क शक्तियों की चुनौती पाकर युद्ध को खडी हो गई। उसकी आन्दोलन-संचालन और सगठन शक्ति को जैसे किसी ने खोदकर सर्पिणी की भाँति जगा दिया हो।

उसने निश्चय कर लिया कि रामसरन की रक्षा का उत्तरदायित्व समस्त गाँव का है, उसका है और वह इस उत्तरदायित्व को स्वीकार करेगा।

वह गाँव मे मरने के लिए आया है। यदि मरते-मरते अपने अन्तिम श्वासो से वह इस गाँव की मृतप्राय आत्मा को अनुप्राणित कर सका तो उसके प्राणों की अन्तिम घडियाँ अकारथ नही जायेंगी।

बोला—"काका, तुम चिन्ता न करो। भगवान् की कृपा से सब ठीक होगा। महावीर स्वामी कार्य मे सहायता देंगे।"

रामावतार का मस्तक कृतज्ञता से झुक गया। आदेश्वर के मुख का उत्साह उसे छू गया। भगवान हरेकृष्ण का भला करे, जिसने उन्हें आदेश्वर के पास परामर्श के लिए आने की सम्मति दी।

वे आदेश्वर के प्रति सहानुभूति से भर गये। उनके कुल का यह लड़का! यदि इसने नाइन के हाथ का न खाया होता तो..।

बोले—"आदेश्वर भैया, तुम पुन बिरादरी में सम्मिलित हो सकते हो, केवल गंगा-जल पान करके ...।"

आदेश्वर ने काका की सहानुभूति का आदर किया। बोला—"काका, आपको मेरी चिन्ता है यह मेरा सौभाग्य है। और किसी ने इस विषय में कभी मुझ से कुछ नहीं कहा, और इसका कारण यही है कि किसी की रुचि मुझमें नहीं है।"

"ऐसा क्यों कहते हो आदेश्वर ?"

"काका, इस व्यवहार के लिए मैं दुखित नहीं हूँ। बेड़ियों से जकड़े प्राणी किसी को समझने तक के लिए स्वतन्त्र नहीं है। इस गाँव में जो स्वतन्त्र व्यक्ति था वही तो मेरा उपकार कर सका। जो समस्त गाँव भी मिलकर कदाचित् मुझे न दे सकता वह उस अकेले व्यक्ति ने दिया मैं गाँव को उसी व्यक्ति के नाते जानता हूँ। उसका अपमान कर मैं गाँव का अपमान नहीं करूँगा। गाँव की सम्पूर्ण ममता मुझे उससे ही प्राप्त हुई है।"

रामावतार ने कहा—"पर आदेश्वर, जो कुल की रीति है, जो मर्यादा युगों से भगवान् राम के समय से चली आई है। उसे भंग करना क्या उचित है ?"

"दादा, स्वतन्त्र मानव को संयत रखने के लिए किसी समय मानव-मानव के बीच इस दीवार की आवश्यकता रही होगी यह मैं मानने को तैयार हो सकता हूँ, पर आज वह दीवार हमारी बेडी बन गई है, जो न हमें चलने फिरने से, वरन् साँस लेने से रोक रही है। मैं मृत्यु के निकट हूँ, परमात्मा ने मेरे लिए उस दीवार को, उस बेडी को तोड़ दिया है, जिससे मैं निर्भीकता से खुले हाथों अपने शत्रुओं का सामना कर सकूँ।

"जो बेड़ियाँ एक बार मै गिरा चुका, उन्हे दुबारा क्यों पहिनूँ। आज मैं स्वतन्त्र होकर मान और प्रतिष्ठा की बात कर सकता हूँ, पर बेड़ी पहिन कर मै केवल जेलखाने की व्यवस्था की बात ही कर सकूँगा।"

"भई, जो तुम कह रहे हो, वह मेरी समझ मे नही आता। पता नही पढ-लिखकर तुम लोगो के मस्तिष्क मे विकार आ जाता है, अथवा हमी लोग भटके हुए है।"

"काका, आज भले ही समझ मे न आये, पर एक दिन तो समझ मे आना ही होगा। बिना समझ मे आये सरेगा नही। पर इसके लिए तुम्हें चिन्तित होने की आवश्यकता नही; मैं भी चिन्ता नही करता। जिसका काम है वह सँभालेगा। इस समय प्रश्न है—रामसरन की रक्षा का।"

इतना कह आदेश्वर विचारमग्न हो गया। ललाट पर सलवटें पड़ गई। उसने ऊपर पीपल के पत्तो मे से झाँकते सूर्य को जैसे विचार-प्रवर्तन के लिए देखने की चेष्टा की और फिर जैसे एकान्त मे सोचने के लिए नयन मूँद लिये।

रूपमती सब सामान और पुस्तके भीतर पहुँचाने के पश्चात् भोजन की प्रस्तावना मे जुटी थी और रामावतार इस विचित्र मूर्ति और आत्मा की मुद्राएँ ध्यानपूर्वक देख रहे थे, एवं उनमे से साहस और धैर्य बटोरने का प्रयत्न कर रहे थे।

तभी एक ओर से पैरों की चाप सुन उन्होने मार्ग की ओर देखा और दूसरे ही क्षण छदम्मी साहु और रामधन को अपने निकट खड़ा पाया।

वे कुण्ठित हो गये। उनका रूपमती के द्वार पर पाया जाना अनहोनी बात थी। पर आज वह सम्भव हो रही थी। उसके साक्षी भी थे तो गाँव के छदम्मी साहु और रामधन, जो अपने-अपने क्षेत्रो मे प्रमुखतम थे।

वे जडवत् बैठे रहे, जैसे किसी ने समस्त प्राण उनमे से सूँत लिये हों।

"भई आदेश्वर, घूमने नही चलोगे ?" आदेश्वर ने गम्भीर चिन्तन से नयन खोले। एक मुस्कान उसके मुख पर दौड़ गई। जैसे कि सेनापति को मोरचा जमाने योग्य स्थान मिल गया हो।

वह उछलकर खाट पर बैठ गया और वैसाखी कंधे के नीचे लगाता हुआ बोला—"क्यो नही ?"

फिर रामवातार से कहा—"काका, तुम जाओ, मैं सोच विचार लूं तो कल मिलेगे। परमात्मा चाहेगा तो बात बन ही जायगी। मनुष्य का प्रयत्न और परमात्मा की दया दोनो ही चाहिए।"

"चलो साहु।" उसने वैसाखी टेक कुछ उछाल के साथ खडे होते हुए कहा। "भई रामधन, उससे तनिक कह दो कि घूमने जा रहे है।"

और रामधन ने द्वार पर जाकर जोर से सुनाया·

"बाबू घूमने जा रहे है। तुमसे कहने को कहते है सो कह दिया।"

८

हरिनाथ को ज्वर चढा, तो वह एक दिन मे न उतरा। दो दिन मे भी न उतरा, तब उसे अनुभव हुआ कि उसकी यह बीमारी लम्बी है। इसमे उसे कोई सशय न था कि इस बीमारी का सम्बन्ध रामविलास से है; इसलिए वह रामविलास पर क्रुद्ध हुआ, अत्यन्त क्रुद्ध हुआ।

जब उसकी बीमारी की दशा मे कारिन्दा सा'ब और पटवारी सा'ब उसे देखने के लिए पधारे तो उसने सकेत अवश्य कर दिया कि रामावतार के लडकों का दिमाग आजकल सातवें आसमान पर हैं, किसी को कुछ समझते ही नहीं।

कारिन्दा सा'ब ने समझा कि वह रामसरन के विषय मे कह रहा है। उन्होंने इस विषय मे और भी जागरुकता से प्रयत्नशील होने की सोच ली और हरिनाथ द्वारा बारम्बार इसी अर्थ के वाक्यों के दुहराये जाने पर ध्यान न दिया। केवल यही कहा—"तुम जल्दी से ठीक हो जाओ। उसकी चिन्ता न करो। रामावतार और उसके लड़कों के लिए मैं अकेला ही बहुत हूँ।"

हरिनाथ स्वयं अपनी मार की बात न कहकर यह चाहता था कि वे लोग उसकी बीमारी का सम्बन्ध उस परिवार से जोड़ ले। पर इस विषय में उसे सफलता न मिली।

गाँव के वैद्य ने चोट के स्थान पर ज्वर की औषधि दी और उससे हरिनाथ को विशेष लाभ न हुआ।

दो दिन पश्चात् हरिनाथ को अपनी चिकित्सा की अशुद्धता ज्ञात हो गई। वैद्य जी की उस औषधि के साथ हल्दी-दूध का सेवन प्रारम्भ किया।

औषधि चल रही थी। चोट का प्रभाव जा रहा था। हरिनाथ का क्रोध रामविलास पर तो था ही रामाधीन पर बुरी प्रकार उबल रहा था। इस बार अच्छा होकर वह रामाधीन को वह पाठ पढायेगा कि वह जीवन भर याद रक्खेगा। उसने सोचा था कि रामविलास की उस दिन वहाँ उपस्थिति रामाधीन के षडयन्त्र के कारण थी। उसने उसने उसके लिए यह फन्दा तैयार किया था। वह उसे इसका प्रतिफल पूर्ण रूप से देगा।

सेवक भी इसमें सम्मिलित है। पर वह चमार है, छोटा है उसके मुँह लगना। पर उसे चाहिए था कि वह उसकी रक्षा करता। क्या पटवारी का साला और कारिन्दे का बहनोई नहीं है। सेवक जानबूझ कर उस समय वहाँ से हट गया था। वह उसे ध्यान में रक्खेगा और देखेगा।

स्वयं रामविलास के प्रति उसका क्रोध तो बहुत था, पर विवशता भी उतनी ही थी, और इसी कारण क्रोध और भी अधिक हो गया था। पर वैयक्तिक रूप से उसे हानि पहुँचाने की बात उसके मस्तिष्क में न आसकी। वह उसके दुर्बल सम्बन्धी को हानि पहुँचाना निश्चित कर स्वस्थ होने के लिए उतावला हो गया। इस बार वह इस परिवार को छोडेगा नहीं। बिलकुल पीस देगा। ऐसा कि भविष्य मे किसी को हरिनाथ के सम्मुख खड़े होने का साहस न हो।

६

रामाधीन पृथक कर दिया गया तो प्रथम धक्का समाप्त हो जाने पर उसे अपना अकेलापन अनुभव हुआ। अपने शेष परिवार के प्रति एक द्वेष भावना उसमे जाग्रत हो गई। जब उसे अलग ही कर दिया गया है तो

उसे पिता की लाज से क्या वास्ता ? यदि उन्होने उसकी नही रक्खी तो उसे कौन गरज पड़ी है ।

अभी पृथक होने की सब बारीकियाँ पूरी नही हुई । भूमि का बँटवारा होना है । उस समय पटवारी की सहानुभूति बड़े काम की वस्तु हो सकती है । हरिनाथ का उसने उपकार किया । उसने एक भार गेहूँ उसे चाहे पिट-कर ही दिया हो, पर दिया है । उसे उपकार ही उसने समझा ! हरिनाथ से उसके परिवर्तन मे कार्य लिया जा सकता है ।

हरिनाथ पटवारी का साला है । यदि वह अपने बहनोई से रामाधीन के विषय मे दो शब्द कह देगा तो पटवारी की सहानुभूति उसकी ओर हो सकती है । यह सहानुभूति पाने के लिए उसने हरिनाथ से और भी सम्बद्ध होना उचित समझा । जो कल तक उसका प्रबल वैरी था आज वह प्रबल हितकारी दिखाई पडने लगा ।

हरिनाथ दूसरे दिन एक और बोझ लेने आया होगा, इस ओर उसका ध्यान गया ही नही । गया भी तो उसने दबा दिया । यदि वह इस विपय मे किसी से पूछताछ करता है तो उसके द्वारा दिये गये गेहूँ की बात खुल जायगी । और आजकल, वह समझता है कि, रामावतार उससे क्रुद्ध है, उसके भाग मे से उतना गेहूँ काट सकते है ।

वातावरण मे उसने अनुभव किया कि कुछ रुपयों की उसके द्वारा लिये जाने की बात है । पर वास्तव मे वह क्या है, यह न रामविलास ने उससे कहा है न रामावतार ने ।

कुछ भी हो हरिनाथ की सहायता और सहानुभूति की उसे आवश्यकता है । इसलिए जब उसे हरिनाथ के बीमार होने का समाचार ज्ञात हुआ, तो वह उसे देखने जाने को लालायित हो गया ।

रामाधीन पर संसार का भार एकदम आ पड़ा था । वह सब कार्य चतुरता, सुचारुता के साथ कर सकता था । पर तभी जब कोई उन कार्यो का उत्तरदायित्व लेनेवाला उसके सिर पर हो । चाहे वह मिट्टी का पुतला ही हो ।

पर समस्त उत्तरदायित्व का भार अपने पर पा उसके पैर डगमगा उठे है। और वह तिनके का सहारा लेने को भी उद्यत है।

अपनी समस्त शक्ति भूल वह हरिनाथ की सहायता-याचना के लिए प्रस्तुत हो गया। वह सहायता सच्ची होगी या झूठी, इस ओर उसका ध्यान न गया। एक बात उसने देखी कि गाँव में मानपूर्वक जीवित रहने के लिए हरिनाथ की मैत्री उसे आवश्यक है।

वह कुर्ता पहिन अंगोछा सिर से लपेट उससे मिलने को निकल पड़ा।

रामाधीन हरिनाथ के यहाँ पहुँचा। हरिनाथ को स्वप्न में भी ध्यान न था कि रामाधीन उसे देखने आयेगा। वह मानव प्रकृति का अच्छा जाँचने वाला था। उसे यह समझते देर न लगी कि रामाधीन इतना दबाये और पीडित किये जाने पर भी यदि उसके निकट आया है तो अवश्य किसी काम से आया होगा।

'तो वास्तव में रामाधीन अलग हो गया है।' एक प्रसन्नता की तरग उसमे दौड़ गई। अब वह इसी परिवार के व्यक्ति को उसके विनाश-कार्य मे प्रयोग करेगा।

प्रथम दर्शन से उसका शरीर क्रोध से जल उठना चाहिए था पर उसने मुस्कराकर कहा—"आओ रामाधीन, बैठो।"

उसने देखा कि रामाधीन के मुँह पर चिन्ता है। वह किसी भार से दबा जा रहा है। स्वतन्त्र होने की प्रसन्नता उसे नही व्यापी।

"क्या हाल है ?" रामाधीन ने साधारण प्रश्न किया।

"आजकल मौसम खराब है। जुर है। दो-तीन दिन मे ठीक हो जायगा।"

"हाँ, जल्दी ही ठीक हो जाना चाहिए। तुम जैसे आदमी का अधिक समय रोगी रहना उचित नही।"

"कहो क्या अब अलग हो गये हो ?"

"हाँ, सोचा एक दिन तो होना ही है, अभी क्यो न हो जाऊँ !"

रामसरन के व्यय से भयभीत हो वह अलग हुआ है, अथवा और क्या

कारण था, यह कहते उसे लज्जा आती थी। हरिनाथ सब समझता था। वास्तविक बात नही, पर मोटे तौर पर वह उन लोगों में से था जो धन-लिप्सा से परिचालित अर्थशास्त्र की कल्पित मानव-मशीन के निकटतम है, धन जिनकी प्राय: सभी इच्छाओं और कार्यों को शासित करता है।

"अलग होकर तुमने ठीक ही किया। किसी की निभती नहीं। यदि तुम अभी अलग न होते तो घाटे मे ही रहते।"

रामाधीन ने साश्चर्य उसकी ओर देखा।

"मै ठीक ही कह रहा हूँ। तुमने चाहे यह सोचा न होगा। पर मै तो देख रहा हूँ कि भाई तुमने बुद्धिमानी का कार्य किया है।"

उसने लम्बी साँस ली। पसली मे ज़ो चमक उठी, उसने उसे राम-विलास के प्रहार का स्मरण करा दिया। रामाधीन पर उसके नयनो मे रक्त दौड़ पड़ा, पर उसने ओठ काट अपने को संयत किया।

"क्या पसलियों मे दर्द है?" रामाधीन ने पूछा।

"हाँ, कभी-कभी चमक उठती है।"

"ऋतु तो गरम है। फिर भी शरीर का क्या ठिकाना; रोग का घर है। ज्वर मे हवा लग गई होगी। सेंकने से ठीक हो जायगा।"

रामाधीन बोलता रहा और हरिनाथ लेटा, नयन अर्द्ध-मीलित कर बडे ध्यान से उसकी ओर देखता रहा।

उस दहलीज मे धूप के कुछ धब्बे खपरैल से छन कर आ रहे थे। रामाधीन की दृष्टि उन पर गई। उसे लगा कि वह समस्त स्थान एक अलौकिक रहस्य से पुता हुआ है। उसके शरीर मे सिहरन दौड़ गयी। उसे बलात् अनुभव हुआ कि वह गाँव के बडे घर में बैठा है—ऐसे मनुष्य के पास जो उसे सहानुभूति और सहायता देगा, जो गाँव में उसका आश्रय बनेगा।

हरिनाथ का अन्तरंग होना ही गाँव मे उसकी प्रतिष्ठा बढ़ा देने के लिए काफी है।

"रामाधीन, तुमने इस समय अलग होकर बड़ी बुद्धिमानी का कार्य

किया है। यदि अलग न होते तो एक मुसीबत मे फँस जाते। राजा सा'ब से झगडा मोल लेने के पश्चात्, तुम जानते हो, वे चुप नहीं बैठेंगे। कारिन्दा सा'ब राजा के आदमी है। कारिन्दा साब पर यदि कोई भी हाथ उठा देगा, तो बताओ वे गाँव का प्रबन्ध कैसे करेंगे ?''

रामाधीन ने स्वयं यही बाते सोची थी। उसने आत्म-कल्याण की दृष्टि से ठीक किया था। पर हरिनाथ के मुख से ये बाते सुनकर उसे लगा कि वह प्रसन्नता के बहाने उसे उसकी कायरता दर्शा रहा है। कष्ट सहने के भय से वह अलग हो गया है।

रामाधीन की आत्मा संकुचित हो गई !

हरिनाथ ने कहा—''बुद्धिमान लोग जो करते है वही तुमने किया। रामावतार रामसरन के लिए लड़ेगे। मैं कहे देता हूँ उसका कुछ फल नही निकलेगा। उनकी भूमि बिक जायगी। कर्जदार हो जायँगे और भूखो मरेंगे। जीत राजा की होगी। राजा को वैरी बनाकर कौन उनकी गवाही देने जायगा ?''

अपने परिवार की भावी हीनावस्था रामाधीन के सामने आ गई। वह अलग हो गया है; उसे सन्तोष हुआ। वह अलग हो गया है, चाहे किसी भी प्रकार से हुआ हो। वास्तव मे उसका भाग्य अच्छा है, जिसने इच्छा न रहते हुए भी उसे अलग करा दिया।

विनाश से बचने का जहाँ उसे आनन्द हुआ वहाँ विनाश की कल्पना ने उसे भयभीत भी कर दिया। उसे जँच गया कि राजा के विरुद्ध खड़े होकर उसके भाई और पिता अपना सर्वनाश करने के अतिरिक्त और कुछ नही कर सकेंगे।

हरिनाथ ने देखा, रामाधीन उसकी बातो से प्रभावित हुआ है। बोला—''अभी बँटवारा सब तो नही हुआ होगा। खेत बँटे नहीं होंगे। और जब तक पटवारी सा'ब और कारिन्दा सा'ब उस बँटवारे को स्वीकार न करले तब तक उसका कोई अर्थ नही।''

वह रुका। एक बार खाँसा और फिर नेत्र मूँदकर विचारमग्न हो

गया। नेत्र खोलने पर उसने देखा कि रामाधीन किसी विकट चिन्ता मे ग्रस्त हो गया है। वह जैमी चाह रहा है, वैसा स्थिति रामाधीन मे उत्पन्न हो रही है।

"जब तक बँटवारा पूरी तरह न हो जाय, भूमि तुम्हारे नाम न चढ जाय, तब तक उनके साथ तुम्हे भी पिसना होगा। इसलिए जितना शीघ्र तुम पटवारी सा'ब से अपना कार्य करा लो उतना ही अच्छा।"

रामाधीन को लगा कि हरिनाथ बिलकुल उसके मन की बात कह रहा है।

"इसीलिए तो दादा मै तुम्हारे पास आया हूँ। तुम जैसा कहो, वैसे करूँ।"

हरिनाथ ने देखा कि रामाधीन अब पूर्णत. उसके हाथ मे है। और भय-भीत करने के लिए बोला—"पटवारी सा'ब तो कदाचित् तुम्हारा काम करने को प्रस्तुत हो जायँ, पर कारिन्दा सा'ब क्या उसे होने देगे। वे तो सारे परिवार को अपना वैरी समझते है। आये थे कल, कह रहे थे, साँप को जब कुचलूँगा, तो क्या उसके बच्चो को आगे काटने के लिए छोड दूँगा?"

रामाधीन सचमुच काँप गया। यदि उसमे आत्म-विश्वास होता तो ऐसी बात न होती। उसने पूर्णतया हरिनाथ का आश्रय लेने का प्रयत्न किया था इसलिए बुरी प्रकार भयभीत हो गया। उसे लगा कि इस कष्ट से यदि कोई उबार सकता है तो वह हरिनाथ ही है। वह पटवारी का साला और कारिन्दे का बहनोई है। उसकी आत्मा गिडगिडा उठी। दीनता मुख पर आ गई।

बोला—"जैसे भी हो, दादा, मेरा काम तो करना ही होगा। मै तुम्हे छोडकर किसके पास जाऊँ?"

हरिनाथ ने उसकी मुद्रा देखी। अनुभव किया कि अब समय है। बोला—"रामाधीन, यह संसार है। कोई किसी का काम ऐसे ही क्या कर देता है? एक खत लिखवाते हो, लिखनेवाला दो पैसे रखवा लेता है।"

"तो दादा जो सोरह-बत्तिस आना हो वह मैं देने को तैयार हूँ।"

हरिनाथ की विजय पूर्ण थी। बोला—"कारिन्दा सा'ब को सोरह बत्तिस आना से क्या होगा ? मैं अपने लिए तो कुछ माँगता नही। मैं तो तुम्हे बिलकुल घर का आदमी समझता हूँ। जब कभी किसी वस्तु की आवश्यकता होगी और मैं माँगूगा तो मुझे विश्वास है, तुम नही न करोगे।" रामाधीन को एक महत्व अनुभव हुआ। वह हरिनाथ का अपना आदमी है। बोला—"दादा, तुम्हे भला किसी वस्तु को कैसे मना किया जा सकता है। जो कुछ है, वह सब तुम्हारी दया से ही तो है।"

"हाँ, तो मुझे कुछ नही चाहिए। कारिन्दा सा'ब इतने स कैसे प्रसन्न होगे। हाँ, पटवारी सा'ब को मैं इतने पर राजी कर सकता हूँ।"

रामाधीन का चेहरा उतर गया। उसे लगा कि उसका भाग भी शेष पारिवारिक भूमि के साथ बिकने जा रहा है। सन्तान और पत्नी के भूखो मरने का कल्पित दृश्य नयनो के सम्मुख आ गया।

"रामाधीन, निराश न हो।" हरिनाथ ने सान्त्वना दी। "निराश होने से कैसे काम चलेगा ? साहस करो और देखो कि कारिन्दा तुम्हारे खास आदमी हो जाते है, गाँव मे सब से पहिले तुम्हारा ध्यान रखते है।"

कारिन्दा सा'ब की इतनी अनुकम्पा-प्राप्ति रामाधीन के लिए स्वर्ग-सुख की प्राप्ति थी। वह उसकी कल्पना मे अपने आप को भूल गया। वह केवल यह जानना चाहता था कि उस स्वर्ग को हस्तगत करने के लिए उसे क्या करना पडेगा ?

"कोई कठिन कार्य वह तुम से करने को न कहेगे। यदि तुम इस मुकदमे मे उनकी सहायता कर सको तो बस फिर तुम्हे किसी प्रकार की चिन्ता न रहेगी। वे सब कुछ तुम्हारे लिए कर देगे।"

रामाधीन ने सोचा—मुकदमे मे सहायता ! यह तो वह सदा करने को तैयार है। इससे उसका क्या बिगडता है। वह शरीर का कठिन से कठिन काम कर सकता है, पर असमर्थ है तो वहाँ जहाँ पैसे की माँग है।

उसने आगे विचारना उचित न समझा। कैसी सहायता इसकी ओर

उसका ध्यान न गया। वह अब कारिन्दा का खास आदमी हो जायगा। औरों पर धौंस जमायेगा और अकड कर चलेगा।

उसे लगा कि यह सब जैसे हो गया। उसने भविष्य को भूत समझ लिया। हरिनाथ की ओर अब जिस दृष्टि मे उसने देखा उसमे कृतज्ञता के साथ एक महत्व और आत्म-विश्वास मिला हुआ था।

हरिनाथ ने यह ताड लिया। इतनी प्रसन्नता वह रामाधीन को अपने पास से नही ले जाने देना चाहता। बोला—"रामाधीन, जो कुछ मैंने कहा है, वह मेरा विचार है। कारिन्दा सा'ब तुम्हारी सहायता स्वीकार करेंगे या नही मैं नही कह सकता। वे समर्थ है। उन्हे और आदमी भी मिल सकते है। और फिर तुम रामावतार के पुत्र और राममरन के भाई हो।"

रामाधीन का चेहरा उनर गया।

"पर निराश नही हो। मै तुम्हारे लिए पूर्ण यत्न करूँगा। जो भले और सीधे है हरिनाथ से अधिक उनका हितू और कोई नही है।"

उमने चारों ओर से हिला-डुलाकर रामाधीन को बिलकुल अपनी मुट्ठी मे कर लिया। दुर्बल चरित्र रामाधीन इन आश्वासनों की आड मे उसके पहिले व्यवहार को बिल्कुल भूल गया।

उसे पूर्णतया विश्वास हो गया कि उसके स्वर्णिम भविष्य की कुँजी हरिनाथ के हाथ मे है। हरिनाथ उसके साथ वह करेगा, जो पिता भी नही कर सकेंगे। वह हरिनाथ का, ऐसे हरिनाथ का कृतज्ञ था। उसके चरणो मे वह अपना हृदय बिछा देने को प्रस्तुत था।

अपनी सफलता पर हरिनाथ को एक मुस्कान आई, पर पीड़ा की आह ने उसे छिपा लिया। वह कराहा। मुख फेर लिया। उसने जो किया है उससे दो काज साधे। रामाधीन की कृतज्ञता उसे प्राप्त हो गई, कारिन्दा सा'ब को भी प्राप्त होगी।

१०

रामाधीन के चले जाने पर सहदेई ने घर सूना देखा और बँटवारे के अन्याय को लेकर देवरानियों पर बरस पडी। उसकी दृष्टि मे सभी दोषी

थे। सभी ने उसके विरुद्ध पड्यंत्र रचा था। 'रामाधीन भोला है, कुछ नही।'

वह चीखी—"इधर आ री ननको, जानती नही कि वह अब तेरा घर नही है। दाढ़ीजार ने अच्छा-अच्छा भाग अपने लाड़ली-लाड़लो को दिया है और तुम्हे दिया है सड़ा भाग। तुम्हारे भाग ही ऐसे है। अन्धी! आँख से दिखाई नहीं पड़ता कि किसके कितना खर्च है, कितने खानेवाले है?"

किसोरी ने वैजती की ओर देखा। दोनो की दृष्टि ने कहा—लड़ने को फुकार रही है। पर चुप रहना ही अच्छा है।"

सहदेई ने देखा कि ससुर के समर्थन मे एक वाक्य भी बहुओ ने नही कहा। वह कुढ़ गई। कितनी घुन्नी है! नागिन है। इनके काटे का मंतर नही। अब उसने उनपर सीधा प्रहार किया।

"आजकल की बहुएँ कितना प्रपंच जानती है। ससुर को कैसा वश मे कर लिया है। कैसा मीठा-मीठा बोलता है। तभी तो आँखो पर पर्दा पड़ गया। जिसके खर्च है उसे तिहाई के स्थान पर चौथाई दिया और अपने लाड़लों के लिए अधिक छोड़ जाने का बहाना निकाल लिया। राम रे राम, ज़रा-सी छोकरियाँ और इतनी चालबाज़!'

वैजंती और किसोरी के नेत्र मिले। मंत्रणा हुई और मौन बना रहा।

ननको ने माँ की आज्ञा का अक्षरश पालन आँगन के दूसरे भाग से तुरन्त लौट आकर न किया। सहदई ने देवरानियो का क्रोध ननको पर उतारा। उसे पकड़ कर पीट दिया।

"कह दिया कमबख्त से कि उस ओर न जा। जिसने हाड़ तोडकर खून पसीना एक कर वर्षो से कमा-कमाकर खिलाया, उसे चार आना भर; और जो खेलते रहे, उसकी कमाई पर मौज मारते रहे, उन्हे बारह आने भर। परमात्मा सब देखता है। यहाँ चाहे कोई कैसा ही अन्याय कर ले, अन्त मे उसे पछताना होगा। परमात्मा दण्ड दिये बिना छोडेगा नही।"

उसने ननको के और भी निर्दयता से थप्पड़ लगाये।

किसोरी और वैजंती के मनोभाव उसकी ओर विशेष अच्छे न थे। वे

साधारण युवतियाँ थीं जो नारियों में परिवर्तित हो रही थीं। महदेई यदि उनसे जलती है तो वे भी उसे जलायेंगी।

वे आपस में न लड़ती हों, यह बात नहीं है पर इस जेठानी के विरुद्ध दोनों एक हैं।

किसोरी से रहा न गया, धीरे से, जैसे कि केवल वैजंती को सुनाकर कहा—"ऐसे पीटने से क्या होता है? जान से मार डाल।"

महदेई के कान इस ओर के प्रत्येक वाक्य को पकड़ लेने को तैयार थे। ये शब्द उससे बच न पाये। वे घी की भाँति आग पर पड़े।

इससे महदेई को एक सन्तोष हुआ। उसके वाक्य किसोरी को छू गये हैं। वह उसे बोलने को विवश कर सकी है।

उसके मन में ससुर और देवरों के विरुद्ध जो कुछ है वह इस वाग्युद्ध में उगलेगी। चीखी—"हाँ, मैं मार डालूँगी। मार डालूँ, यही तो रंडियाँ बैठी-बैठी मनाती हैं। जब जनेगी तो देखूँगी कि कैसे मार डालती है। मार कर देखे तो सही, तो पता चले कि मार डालना क्या होता है?"

अब किसोरी से संयम भाग चला। बोली—"कौन तुमसे कुछ कर रहा है। तुम भी सदा लड़ने को तैयार बैठी रहती हो। कोई बात न चीत। आ बैल मुझे मार!"

"हाँ, अब मैं आदमी नहीं रही बैल हो गई हूँ। समय की गति है। समय था, मैं मालकिन थी; तब कोई मुझे बैल-भैंस बनाती तो मैं रंडी की जीभ खींच लेती। दूसरे की कमाई जो खा-खाकर फूली है सब भुला देती।"

"जेठानी चुप रहो। क्यों बात बढ़ा रही हो?" वैजंती ने कहा।

"हाँ, यह नागिन बोली—खसम भाग से जेल में चक्की पीस रहा है। वह चला गया, अच्छा हुआ; मनमाना करने को छुट्टी मिल गई। खूब सिखा ले ससुर को। सिर पर चढ़ाकर नचायेगा। दाढ़ीजार को बुढ़ापे में क्या सूझा है!"

वैजंती तिलमिलाकर रह गई। इच्छा हुई कि खूब तेज उत्तर दे। पर तभी किसोरी ने उसका हाथ दबा दिया।

पीछे फिर कर देखा, रामविलास ने चारा लाकर डाला था। उसने घूँघट खीच मुँह फेर लिया।

महदेई ने सुनाया—"मै किसी से दबती नही हूँ।" रामविलास ने ध्यान न दिया।

बोला—"मै जा रहा हूँ, चारा काट कर पशुग्रो की सानी कर देना।"

वैजंती ने गड़ासा उठा लिया। कलह होते-होते रुक गया। ईर्ष्या और द्वेष की लपट पसीने मे लिपट कर बैठ गई। वैजंती के हाथ का गँडासा चरी पर गिरने लगा। और उसकी खरखराहट मे पशुशाला मे बैलो के कान खडे हो गये।

११

छदम्मी साहु हरिनाथ की सगति मे भंग पर व्यय करते थे और चाहते थे, कम से कम समझते थे, कि उनका उपकार माना जायगा। पर जब उस दिन उन्होंने अपने व्यय की खिल्ली उड़ाई जाती देखी तो वे स्वयं उदास, नही हरिनाथ से रुष्ट भी, हो गये।

उन्होंने निश्चय कर लिया कि जहाँ तक होगा, हरिनाथ की सगति से परे रहेंगे। ऐसे नीच के ऊपर वे अपनी सम्पत्ति व्यय नही करेंगे।

इस घटना के पश्चात् ही हरिनाथ अस्वस्थ हो गया। छदम्मी साहु अकेले से पड़ गये। ठाकुर शिवनन्दन सिह जो आते थे, वे हरिनाथ की चाटुकारी के लिए विशेष। जब हरिनाथ बीमार पड़ा तो वे उसके घर आने जाने लगे। और दूसरे दिन जब सन्ध्या समय रामधन साहु के यहाँ भंग घोटने पहुँचा तो केवल स्वयं को पाकर साहु को हरिनाथ और ठाकुर का अभाव अनुभव हुआ।

मन बहलाने के लिए दोनो जने साहु की बगीची को चले। भाग से बाहर चार सौ गज की दूरी पर एक बीघा के लगभग भूमि मिट्टी की ऊँची दीवार पर उगी सेहुँड पंक्ति से घिरी थी। उसमे आम, जामुन, महुवे और सहिजन के दो-दो तीन-तीन वृक्ष थे।

एक कोने मे बैठक थी और उसके सम्मुख ऊँचा चबूतरा। चबूतरे पर

ही कुआँ था जिस पर बगीची सीचने के लिए पुर चलता था। और डाल खींचने के लिये गडारी घूमती थीं।

अनार, अमरूद, शरीफे के भी कुछ वृक्ष, मौलश्री, हरसिंगार और राम बेल के फूलो के साथ थे। दस-पाँच पौधे गुलाब के भी थे, पर वे कहने के लिए ही। कभी फूलते नही देखे गये।

हतोत्साह हो दोनो जने वही छानने को जा रहे थे, कि मार्ग मे रूपमती के द्वार पर भी उन्हे आदेश्वर खाट पर बैठा हुआ मिला। उसके आने का समाचार वे सुन चुके थे।

आदेश्वर साहु से पाँच-सात वर्ष छोटा था। इतने दिनों का व्यवधान होने पर भी दोनो एक दूसरे को पहिचान गये। साहु को लगा कि आदेश्वर के शरीर का तेज आकर उसके मुख पर एकत्र हो गया है।

पूछा—"क्यों भई आदेश्वर, घूम फिर सकते हो या नही ?"

"खूब। घूमता-फिरता नही तो यहाँ तक कैसे आ जाता ?"

"तो चलो बगीची तक हो आये।"

निमंत्रण के शब्द पूर्ण होने से पहिले ही आदेश्वर उछल कर उनके साथ हो लिया।

साहु और आदेश्वर को मैत्री बढती गयी। दोनो ने एक दूसरे को पसन्द किया। और उस दिन साहु के आते ही आदेश्वर रामावतार से विदा ले उनके साथ चल दिया।

साहु भंग-प्रेमी साथी चाहते थे और आदेश्वर आदर्श साथी जान पड़ा।

आदेश्वर अपाहिज है, ब्राह्मण है, उस पर व्यय करना पुण्य है।

उन्होने ज्यों-ज्यो आदेश्वर से वार्तालाप किया त्यो-त्यो उसका प्रभाव उन पर बढ़ता गया। तीन ही चार दिनो मे उन्होने अपने को आदेश्वर का शिष्य स्वीकार कर लिया।

उसके प्रति श्रद्धा उनमे उमड़ आई। यह एक मनुष्य है जिसने वास्तव मे ससार देखा है, समझा है; जिसने अच्छा से अच्छा और बुरे से बुरा सब सहा है। और सब से विशेष बात यह कि इतना जानने पर भी वह सहज

नम्र मानव है।

हरिनाथ और आदेश्वर की तुलना उसके मन मे अपने आप ही हो गई। उन्होंने पाया, कि उनमे तुलना के योग्य कुछ है ही नहीं। कहाँ आदेश्वर, कहाँ हरिनाथ !

इन्ही दो-चार दिनो मे उनके और रामधन के लिए वह न जाने किस, पर अकाट्य, क्रिया से 'बाबू' हो गया।

क्रियापद आदरवाचक हो गये और उसके चारो ओर उन्हे एक सौम्य तेज की गरिमा अनुभव होने लगी। उन्हे पाकर अब साहु को किसी और को पाने की आवश्यकता ही न रही।

तीनो जने बगीची पहुँचे। रामधन ने दौड कर एक मूढ़ा आदेश्वर के लिए और खाट साहु के लिए रख दी। फिर स्वयं अपने वस्त्र उतार भंग तैयार करने मे जुटा।

आदेश्वर जब मशीन की चपेट मे आकर अस्पताल मे पड़ा था तो उसने निश्चय किया था कि वह अब राजनीति मे भाग नही लेगा। पर अस्पताल से निकल उसने जो जीवन का भाग नगर मे बिताया, उसमें उसे अनुभव हो रहा था कि सब से अधिक भाग राजनैतिक कार्यों का था। वहाँ वह वर्ग-चेतना का दार्शनिक नेतृत्व करता रहा था दिन की बातों मे पंचानबे प्रतिशत का सम्बन्ध इस से होता था।

गाँव को ओर चलते समम उसने निश्चय किया था कि वह अब अपने को राजनीति और वर्ग-संघर्ष से निकाल लेगा। वह गाँव मे शान्ति से रहेगा। किसी झगडे मे न पडेगा।

पर रामसरन के मुकदमे के विषय मे सुनते ही उसका पुरातन व्यसन जाग पडा। उसे लगा कि गाँव की राजनीति मे भाग लेना उसके लिए अनिवार्य है। वह इस प्रकार अन्याय नही देख सकता। उसने अपनी इस भूख को मन मे ही सुरक्षित रक्खा।

आज जब रामावतार काका उससे इस विषय मे सम्मति लेने आये हैं, तब उसे लग रहा है कि परमात्मा स्वयं उसे इस संघर्ष मे खींच रहे है।

उनकी यदि यही इच्छा है तो वह मरते समय उनकी इच्छा का निरादर नही करेगा। परम आस्तिक की श्रद्धा से वह अपना बलिदान गाँव मे इस संघर्ष के निमित्त देने को प्रस्तुत हो गया। वह अपनी पुरातन दीप्ति के साथ कार्यक्षेत्र मे आने की बात सोचने लगा।

रामसरन की रक्षा का प्रश्न अब उसका अपना प्रश्न बन गया। रामसरन का कुचला जाना, गाँव की जन-सत्ता का कुचला जाना है; वह जन-सत्ता, जो अभी पूर्णतया जगी भी नही है। वह यह दु:खद दृश्य देख नही सकेगा। नीद मे कुलबुलाती इस जनसत्ता को किसी प्रकार घसीटकर विरोधी शक्ति के सम्मुख खडी करेगा। उनके सघर्ष मे, दुर्बल शक्ति की पराजय मे भाग लेगा।

वह देख रहा था कि यह पराजय आवश्यक है। यदि कंगाल जनशक्ति को सफल होना है, तो सफलता की, युद्ध प्रणाली, शैली सीखने के लिए उसे पराजय की अवस्था मे से जाना होगा। ऐसी पराजय उसे अपनी शक्ति और दुर्बलता का बोध करायेगी। आगामी सफलता की नींव डालेगी।

एकाकी आदेश्वर अपनी आत्मा के सम्मुख राजा और उसके सहायकों के विरुद्ध रामावतार के कंधे से कंधा मिला कर खडा हो गया। इस खड़े होने की क्रिया मे उसका भाग विचारना मात्र था। और इस समय विचारना था कि आवश्यक धन कैसे प्राप्त हो।

चिन्तामय आदेश्वर ने मोढे के सहारे से अपनी बैसाखी चबूतरे पर गिराते हुए कहा—"साहु, इस रामसरन के मामले मे तुम्हारी क्या राय है?

साहु ने इस विषय में कभी विचारा नहीं था। वे चकित, भ्रमित से उसकी ओर देखते रह गये।

आदेश्वर ने कहा—"आप मेरा प्रश्न समझे नहीं?"

साहु पर गहरा प्रभाव पड़ा। कैसा मनुष्य है यह। मुख देखकर भाव पढ़ लेता है।

"हाँ बाबू। मैं समझ नहीं पाया।"

"यह कि न्याय किसके पक्ष में है?"

"यह तो बाबू कचहरी मे मालूम हो जायगा।"

"साहु, अब तो आप मेरा प्रश्न समझ रहे है। कचहरी का न्याय नही; मै पूछता हूँ कि वास्तविक न्याय किस ओर है ?"

साहु उत्तर देते हुए झिझके।

"कहना कठिन ही है।" उन्होंने बचते हुए कहा। "जिस बात का निर्णय करने के लिए हाकिम इतना समय लेते है, उसका निर्णय हम तुरन्त कैसे कर सकते है ?"

"यदि आप को हाकिम बना दिया जाय तो आपको जो कुछ गाँव के विषय मे, कारिन्दा के विषय मे ज्ञात है, उससे आपका निर्णय क्या होगा ?"

साहु ने चारो ओर देखा और एक भय उनकी दृष्टि पर छा गया।

"हाँ, साहु ?"

"यह तो सत्य ही है कि रामसरन ने कारिन्दा साब को मारा है और उसका दण्ड उसे मिलना ही चाहिए।"

"ठीक, पर क्यो मारा ? कारिन्दा साब बच्चे नही थे, जो दावात गिराने अथवा कलम तोड़ने पर उन्हे मार दिया हो।"

साहु पा रहे थे कि बिल्ली का मुँह उन्हे पकड़ना ही पड़ेगा। यह नवीन दृष्टिकोण उनके सम्मुख था।

"हाँ, यह बात विचारणीय अवश्य है।"

"अवश्य ! नही आवश्यक है, अनिवार्य है। कानून अपराध पर ही नही, अपराध के पीछे भावना पर भी ध्यान देता है। इसलिए यह प्रश्न और भी अधिक आवश्यक है।

"कारिन्दा साब को गाली देने की आदत है; पहले पुलिस मे रहने के कारण उनका हाथ भी छोटे लोगों पर उठ जाता है।"

"तो उन्हें यह ध्यान नहीं रहता कि जिससे वे बात कर रहे है वह भी मनुष्य है, उसके भी हृदय है। गाली और धमकियों से जिस प्रकार का कष्ट उन्हे सम्भव है, वैसा कष्ट दूसरों को भी हो सकता है।"

"आप ठीक कहते हैं पर ऐसा तो न जाने कब से होता आता है। जो इनके पुरखा सहते आये है, वे आज ये लोग क्यो न सहे? सहना चाहिए।"

साहु ने आदेश्वर की ओर देखा। वे समझ नही पा रहे थे कि आदेश्वर क्या चाहते है, और आदेश्वर चाहते थे कि उनकी इच्छा साहु की इच्छा बन जाय। अभी वे संचालक है और साहु उनके अस्त्र है। वे साहु को संचालक और स्वयं को उनके हाथो मे आयुध बनाना चाहते थे।

सरलता मे बोले—"साहु, यह तो कोई तर्क नही है। जो होता आया है इस दलील मे दम नही है। पहिले देश मे मुसलमानो और हिन्दुओं का राज था; आज अंग्रेजो का राज है; पहिले लोग तीर्थ-यात्रा पैदल, टट्टुओं पर या बैलगाड़ियों मे करते थे, आज रेल बन गई, पहिले वस्त्र के बदले मे अन्न देते थे, आज रुपया देते है, पहिले कारखाने नही थे, आज कारखाने है; पहिले सती होना पुण्य कर्म था, आज वह अपराध है, पहिले कन्या-वध क्षम्य था, आज वह हत्या है, पहिले सिगरेट और दियासलाई कहाँ थी, आज वे दोनो है, इसलिए जो था वही रहना चाहिए यह कैसे माना जाय? जब अन्य क्षेत्रों मे परिवर्त्तन हो रहा है तो यहाँ क्यों नही?"

साहु ने आदेश्वर के इस तर्क की शक्ति को अनुभव किया और प्रथम स्थिति से एक डग पीछे हटते हुए कहा—"वास्तव मे कारिन्दा सा'ब की ज्यादती है। पुत्र के सम्मुख पिता को गाली देना ठीक नही था।"

"गाली देना ही ठीक नही था, मिलो मे सहस्रो मजदूर काम करते है, हजारो रुपये वेतन के अफसर होते है, पर क्या मजाल कि छोटे से छोटे को भी गाली देकर बोले। वहाँ मनुष्यता आ गई है। उसे गाँवो मे भी आना होगा।"

"पर उसे लायेगा कौन?"

"वह जो युगो मे परिवर्त्तन करते है: मेरे और आप जैसे साधारण मानव। ऐसी महान शक्तियो के सम्मुख पडकर मानव मे दानव की शक्ति आ जाती है। वह इस संघर्ष को आगे बढ़ाता है, जिसमे से धीरे-धीरे मानवता निकल कर विजित स्थान पर प्रस्फुटित होती जाती है!"

साहु आदेश्वर की ओर देखते रह गये । बाबू जो कुछ कह रहे थे वह उनके लिए नवीन था । क्या साहु इस गाँव मे शुभ परिवर्त्तन लाने का श्रेय ले सकते है । उन्हे विश्वास नहीं होता था कि इतनी क्षमता उनमे है । पर आदेश्वर बाबू कह रहे हैं कि वे इतने सक्षम है ।

वे कुछ निश्चय न कर पाये । एक संशय हुआ, बोले—"एक कारिन्दा के हट जाने से क्या होगा, दूसरा आयेगा वह भी ऐसा ही करेगा ।"

"हमे किसी कारिन्दे या राजा से व्यक्तिगत कोई द्वेष नही है । हमारा विरोध तो इस पुरातन योजना और प्रणाली से है और चूंकि सभी योजनाएँ और प्रणालियाँ व्यक्तियों पर आश्रित हैं, इसलिए व्यक्तियों के विरुद्ध प्रहार होता ही है, जैसे कि मलेरिया के कीटाणुओ को न पकड कर हम उनके निवासस्थान मच्छरों को नष्ट कर डालते हैं । उद्देश्य है मच्छर नष्ट करने का नही, मलेरिया के कीटाणु नष्ट करने का ।"

और कुछ वह कहने जा रहा था कि बात चीत मे रोक देनी पड़ी । देखा हरिनाथ और रामाधीन चले आ रहे है ।

हरिनाथ अभी बीमारी से उठा था और साहु से मिलने को लालायित था । साहु उसकी आवश्यकता-पूर्ति के एक साधन मात्र अवश्य थे, पर फिर भी हरिनाथ के हृदय-क्षेत्र मे कुछ भाग उन्होने घेर ही रक्खा था ।

साहु बीमारी मे उसे केवल एक बार ही देखने गये थे । यह बात उसे खटक रही थी । उसे भय था कि कही उन्हे मन बहलाने, समय काटने को कोई और संगी तो नही मिल गया । आदेश्वर की ओर साहु का झुकाव है, यह उससे छिपा न रह सका था ।

आदेश्वर को उसने उड़ती दृष्टि से देखा भर है । गाँव की योजना मे विशेष महत्व उसे नही दिया । अब उसे लग रहा है कि वह व्यक्ति प्रमुख हुआ जा रहा है । सोचा कि उसके पहुँचने भर की देरी है, साहु को उसकी ओर झुकना ही पडेगा । उसके बिना उनका निर्वाह कैसे होगा ? जैसा वह है वैसा गाँव मे क्या कोई और है ?

आगन्तुक बेरोक चबूतरे पर चढ गये । हरिनाथ आदेश्वर की ओर

बिना देखे छदम्मी साहु से ऊपर और रामाधीन नीचे खाट पर बैठ गये।

साहु ने कभी इस ओर ध्यान नहीं दिया था। कौन कहाँ बैठता है यह जैसे कोई बात ही न थी। पर आज हरिनाथ उनसे ऊपर इस प्रकार बैठ गया है जैसे उसकी बपौती हो। यह उन्हे अच्छा नहीं लगा।

हरिनाथ बीमारी से उठा था गौरववान होकर; उसने इसी बीच मे रामाधीन पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली थी। उस नवप्राप्त गौरव ने उसकी वाणी, उसके रंग-ढंग पर प्रभाव डाला था।

"साहु तुम एक ही बार मुझे देखने आये ?" उसने हल्की शिकायत की।

साहु को जो हरिनाथ की प्रथम बात बुरी लगी तो फिर सभी बुरी लगती चली गई। मन मे उठा—क्या वे उसके बाप के नौकर है, जो उसे देखने जाते। वे चुप रहे।

साहु बोल नही रहे है, यह बात हरिनाथ को कुछ लगी। क्या कारण हो सकता है ?

उसकी दृष्टि मोढे पर बैठे लँगडे-लूले आदेश्वर की ओर गई। आदेश्वर के गाँव से जाने से पहिले वह कुछ बार उसके साथ खेला है। पर यह समय गौरव दिखाने के उपयुक्त था और उसका लोभ वह संवरण नहीं कर सका।

बोला—"यह लूला मनुष्य कौन है ?"

साहु को लगा कि आदेश्वर ठीक कहते है, इस जाति की बोल-चाल में सुधार होना चाहिए। हरिनाथ की अशिष्टता उनपर स्पष्ट होती आ रही थी।

साहु बोले—"यह आदेश्वर बाबू हैं !"

"बाबू !" और हरिनाथ खिलखिला कर हँस पड़ा। "वही आदेश्वर न, जो उन दिनों यहाँ गाय-भैंस चराया करता था, अब बाबू बन गया। वाह, साहु वाह, तुम मजाक करते हो खूब।"

आदेश्वर के मुख पर एक गम्भीरता आई और चली गई।

"क्यों रामधन, कितनी देर है ?" हरिनाथ ने अधिकार से पूछा।

"घोंट रहा हूँ दादा ! अभी आये हो, बैठो।" रामधन हरिनाथ को जीवन भर क्षमा न कर सकेगा। उसका व्यवहार काँटे की भाँति खटकता रहेगा। पर उसे गाँव में रहना है तो हरिनाथ से दब कर ही रहना होगा।

ऐसी दशाओं मे मानव-यंत्र मे कुछ नवीन प्रकार की संरक्षक दशाएँ उत्पन्न हो जाती है और मानव उन व्यवहारों को साधारण समझ उनके प्रति उतना भावुक नही रहता। वह अपनी दृष्टि अपने मार्ग पर ही सीमित रखता है, विशेष इधर-उधर नहीं देखता।'

हरिनाथ ने आदेश्वर की ओर अब ध्यान से देखा। एक मुस्कान उसके मुख पर दौड गई।

"क्या हाल है आदेश्वर ?"

"तुम मृत्यु-मुख से निकल आये हो और मैं उसमें जाने की तैयारी कर रहा हूँ।"

साधारण प्रश्न का असाधारण उत्तर था। हरिनाथ ने साहु की ओर देखा। यह आदेश्वर तो विकट है। हरिनाथ को मृत्यु-मुख में भेज रहा है। वह एक क्षण चुप हो गया। फिर विषय बदलता हुआ बोला—"कौन-कौन देस देख आये भई ?"

"विदेश तो केवल ब्रह्मा ही गया था।"

"हूँ।"

"पर सब को विदेस फलता नही। वर्ष भर में लौट आया। कलकत्ते मे दो वर्ष रहा। बीमार रहने लगा तो कानपुर पहुँचा। वहाँ जीवन ही वीत आया। जब उसने मुझे कुछ देना प्रारम्भ किया, तभी मेरा सब कुछ ले लिया, और अब मै अपाहिज हूँ।"

"क्या मिलता था कानपुर में ?"

हरिनाथ की इच्छा थी कि उसकी आर्थिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर तदनुसार अपनी भाषा और अपना व्यवहार उसके प्रति निर्धारित करे।

"अकेला प्राणी था। निर्वाह भर को मिल जाता था।"

"फिर भी ?" हरिनाथ ने प्रश्न ने दुहराया।

"विशेष नही, सवा सौ, डेढ सौ पड़ जाता था।" आदेश्वर हरिनाथ के चेहरे के उतरते-चढ़ते रंग को देख रहा था।

हरिनाथ पर इस वेतन का प्रभाव पडा। उसके साले कारिन्दा को भी इस जीवन मे इतना मिलने की सम्भावना नही है। हरिनाथ ने अब आदेश्वर की ओर दूसरी दृष्टि से देखा। उसके हाथ-पैर टूट गये है, इस पर उसे सन्तोष हुआ।

मिलते होगे सवा सौ, डेढ सौ, जब मिलते होगे। पर आजकल तो अपाहिज है। समय आयेगा जब उसे हरिनाथ से अधिक दरिद्र होना पडेगा और तब उसे पता चलेगा कि उससे अधिक वेतन लेने का क्या परिणाम होता है।

पर अभी उसके पास जमा-पूँजी होगी; बैठ कर मजे से खायेगा। हरिनाथ देखता आया है कि इस गॉव मे बडे-बड़े जमा-पूँजीवाले आये पर किसी की पूंजी तीन-चार वर्षो से अधिक नही चली।

"तुम्हारा अब क्या हाल है? आजकल ज्वर जब उठाकर पटकता है तो बुरी प्रकार मारता है।"

हरिनाथ काँप गया। क्या आदेश्वर को उससे सम्बन्धित घटना ज्ञात हो गई है। उसने चुप रहना ही श्रेष्ठ समझा।

साहु से बोला—"रामाधीन अपने बाप से अलग हो गया है। गृहस्थी ज़माने के लिए तुम्हारी सहायता चाहेगा तो पूरी देना।"

"यह मेरा व्यापार है, उसकी बात दुकान पर बैठ कर करता हूँ। व्यापार व्यापार है।" रामाधीन से पूछा—"क्यों, अलग हो गये? बँटवारा हो गया?"

"अभी तो नहीं पर शीघ्र हो जायगा।" रामाधीन ने हरिनाथ की निकटता से बल प्राप्त करके कहा।

साहु के मन में खटका उठा कि हरिनाथ ने रामाधीन को किसी प्रकार फाँस लिया है। पर कैसे?

बोले—"रामाधीन, जब तुम्हारी इच्छा हो आ जाना। दुकान तुम्हारी ही है। तभी बातें कर लेंगे।"

"मैंने कारिन्दा साब से इसकी सिफारिश कर दी है, जिससे उन्होंने इसे छोड दिया है। पर रामावतार को इस बार वे भली-भाँति रगड देंगे। बहुत सिर पर चढ रहा था। तुमसे भी तो एक बार झगड बैठा था साहु?"

साहु उस समय हरिनाथ के विरोधी हो रहे थे। कुछ बोले नही। रामाधीन को यदि उधार चाहिए तो वह स्वयं उनके पास आये। हरिनाथ को बीच मे पडने का अधिकार वे नही दे सकते।

रामाधीन को पिता की बुराई साधारण समय मे बुरी लगती। पर इस समय इसका उस पर विशेष प्रभाव न पडा। उसे लगा कि हरिनाथ सब प्रकार उसकी भलाई कर देने पर उतर आया है। हरिनाथ की इस भलाई का अन्य लोगों पर क्या प्रभाव पड़ेगा, इस ओर उसका ध्यान नही गया।

रामधन ने सूचना दी—"साहु भंग तैयार है।"

साहु ने आदेश्वर की ओर देखा—'पिओगे अभी बाबू?"

"हाँ।" आदेश्वर ने स्वीकृति दी।

हरिनाथ इस विशेषण एवं सर्वनाम पर चकित हो गया। लँगडा-लूला आदेश्वर आज साहु के लिए बाबू है। साहु का इतना पतन हो सकता है? इस पर उसे विश्वास न हुआ।

उसे लगा कि वह अब इस साहु के यहाँ भंग नही पी सकता। यह आदेश्वर और बाबू! सचमुच अब साहु के यहाँ उसके लिए भग पीना सम्भव नही है। सवा सौ डेढ सौ रुपये। नही, नही, एक दम नही। साहु सवा सौ डेढ सौ रुपये वाले लँगड़े लूले को बाबू कहे! वह नही पियेगा। ऐसे साहु के यहाँ भंग नही पियेगा।

रामधन ने कहा, "हरिनाथ दादा, लो न!"

हरिनाथ ने तेजी से कहा—"नही।"

पहिले उससे नही पूछा गया। प्रथम स्थान आदेश्वर को दिया गया।

वह वैसे चाहे पी लेता। पर उसका इतना अपमान! वह अब वास्तव में नहीं पियेगा।

पर रामधन की मुद्रा से उसे अनुभव हुआ कि "नही" कुछ अधिक तेजी से निकल गया है। रामधन ने उस पर मुख बिचका दिया है। बिगडी बात सँवारने को बोला—"रामधन, जानते हो कि मै अभी बीमारी से उठा हूँ।"

"हाँ दादा, समझ गया। तुम लोगे रामाधीन ?"

रामाधीन समझ रहा था कि हरिनाथ ने नहीं पी; इसलिए नही कि भंग उसे भाती नहीं अथवा वह बीमारी से उठा है; वरन् इसलिए कि उसने पीना किसी कारण से उचित नही समझा। आजकल वह प्रत्येक पद पर हरिनाथ का अनुगामी था। और उसने भी कहा—"नहीं।"

रामधन ने दुबारा उससे नहीं पूछा।

तीनों ने पी। रामधन और हरिनाथ खाट पर बैठे रहे जैसे बिरादरी से बाहर हों—कुण्ठित, मन-मारे।

हरिनाथ ने देखा कि भंग साधारण नहीं विशेष है। क्यो ? इसी 'बाबू' के कारण ? अब उसके मन मे संघर्ष मच गया।

भंग पक्ष ने कहा कि बसे भंग पीनी चाहिए। हृदय ने समर्थन किया कि ऐसी अच्छी भंग तो पीनी ही चाहिए! जिह्वा ने स्वाद के लिए प्रस्तुत हो इसका अनुमोदन किया।

एक बार वह नहीं कर चुका है। माँगे कैसे ? रामधन और साहु अब उससे पूछते दिखाई नहीं देते। फिर भी कदाचित्…।

वह बैठा रहा। मन में त्याग और तृष्णा मे द्वन्द्व चलता रहा धीरे-धीरे इस द्वन्द्व की तीव्रता बढती गई। वह ऊपर उसकी अशान्ति के रूप मे प्रकट होने लगी और जैसे असह्य हो चली। भंग पक्ष ने कहा—"तूने मना क्यों किया ? अब ऐसी अच्छी भंग कहाँ मिलेगी ?"

हरिनाथ ने कहा—नहीं है तो नहीं है। अब क्या वह रामधन से माँगे।

अधिक बैठना असम्भव था। वह उठ खड़ा हुआ और साथ में रामाधीन।

"क्यों, चल दिये हरिनाथ ? बैठो, बाबू बिदेस की बातें सुनायेंगे।"

"नही साहु, चलूँ। काम है। स्वास्थ्य भी ठीक नहीं है। रामाधीन के लिए भी कुछ लोगो से सिफारिश करनी है। जानते हो कि इस समय अफसर लोग किसी का काम नही करते। मैं उनका रिश्तेदार हूँ इसी से कभी-कभी बात सुन लेते हैं।"

उसने आदेश्वर को गाँव की राजनीति मे अपने प्रमुख स्थान की सूचना दी। आदेश्वर ने उसे ग्रहण किया।

साहु को लगा कि आज हरिनाथ केवल उनका अपमान करने के लिए आया था। वैसे भंग के नाम से पिसी बबूल की पत्ती पी जायेगा। पर आज वह बीमार है। वे उसे नीचा दिखाने के लिए जल उठे।

वे विचारमग्न हो गये।

आदेश्वर ने पूछा—"चिन्तित क्यों हो साहु ?"

"मैं सोच रहा हूँ कि गाँव में जिस परिवर्त्तन की बात आप कर रहे हैं उसे लाने मे मैं क्या कर सकता हूँ। हम लोगों को अधिक शिष्टता सीखनी होगी।"

साहु जो वैसे नहीं करते, वह हरिनाथ के विरुद्ध द्वेष जगने से करने को प्रस्तुत हो गये। आदेश्वर को प्रसन्नता हुई। उसका समझाना इतने शीघ्र साहु को प्रभावित कर जायगा, इसकी उसे आशा न थी।

बोला—"गाँव में शिष्टता लाने की आवश्यकता आप को भी अनुभव होती हैं न ?"

"हाँ, यह अब अत्यन्त आवश्यक है।"

"इसके लिए ग्रामीणों की भावनाओं और विचारों मे काफी परिवर्त्तन करना होगा। जो लोग प्राचीनता के नाम पर अशिष्टता और पीड़न को बनाये रखना चाहते हैं उनकी शक्ति क्षीण कर देनी होगी।"

"हाँ तो बताइए न ? मैं कुछ करना चाहता हूँ।"

"यह ठीक अवसर है। हमें रामसरन के मामले में रुचि लेनी चाहिए। यदि रामसरन के विरोधी उसे लम्बी सजा दिलाने में सफल हो जाते हैं, तो

उनकी शक्ति बढ जायगी और शिष्टता को पनपने के लिए स्थान नहीं मिलेगा। वे पुन: मनमानी करने लगेगे। इस समय तो मुख्य कार्य रामसरन को उनके चंगुल से बचा लाना है।"

साहु ने देखा और एक छेद उनके सम्मुख खुल गया। यदि रामसरन का पक्ष, जो वे खुलकर नही ले सकते, विजयी हो जाता है, तो कारिन्दा की हेठी होगी और उससे हरिनाथ की प्रतिष्ठा को महान धक्का पहुँचेगा। जिनके बल पर हरिनाथ कूदता है, उनका मान-मर्दन करना हरिनाथ को तोडना है।

"बाबू मै, जो आप कहे करने को तैयार हूँ, पर आप जानते ही है कि प्रत्यक्ष रूप से ..।"

"इसकी आवश्यकता भी नहीं है। हम चाहते है कि बहुत अच्छा वकील रामसरन के लिए किया जाय जिससे झूठा अभियोग उस पर प्रमाणित न हो पाये। इससे गाँव का शासन नंगे रूप मे सब के सम्मुख आ जायगा। हमारी इस सफलता से गाँव का साहस बढ़ेगा।"

"जो आप उचित समझे। पर मैं....। हाँ रुपया....।"

"यही ठीक है। मै रुपये के लिए तुम्हे रसीद दूँगा। आवश्यकता पडने पर तुम उसे दिखा सकते हो। उस दशा मे रामसरन की सहायता करने का सम्पूर्ण उत्तरदायित्व मेरा होगा।"

साहु ने देखा कि आदेश्वर लँगडा-लूला है तो क्या, उसका हृदय सिंह का है। उसे किसी का भय नही है! वह मनुष्यता के सन्देश के लिए मार्ग बनाने वाला है। उनके हृदय मे उसके प्रति श्रद्धा बढ़ गई।

उन्होंने कल्पना मे देखा कि उनके रुपये से रामसरन के लिए माथुर वकील किया गया है। गाँव के सब लोग रामावतार की सफलता पर आश्चर्य कर रहे हैं कि बिना भूमि गिरवी रक्खे उसके पास इतना रुपया कहाँ से आया।

हरिनाथ और उसके दल का मुख उतर गया है। कोई रामसरन के भी पीछे है यह जान कर गाँव का सत्पक्ष कुलबुलाने लगा है। जागरण

३

१

रामाधीन की स्थिति विचित्र थी। स्वतन्त्र किसान होने के लिए उसे पटवारी और कारिन्दे की सहानुभूति न सही तटस्थता अवश्य चाहिए थी। पर ऐसे समय मे तटस्थता का भी मूल्य होता है। समय होता है जब किसी को चुप रहने के लिए वेतन दिया जाता है। ऐसे अवसर अत्यन्त महत्वपूर्ण होते है।

रामाधीन अपनी समस्या ले पटवारी और कारिन्दा से मिला।

पिता चाहते थे कि वह अपनी गृहस्थी का प्रबन्ध पृथक करे। खेती-बारी सम्मिलित हो, जो उपजे उसे बाँट कर अलग-अलग सब उपभोग करे।

पर रामाधीन ने यहाँ विद्रोह कर दिया। उसने सोचा कि यदि रामावतार को उसकी प्रतिष्ठा का ध्यान नही है तो उसे क्यो होना चाहिए? यदि पिता पिता की भाँति नही रहता तो पुत्र को ही क्यो पुत्रत्व निभाने का भार दिया जाय? उसने हठ किया कि वह अलग होगा, पूरी तरह अलग होगा। खेत, बगिया, पेड़ सब बाँटेगा।

रामावतार ने कहा—"अभी ठहर जाओ, मुकदमे से पीछा छूटे तो बाँट लेगे।"

रामाधीन ने कहा—"मै अभी बाँटूँगा। यही खड़े-खड़े बाँटूँगा।"

जो रामाधीन पिता के सम्मुख नेत्र उठाने मे सकुचाता था, सिह के समान दहाड़ा। पड़ोसियों ने कहा—"आज रामावतार का पुत्र बालिग हो गया है।"

रामाधीन के पीछे गाँव के शासन का हाथ था। कारिन्दा सा'ब ने अच्छा प्रकट की थी कि उसे अभी अलग हो जाना चाहिए। गाँव के बेताज के बादशाह की इच्छा क्यो न पूर्ण हो।

रामाधीन ने हठ किया कि उसका भाग उसे अभी मिलना चाहिए। रामावतार के भीतर उठा कि वे रो दे। पर ऊपर से क्रोधित हो गये। बोले—"बाँटेगा, कैसे बाँटेगा ? मै नही बाँटने दूँगा !"

रामाधीन सशक्त था। बोला—"दादा, तुम बाँटने दोगे या नही, इसका निर्णय तो जज कर देगा।"

रामावतार के कान खडे हो गये। 'इसका निर्णय जज कर देगा !' रामाधीन कचहरी की शब्दावली मे बातें करने लगा है। अभी कल तक जिसके पास भोजन का अभाव था वह आज जज और वकोल तक पहुँचता है। इतना पैसा अचानक उसके पास कहाँ से आ गया है ?

गाँव का वातावरण उनके विरुद्ध जा रहा है। रामाधीन हरिनाथ की संगति मे है। इस संगति से उन्हे हल्की सी एक सान्त्वना प्राप्त हुई थी। इस प्रकार रामाधीन ग्राम्य-शासन के कल-पुर्जों की यदि परिचय-सहानुभूति प्राप्त कर सका तो वह उसे जीवन में लाभकारी होगा।

पर इस सम्पर्क मे अब शंका उत्पन्न करने की क्षमता जाग आई।

वह हरिनाथ के साथ रहता है। और पिता के विरुद्ध कचहरी जाने की बात कहता है। अवश्य लोगो ने उसे भड़काया है। नहीं तो उनका इतना सीधा रामाधीन ऐसी बात कैसे करता। रुपया भी किसी ने जुटा देने का प्रलोभन अवश्य दिया होगा। उनका क्रोध रामाधीन से हट उसके साथियों पर चला गया।

बोले—"बच्चों की सी बातें न करो रामाधीन। कचहरी जाने की आवश्यकता नहीं है।"

"हुँ।"

"यह मुकदमा समाप्त हो जाय तो उसके पश्चात्....।"

"नही दादा, इस मुकदमे के समाप्त होने तक जब कुछ बचेगा ही नहीं तो तुम क्या बाँट दोगे ?"

रामाधीन ने जो कहने से अपने को बहुत दिनों रोक रक्खा था, वह कह दिया।

एक भीषण सम्भावना रामावतार के सम्मुख आ गई। मुकदमे के पश्चात् उनके पास कुछ नही बचेगा। इस दुखद विषय पर विचार से भागने का एक ही मार्ग था और वह उन्होंने ग्रहण किया।

पूछा—"क्यो ?"

"क्यो क्या ? राजा से बैर बाँधकर मुकदमा लड़ोगे, उसमे कितना खर्च होगा, कुछ पता है ? रत्ती रत्ती सब बिक जायगा। मुझे मालूम है, अभी से गाहक मुँह बाये है।"

रामावतार को प्रथम भाग ठीक सा जँचा। पर दूसरा भाग सर्प की भाँति उनके हृदय को छू गया। उनका हृदय विद्रोह मे खड़ा हो गया। उसने निश्चय कर डाला कि जो लोग उनकी भूमि खरीदने के इच्छुक है वे निराश होगे, घोर निराश होगे।

रामसरन को होगा, जेल हो जायगी; वे रत्ती भर भूमि न बेचेंगे, न गिरवी रक्खेंगे। कौन ठीक है कि अच्छे से अच्छा वकील उसे बचा ही पाये। ऐसी दशा मे वे क्यों रुपया व्यय करे ?

पर अपनी यह दुर्बलता वे रामाधीन के सम्मुख खोलने मे असमर्थ हो गये। रामाधीन-द्वारा उनकी कठिनाई की सूचना निश्चय ही दूसरे पक्ष में पहुँचे बिना न रहेगी। वे उन लोगो को प्रसन्नता द्विगुणित करने का कारण नहीं बनना चाहते।

बोले—"घबराओ नहीं, मै एक तिल भूमि न बेचूँगा।"

"नहीं दादा, मैं नही मानूँगा। मुझे तो तुम्हे मेरा हिस्सा अभी दे देना होगा।"

"रामाधीन !"

रामावतार विवश होते थे। झुँझलाते थे। पछताते थे और फिर दृढता दिखाने का प्रयत्न करते थे।

"अच्छा रामाधीन, मुझे कुछ दिन सोच लेने दो।

"दादा, मैने पटवारी से कह दिया है। कल के लिए वे तैयार है। यदि कल नही बाँटते तो मै....।"

"अच्छा।" रामावतार ने रोकर, सिर पटक कर कहा।

रामाधीन चला गया। और रामावतार भी चल पडे। एक के मुख पर विजय की आभा थी और दूसरे के मुख पर पराजय, रक्तहीनता तथा नयनों मे आँसू।

मनुष्य के सामाजिक जीवन मे यह एक स्थान है जहाँ पीडा का निवास है। प्रजनन से लेकर मृत्यु-पर्यन्त विस्तार और विकास की जितनी क्रियाएँ है सभी में वेदना का निवास है।

इसी के आधार पर कष्ट-द्वारा आत्म-विस्तार की शैली को साधकों और विचारकों ने स्वीकारा है।

दूसरे दिन बाँटने का प्रबन्ध किया गया। जब बँटवारा प्रारम्भ हुआ तो रामावतार ने चौथाई भाग रामाधीन को देना चाहा।

रामाधीन ने उसे अस्वीकार करते हुए हरिनाथ की ओर देखा। हरिनाथ ने मित्र की सहायता की—"पण्डित, जब बाँट ही रहे हो तो उसे एक तिहाई क्यों नही देते।"

"नही, यह मेरा काम है। तुम बीच मे क्यो बोलते हो!" रामावतार ने कुछ तेजी दिखा कर कहा।

"हम गाँव के आदमी है। झगडा होगा तो हमीं बुलाये जायँगे, रामाधीन ठीक कहता है वह एक चौथाई स्वीकार न करेगा। तुम्हारे तीन लडके हैं, एक तिहाई उसका है।"

"मै एक चौथाई अपने लिए रख रहा हूँ। मेरे मरने पर तीनों आपस मे बाँट लेंगे।"

हरिनाथ ने रामाधीन की ओर बोलती दृष्टि से देखा और कहा—

"रामाधीन यदि लेना तो एक तिहाई, इससे कम पर राजी न होना। जो तुम्हे अभी मिल गया, वही मिलेगा। पीछे की बात पीछे की ही है।"

और रामाधीन ने पिता से कहा—"मै एक तिहाई से कम न लूँगा।"

गाँव के अन्य लोग चुप थे। वे देख रहे थे कि रामाधीन की आड मे गाँव के शासक रामावतार को शक्तिहीन बनाने मे प्रयत्नशील है। पर इसमे उन्हे प्रसन्नता ही थी।

परोन्नति से जिन्हें सुख होता है, ऐसे लोग संसार मे है, यह कहना सत्य को परम चुनौती देना है। पर-पतन से जिन्हे थोडा-बहुत सन्तोष न होता हो ऐसे व्यक्ति भी उसी परिमाण मे है।

मानव ऊपर से चाहे कुछ भी कहे, पर पारस्परिक ऊँच-नीच और प्रतियोगिता की भावना उसके एक दूसरे के प्रति सहृदय होने के प्रयत्न मे बाधक है। मुँह से चाहे हम कुछ भी कहे, कार्य मे चाहे कुछ ही दर्शाये पर मूलत. हृदय मे पीड़ा की उलटन-पुलटन होती रहती है। इन भावनाओ का दमन ही मानव संस्कृति का मापदण्ड बन सकता है।

गाँव के लोग वृद्ध और अधेड़, पंच और सरपंच सब अपने मे सन्तुष्ट, ऊपर से विवश दर्शक मात्र रहे आये।

हरिनाथ ने शत प्रति शत मित्र भाव दिखाते हुए कहा—"रामाधीन, एक तिहाई से कम न लेना!"

रामावतार को अनुभव हो गया कि वह प्रत्यक्ष हो पुत्र को उनके विरुद्ध भड़का रहा है।

और रामाधीन ने कहा, ग्रामोफोन की भाँति—"दादा, एक तिहाई से कम नहीं।"

रामविलास रामाधीन और हरिनाथ की ओर सिह की भाँति देख रहा था। यदि मानव समाज के स्थान पर जंगल का शासन होता तो अब तक वह दोनो की गर्दनें तोड़ चुका होता।

उसने हरिनाथ की ओर आग्नेय नेत्रो से देखा। हरिनाथ ने नयन झँपाये नही। उसे लज्जा अनुभव नही हुई। उसके नयनों मे सियार की

चतुरता झलक आई। उसमें भावना थी, घबराहट नहीं, अब प्रहार प्रारम्भ हुआ है। शीघ्र ही तेरी बारी भी आयेगी।

रामविलास के हाथ इस दृष्टि से और भी चंचल हो उठे। पर टोकरी के नीचे बन्द क्रुद्ध सर्प की भाँति वह अपनी सीमा पर ही अपना क्रोध प्रकट कर सका।

इस विवाद मे पर्याप्त समय निकल गया। पटवारी का सन्तोष सीमा लाँघने लगा। बोला—'क्या बात है रामाधीन ? मै जाऊँ क्या ?''

रामाधीन ने कहा—''दादा।''

रामावतार ने कहा—''एक तिहाई मै इस समय न दूँगा। तुम तीनों को सब बाँट दूँगा तो मै वृद्धावस्था मे क्या करूँगा ?''

अब पटवारी प्रत्यक्ष रामावतार के विपक्ष मे आ गये। बोले—''रामावतार तुम समझते हो, मै तुम्हारा नौकर हूँ। चौथाई अब लिखूँगा, तिहाई फिर लिखूँगा। यदि बाँटना नही था तो मुझे क्यों तंग किया ? रामाधीन, एक तिहाई बँटवा ले।''

''रामाधीन !'' रामावतार ने विनती की।

''रामाधीन,'' हरिनाथ ने कहा—''चलो, पण्डित एक चौथाई से अधिक बिना कचहरी चढे न देंगे।''

और रामावतार को धमकाया—''पण्डित, कल रामाधीन तुम पर नालिश करेगा।''

रामावतार ने रामाधीन की ओर देखा। उसने कहा—''दादा, यदि तुम नही मानते तो अन्त मे यही करना होगा।''

रामविलास बैठा था, उछलकर खडा हो गया। लोगो मे एक सनसनी दौड़ गई। रामावतार के मन मे उठा, दावा करेगा, बडी प्रसन्नता से करे। वह समस्त भूमि बेचकर मुकदमे के पेट मे भर देगा, तब वह क्या ले लेगा ?

पर विचारों की वह दिशा कुछ ही क्षण ठहरी। कल्पना मे उसने देखा कि भूमि उसने क्रोध-वश सब बेच दी है। उसके कारण उसके बेटे और

उसके पोते दाने-दाने को भिखारी हो गये है। उनके पसली दीखते, क्षुधा-पीड़ित शरीर उनके सम्मुख आ गये। यह सब होगा, उनके इस समय के हठ के कारण।

उन्होंने रामविलास की ओर देखा। रामसरन की सुधि की। रामाधीन के साथ इन दोनों दो दण्ड क्यो दिया जाय ?

पुत्रों को लेकर दो प्रकार की भावनाओ मे वे पिस गये। इनमे से एक को अलग करके दण्ड देना सम्भव नही है।

इतने लोगो के सम्मुख वे अब नीचे गिरेगे। उनके वचन का भी कुछ मूल्य है ! उनके अहंकार की भी कुछ सत्ता है। और एकाएक वह अहंकार जादू के वृक्ष की भाँति सब समस्याओ और जटिलताओ को धराशायी करता सबसे ऊँचा उठकर खड़ा हो गया।

रामावतार के मुख से निकलने ही वाला था. 'जाओ रामाधीन, यदि तुम्हारी इच्छा कचहरी जाने की है तो जा देखो। उसके पश्चात् तुम्हे क्या मिलता है। तुम जैसे कुपूत के लिए मै एक अंगुल भूमि नही छोड़ जाऊँगा।'

तभी पटवारी ने कहा—"चलो रामाधीन, पण्डित बिना कचहरी मे दावा-धक्का के न मानेंगे।"

रामविलास को एक नवीन अनुभव हुआ। जहाँ रामाधीन है वहाँ वह भी हो सकता है। पिता के प्रति उसकी भावुकता मे कमी आ गई। पटवारी के इस वाक्य ने उसमे क्रोध-सञ्चार न किया। वह दर्शक मात्र रह गया।

हरिनाथ ने रामाधीन का हाथ पकड़ा और उसे लिवा ले चला ! अन्य लोगों ने भी जाने की इच्छा दिखाई। एकाध की इच्छा रामावतार को सम्मति देने की थी, पर उन्होंने चुप रहना ही उचित समझा। कुछ थे जो रामाधीन को संयत करना चाहते थे, पर उनके पास मौन रहने का बहुत बडा कारण था।

जब रामाधीन दो डग चला ही गया तो रामावतार निर्णय कर पाये।

उनकी दुर्बलता ने उनके नेत्र मूँद दिये। एक बाढ सी आ गई। वह वृद्ध रो दिया।

बोला—"रामाधीन आओ, बॉट लो, एक तिहाई ही ले लो।"

हरिनाथ और पटवारी प्रसन्नता से खिल गये। रामाधीन ने दादा का अश्रुमण्डित मुख देखा। जी मे आया, कह दे ' नहीं दादा मैं नही बाटूँगा।

पर इससे पहले ही हरिनाथ ने कहा—"हाँ पण्डित, यह बुद्धिमानी का काम है। इन लोगो का भाग इन्हे दे दो और तुम वृद्धावस्था मे गृहस्थी का झंझट छोड माला फेरो।"

"रामसरन का भाग तुम्हारे लिए काफी है।" किसी ने कहा।

पर रामावतार ने वह जैसे सुना ही नही। इसके पश्चात् कानून और समाज की रीति नीति के अनुसार रामावतार की सम्पत्ति बॉट दी गई। एक घर के तीन घर हो गये।

रामविलास और रामाधीन स्वतन्त्र परिवारों के स्वामी हो गये। व्यवस्थानुसार रामावतार केवल रामसरन के भाग के संरक्षक रह गये।

रामविलास ने अभी और कुछ दिन पिता के साथ रहने की इच्छा दिखाई। इस प्रकार ऊपर के कार्यों के लिए केवल रामाधीन ही परिवार से टूट कर स्वतन्त्र हुआ।

२

रुपये का प्रबन्ध कर चुकने के पश्चात् आदेश्वर ने अपना कार्यक्रम बनाया। उसने रामसरन के अभियोग मे वर्ग-सघर्ष को स्पष्ट करने की सम्भावना देखी और इसे पूर्णतया कार्य मे लाने की उसकी उत्कट इच्छा हो गई मरने से पहले यदि वह इस प्रकार के बीज गॉव मे—अपने गाँव मे, डाल जायगा तो, वहाँ की मिट्टी का ऋण कुछ न कुछ अवश्य चुक जायगा।

उसने इस कार्य मे अपनी सीमाएँ देख लीं। शारीरिक असमर्थता ही उसके लिए सबसे बडो बाधा थी। इस कार्य मे उसे एक निस्पृह सहायक की आवश्यकता थी। ऐसा सहायक जिस पर वह निर्भर कर सके।

उसके चारों ओर जो व्यक्ति थे उन पर दृष्टि दौडाई। सभी को अनुपयुक्त पाया। पर पात्र के अभाव मे यह काम रुकना नही है। पात्र यदि नही है तो उसे बनाना होगा।

गाँव का वातावरण जबतक परिवर्तित नहीं किया जाता, तबतक रामसरन को विशेष सफलता की आशा नही है। यदि उसके विपक्षी गवाहों को सत्य कहने के लिए बाध्य किया जा सके, उसके पक्ष में गवाह उत्पन्न किये जा सकें, तो सच्ची बात सामने लाने मे चतुर वकील को विशेष कठिनाई न होगी और उसके बाद यह व्यक्तिगत फौजदारी का मुकदमा रह जायगा।

पर यह सब करने का साधन ? आतक सबल का है। साधारण किसान शान्तिप्रिय है और शासन-यन्त्र के विरुद्ध जाने का साहस नहीं कर सकता।

उसने जहाँ अब तक नही देखा था, वहाँ, अपने अत्यन्त निकट देखा, तो रूपमती पर उसकी दृष्टि पडी। वह क्या कर सकती है ? रूपमती की सामर्थ्य अभी चाहे कुछ न हो, पर जगाई जाने पर वह विशाल हो सकती है। उसने विचारा कि रूपमती को यदि वह रामसरन के पक्ष मे प्रभावित कर सकता है तो उसे एक सक्षम अस्त्र प्राप्त हो जाने की सम्भावना है।

उसी समय उसने रूपमती से रामसरन के अभियोग के विषय मे वार्तालाप किया। उसने देखा कि रूपमती अर्थशास्त्र और राजनीति की बोझिल शब्दावली से अपरिचित भले ही हो, पर मानव मान्यताओं के प्रति वह सजग है। रामसरन के प्रति उसकी सहानुभूति आदेश्वर से कम नहीं है।

रूपमती के शब्दों मे रामसरन वास्तविक पुरुष है ; उसने पुरुष का सा व्यवहार किया है।

आदेश्वर ने नारी प्रकृति की फिसलनमय भूमि पर धीरे-धीरे बढ़ते हुए पूछा—"क्या तुम उसकी सहायता के लिए कुछ करना चाहोगी ?"

उसने देखा कि रूपमती के नेत्रों मे एक ज्योति आ गई है—रामसरन की सहायता !

उसे कुछ भूत काल की घटनाएँ स्मरण हो आई। समय था जब रामसरन का शारीरिक बल उसका सहायक हुआ था। उसे पता था कि आज जो उसके विरुद्ध है, उनमे से कुछ के हृदय मे वह स्वय कारण हो सकती है। वह रामसरन की महायता करेगी। उसे लगा कि उसका भाग्य उदय की ओर जा रहा है। आदेश्वर की सेवा! रामसरन की सहायता! उम विश्वासी नारी को लगा कि कलिकाल मे देवताओं की आत्माएँ भूमि पर उसे सेवा का अवसर दे रही है।

वह कितने दिनो से अपनी मृत्यु माँग रही है। आत्म-हत्या वह नही कर सकी, क्योकि वह कर नही मकी। पर यदि मृत्यु स्वय उसके निकट आयेगी तो वह उससे विमुख न होगी। नारी ने निश्चय कर लिया कि रामसरन की सहायता के लिए यदि मरना भी पडेगा तो वह प्रस्तुत होगी।

उत्सुकता से उसने पूछा—"क्या करना होगा मुझे?"

आदेश्वर ने मुस्कान मे उसके उत्साह का स्वागत किया। और फिर उसे अपने संघर्ष के सिद्धान्त समझाने प्रारम्भ किये। वह प्रसन्नता की झोक मे एक लम्बा भाषण दे गया। चकित, मुग्ध रूपमती उसके मुख की ओर देखती रही। आदेश्वर विद्वान है, कारीगर है, चतुर है; यह वह जानती और मानती थी। पर आदेश्वर इस प्रकार बोल सकता है, यह उसने कल्पना भी न की थी।

भाषण के पश्चात् उसने मरल टिप्पणी की। "बोलते समय तुम्हारा मुंह बडा अच्छा लगता है। तुम तो लकचर देते हो।"

आदेश्वर झुँझला उठा। क्या इसी टिप्पणी के लिए इतना परिश्रम उसने किया?

"तुम यह बताओ कि समझी क्या? क्या मैं वैसे ही बकता रहा?"

"समझी क्यो नही! यही न? रामसरन की सहायता खूब करनी चाहिए। पर इतनी बात तो मै पहिले ही समझ गई थी।"

आदेश्वर ने ऊपर नही मन मे दोनो हाथो अपना सिर पीट लिया। उसकी समझ मे न आया कि वर्ग-संघर्ष का पूर्ण तर्क समझे बिना वह

रामसरन की सहायता मे पूर्ण हृदय कैसे डाल सकेगी ? वह हृदय चलाना चाहता था—बुद्धि और वाणी के सहारे। बिना वाणी के सशब्द और बुद्धि के चेतन हुए भी उसकी इच्छानुसार कार्य हो सकता है, यह समझने मे उसे कुछ कठिनाई थी।

"तो तुम रामसरन की सहायतार्थ कार्य करने को प्रस्तुत हो ?"

"क्या करना होगा ?"

आदेश्वर ने अविश्वास की दृष्टि से रूपमती की ओर देखा। "काम कठिन है। विरोध हो सकता है। तुम पर शासन की ओर से कुछ विपत्ति आ सकती है।"

रूपमती केवल मुस्करा दी।

"कार्य मे परिश्रम की नही, साहस की आवश्यकता है।"

"पर है क्या वह काम ?"

"बात करना है, खूब बोलना है।"

रूपमती खिलखिला उठी। नारी के लिए इसी को आदेश्वर कठिन कार्य कह रहा था !

"जल्दी बता डालो न, क्या बात करनी है ?"

आदेश्वर का हृदय संदिग्ध रहा। उसे विश्वास न था कि रूपमती इस कार्य को उचित प्रकार से कर सकेगी।

"काम बतायेगे नही। नहीं बताना था, तो कहा क्यो था ?"

आदेश्वर के लिए कोई मार्ग न रह गया।

बोला—"काम यह है : तुम्हे गाँव के घर-घर मे रामसरन की प्रशंसा करनी पड़ेगी। उसने पिता की प्रतिष्ठा-रक्षा के लिए धर्म का काम किया है। जो उसके विरुद्ध झूठी गवाही देगे वे अधर्म करेगे। वे कायर और डर-पोक होंगे।"

रूपमती ने सुना और फिर इस प्रचार के फल की सम्भावना उसकी समझ में आ गई। धर्म के नाम ने उसकी कल्पना जगा दी।

वह झूठी गवाही देने वालो को नरक का, परिवार-विनाश का वह चित्र खीच दिखायेगी कि वे कॉप उठेंगे।

पर क्या इससे रामसरन बच जायगा ? अब जब बचने की सम्भावना उसके सम्मुख आ गई तो उसका लोभ बढ़ गया। उसे लगा कि बच ही जाना चाहिए, अभी बच जाना चाहिए।

३

रूपमती ने यह कार्य अपने सिर ले तो लिया पर इसमें सफलता का मार्ग खोजना उसका काम था।

रूपमती किसी समय गॉव मे साधारण नारी थी। पर जब उसे साधारण बनाये रखने वाला न रहा, तब वह पतिता हो गई और उसके साथ ही भयानक भी। लोग उसके सामने बाते करते भयभीत होने लगे। क्योकि उससे कहने का अर्थ पुलिस अथवा राजा के सिपाही से कहना था।

इस अवस्था तक पहुँचने के पश्चात् पुन उठकर, नमकद साधारण हो जाना, अत्यन्त कठिन समस्या थी। पर उसे करना ही होगा और उसने कार्य प्रारम्भ करने का निश्चय कर लिया। कैसे और क्या सोचा, यह कहना कठिन है। पर जिस प्रकार उसने कार्य प्रारम्भ किया वह कार्य की भाँति ही विचित्र था।

उसने अपने सबसे सुन्दर वस्त्र धारण किये और पानी भरने पनघट गई। बड़ा सा कुवाँ, उसके ऊपर गडारी, दो और बबूल के टेढे-मेढे मोटे लक्कड पड़े थे। जिन्हे गडारियो पर आने का अवसर न मिल पाता था वे लक्कड़ो के सहारे भरती थीं। रस्सी की रगड से उन दीर्घप्राण लक्कडों पर गहरे चिह्न बन गये थे।

कुवे पर चारों ओर गगरों और घडों की अशान्त भीड थी और उससे अशान्त भीड़ थी उन लाल नीली कन्नियों की, जो समृद्ध, असमृद्ध, टूटी-फूटी लाजों को वचाये हुए थीं। जिनके नीचे रुदन-कलपन मे से भी हँसी के क्षण निकाल लेने वाले हृदय छिपे थे। वे नारियाँ, परिश्रम, साधना

की रसमय मूर्ति-सी अपने चरणो से जैसे कुवें को पवित्रता प्रदान कर रही थी।

तभी सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित, अत्यन्त स्वच्छ चमकते दो गगरे सिर पर रक्खे, रस्सी कंधे से लटकाये, रूपमती ने कुवें के निकट ठिठक कर चारों ओर देखा। उसका आगमन एक योजनानुसार था।

कुवे पर चढी। नारियो ने उसकी ओर देखा, पर उससे बोलने की किसी ने चिन्ता न की।

एक वृद्धा ने अपनी पतोहू को दिखाया—"बुरे कामो का यह परिणाम होता है।"

पर बेचारी बहू की समझ मे न आया। यदि अच्छे वस्त्र और अच्छे बर्तन बुरे कामों के परिणाम है तो.. ।

पर वृद्धा का वास्तविक मन्तव्य पूरा हो गया। उसने बता दिया कि वह कुलटा है, उससे बचना चाहिए।

रूपमती ने लक्कड़ों पर होकर पानी भरा और फिर रस्सी समेट अपने गगरे पर रख दी। कुछ क्षण इधर-उधर देखा। अपनी दृष्टि एक आनेवाली रमणी पर जमा दी। ज्यो ही उस नारी ने अपने गगरे जगत पर रख कुवें पर पैर रक्खा, त्यो ही रूपमती उसके पैरो पर गिर पडी और रोने लगी।

जितनी कुँवे पर थी; सब रूपमती को वैजती के पैरो पर रोते देख भौ-चक्की रह गई। रूपमती ने वैजन्ती के पैरो की धूलि अपने माथे लगाई।

सब दृष्टियों ने उससे एक ही प्रश्न किया।

उसने बडे आत्म-गौरव के साथ पानी मे बैठ घोषणा की, "ऐसे धर्मात्मा की पत्नी की धूलि कब कब प्राप्त होती है ? कोई गॉव मे है, जिसने अपने पिता के लिए इतना त्याग किया हैं ? क्या किसी ने कभी इस प्रकार अत्याचार के सम्मुख खडे होने का साहस किया है ? ऐसे पति की नारी होने का सौभाग्य क्या सब को प्राप्त होता है ?"

उसने फिर वैजन्ती के चरण-स्पर्श किये। और बिना किसी की ओर देखे, ऊँची गर्दन किये, गगरे सिर पर रख घर को चल दी।

४

रूपमती का व्यवहार ताल मे पत्थर फेकने के समान था। जिस प्रकार पत्थर के आघात से तरगे उत्पन्न होकर चारो ओर फैल जाती है, उसी प्रकार इस घटना ने गाँव मे रामसरन काण्ड को सजग और सचेत कर दिया।

पडोसी रघुराज की बुढिया दादी ने आधा घण्टे पश्चात् जाकर सहदेई कोई सूचना दी कि तुम्हारे घर मे देवी बहू है।

"क्या हुआ ?" सहदेई ने प्रश्न किया। यदि वह कहती कि तुम्हारे घर मे चुडैल बहुएँ है, तो इस प्रश्न की कदाचित् इतनी आवश्यकता न अनुभव होती। कारण, वह जानती है कि उसकी दोनो देवरानियाँ कहने को देवरानियाँ होने पर भी चुड़ैलो से कम नही है। ऐसी दशा मे देवी की उपाधि के प्रति सन्देह स्वाभाविक था।

और उत्तर में रघुराज की दादी ने समस्त घटना जैसी उन्होने कुँवे पर देखी थी कह सुनाई। सहदेई ने सुना और ध्यानावस्था मे जाने के लिए नयन मूँद लिये। तुरन्त ही जैसे उसने सब भेद जान लिया। बोली—"दादी, तिरिया-चरित्तर के अतिरिक्त और यह कुछ नही है। वह जैसी देवी है मैं जानती हूं। जब से आई है परिवार पर विपत्ति ढाती आई है। पति को जेल तक भिजवा दिया। पता नही कितने वर्ष मे छूटेगा।"

रामविलास की एक विधवा बुवा थीं—पार्वती। वे अपनी ससुराल मे असुविधा से बच अब भ्रातृगृह की असुविधा मिटाने आ गई थी। रामविलास, रामसरन और रामावतार की गृहस्थी का समस्त उत्तरदायित्व उन्होने धीरे-धीरे अपने ऊपर ले लिया था। वे बहुओ की बुवा-सास केवल थी ही नही, बन चली थी।

अवस्था में भाई से तीन वर्ष अधिक होने के कारण उनके अधिकार के विषय मे सन्देह-शंका को अवकाश न था।

उनके कान मे कुछ भनक पड गई । बोली—"क्या बात है काकी ?"

सहदेई ने मुख फेर लिया । उसे पार्वती का इस घर मे आना न रुचा था । वह अलग थीं, फिर भी जहाँ सास-बहुओ की बात थी, वहाँ वह बहू ही थी ।

काकी ने समस्त घटना को तनिक और बलपूर्वक वर्णन किया । बुवा सुनकर चिन्ताग्रस्त हो गई । वह वैजन्ती के पैर पकड कर रोई । तलवे की धूलि सिर पर लगाई और इसलिए कि रामसरन ने पिता को गाली देना सहन नहीं किया ? समस्त घटना पागलपन से अधिक न जँची । उन्हे विश्वास न हुआ कि रूपमती स्वस्थ नारी है । पूछा—"वह पागल तो नही है ?"

काकी ने बुवा की ओर देखा और कहा—"नही ।"

बुवा की समझ मे विशेष कुछ नहीं आया ।

सहदेई ने बुवा की सहायता की—"मैने तो कहा कि यह तिरिया-चरित्तर के अतिरिक्त और कुछ नही है ।"

और अब बुवा को जैसे जटिलता का ठीक सुलझाव मिल गया । निस्सन्देह यह तिरिया-चरित्तर है । उन्होने निश्चय किया कि रामसरन की बहू को ताड़ना देनी होगी । जब तक वे इस घर मे है, घर की लाज-मान का उत्तरदायित्व उन पर है ।

रामविलास घर है, रामाधीन घर है । इसलिए उनकी नारियाँ बुवा के शासन से स्वतन्त्र है पर रामसरन घर नहीं है, इसलिए वैजंती पर उनका शासन अनिवार्य है, नही तो इस कलिकाल मे तिरिया-चरित्तर क्या कम है ?

उन्होने वैजंती को चौक मे जाकर उसे खोजा । वह घास की गठरी खोल मिट्टी झाड रही थी ।

पार्वती खडी उसे काम करते देखती रही । उन्हे लगा कि वह जान-बूझ कर उनकी ओर नही देख रही है । उनका निरादर कर रही है । उन्हें बहुत बुरा लगा । एक तो घर से बाहर अपराध करके आवे और घर मे यह गर्व ! यदि इस गर्व को चूर्ण न किया तो पार्वती नहीं । अपने भाई की गृहस्थी को वे अपने जीते जी दाग न लगने देगी ।

पर प्रथम विचार-धारा ने वैजती को पहिले ही उनका व्यक्तिगत शत्रु बना दिया था। अब चाहे उसने अपराध किया हो चाहे न किया हो, दण्ड उसे अवश्य मिलना चाहिए।

और तब उसने कठोर स्वर से पुकारा—"बहू।"

वैजती ने घूमकर देखा कि बुवा खडी है। वह कार्य-व्यस्त थी इसलिए बुवा के कण्ठस्वर पर ध्यान नही दे पाई। साधारण रीति से उसने पूछा—"क्यों क्या काम है?"

बुवा ने आशा की थी कि वह अपराधिनी उनका स्वर सुनते ही गिड़-गिडा उठेगी। उन्हे वैजती के व्यवहार से निराशा हुई। फलस्वरूप वे और भी असन्तुष्ट और क्रोधित हो गई।

बोली—"सुनती है कि नही?"

"क्या है? काम कर रही हूँ। घास आज देर से आई है, काट कर डाल दूँ; पशु भूखे होंगे।"

बुवा को लगा कि वह कुछ नहीं और पशु सब कुछ। वह यो ही भूँक रही है। वे जोर से चिल्ला उठीं कि वे अब इस घर मे न रहेगी। किसी को उनकी चिन्ता नही है। पशु उससे अच्छे समझे जाते है। बहू उन्हे कुछ समझती नही।

वैजती हक्का-बक्का हो गई। वह घास छोड समस्त परिस्थिति सम-झने की चेष्टा करने लगी।

बुवा ने फिर उच्च स्वर से पुकारा—"मै अब भैया से कह दूँगी कि मुझे मेरे घर भेज दो। दु:ख-सुख मे कुछ भी हो वह अपना ही घर है। किसी की मजाल नहीं कि मेरी ओर आँख निकाल कर देखे, यहाँ जिसे देखो वही सिर चढ़ा रहता है।"

बुवा का कण्ठस्वर सुनकर रघुराज की दादी से अवकाश पा सहदेई भी वहाँ आ उपस्थित हुई। पूछा—"क्या हुआ बुवा जी?"

"हुआ क्या बहू! कितनी देर से खड़ी पुकार रही हूँ। छोटी बहू, ओ छोटी बहू। पर छोटी बहू अपने मे मस्त है। वह किसी की सुनती ही नही।"

महदेई ने अभियोग सुन कर मुँह बनाया। वैजंती की ओर दृष्टि डाली, बुवा जी की ओर देखा। बोली—"बुवाजी, वह तुम्हारी बात क्यो सुनेगी! उसे तो अब उस बेसवा ने देवी बना दिया है। देवी क्या साधारण नारी की बात सुनती है?"

किसोरी घर में थी नही।

"हाँ, ठीक कहती हो बडी बहू। जब नई-नई धोतियाँ पहिन कर औरते चरणों मे लोटती है तो वह अब मेरी बात क्यो सुनेगी?"

उसने अनियंत्रित वैजंती की हिलती उँगलियो की ओर देखा। वह ऊपर से शान्त पर भीतर से क्षुब्ध खडी थी। यह शान्ति ही बुआ और जेठानी दोनो को बुरी लगी।

"ऐसी खडी है, जैसे कि तुम इसकी बाँदी हो।" सहदेई ने कहा।

अपमान असह्य तो वैसे ही था, पर अब परम असह्य हो गया। पार्वती भाई के घर म बाँदी बनकर रहने नही आई है। उसे यदि बाँदी बनकर रहना है तो अपनी ससुराल मे रहेगी। चाहे वहाँ रहना सम्भव हो चाहे असम्भव। इस प्रकार यदि रहेगी तो वही रहेगी। इस घर मे? नही कदापि नही।

"हाँ, बाँदी तो हूँ ही! तभी तो अपना घर छोड़ कर दौड़ी आई हूँ। ऐसी देवी थी तो खसम को जेल क्यो जाने दिया। आते ही सास को खा गई। खसम को हवालात भेज दिया, सारे परिवार को तीन तेरह कर दिया। पता नही रामसरन के भाग मे ऐसा कहाँ से लिखी थी।"

उन्होने साँस लिया।

"आज रामावतार को आ जाने दे तो मै सब फैसला कर लूँगी। मेरे रहते इस प्रकार की बातें घर मे नही होंगी।"

वैजंती के भीतर जैसे अब तक एकतनाव बढ़ रहा था। एक शक्ति जमी हुई थी। एक सहनीयता शेष थी। पर अब जैसे बाँध टूट गया। उसकी शक्ति समाप्त हो गई। उसे लगा कि उसके पैर उसके शरीर को सँभाल नहीं सकेंगे। यदि वहाँ और कुछ क्षण खड़ी रही तो भूमि पर गिर पड़ेगी।

इन लोगो के सम्मुख गिर पडने की हीनता वह स्वीकार नही करेगी। उसमे कुछ महानता है तभी तो रूपमती उसके पैरो पड़ी थी। और वह महानता उसकी नही, रामसरन की है। वह उसे कितना प्यार करता था।

रामसरन की अनुपस्थिति उसने सही है। राते रो-रो कर उसने बितायी है। अब भी बिताती है, और ये बुवा है कि समस्त ससार के अभाग का उत्तरदायित्व उस पर डाल रही है।

उसने ऐसा स्पष्ट नहीं सोचा पर इन विचारो से जो भावना प्राणी मे उत्पन्न होती है वह उसमे उत्पन्न हो गई।

उसके मन ने कहा—"ऐसा ! यदि मै ही बुरी हूँ तो अच्छा मै जाती हूँ। करो अपना सानी पानी।"

वह तेजी से वहाँ से चली गई। अपनी कोठरी वे घुस जोर से सशब्द किवाड़ बन्द कर लिये, खाटपर गिर पड़ी। जो आँसुओ का कोष अब तक नयनो मे उमड-उमड कर उससे टकराता रहा था, अब खुल पड़ा और वह सामसरन की, अपने पीहर की सुधि कर फफक-फफक कर रो पडी।

"देखा ? कितना तेहा है।" बुवा ने कहा।

"घुन्नी नागिन है बुवा जी।" सहदेई ने समर्थन किया।

इसके पश्चात् वे दोनो अर्द्ध-सन्तुष्ट हो वहाँ से चली गई।

सहदेई ने बच्चो को कई दिन से सँभाल कर रक्खी लाई और गट्टे दिये और बुवा जी ने कथा को विस्तार देने के लिए बाहर पदार्पण किया।

कोठरी मे बन्द वैजंती कुछ क्षण रोती रही। पर रोने का कार्य ऐसा नही कि निरन्तर चलता रहे। आँसू मोतियो की भाँति है। जिनका मूल्य उनकी अल्प संख्या मे है। कदाचित् इसी मूल्य को बनाये रखने के लिए ही जो सुख-दु.ख आँसुओ को उत्पन्न करते है, वही उन्हे सुखा भी देते है।

थोडी देर मे वैजंती जैसे जागी। एक नशा-सा उस पर से उतर गया। उसने पाया कि वह खाट पर चित्त अकेली पडी है और उस अँधेरे मे सब वस्तुएँ उसके सम्मुख मूर्तिमयी हो गई है।

उसी समय एक गम्भीर भारी स्वर उसके कानो मे पहुँचा।

वह जैसे विद्युत शक्ति से तत्क्षण उठकर बैठ गई ।

वह यदि पडी रही तो पशु भूखे रहेंगे । अपने बैल का करुण स्वर उसे कोठरी मे बाहर खीच लाया । इधर-उधर दृष्टि दौडाई; हल्की मुस्कान उसके मुख पर आ गई और वह कुट्टी काटने के स्थल की ओर चली ।

चारे पर गँड़ासे के गिरने का शब्द सुन पशु रँभा उठे । वैजती को लगा कि आज उन्हे भोजन देने मे विलम्ब हो गया है । उसने काटने मे शीघ्रता की । थोड़ी सी काटी और उठाकर उनके सामने डाल आई । फिर आराम से धीरे-धीरे काटने लगी । इस घर मे आत्मीयता के आधार वे पशु ही थे । उनके साथ उसके सम्पर्क मे न कोई सामाजिक बाधा थी न पारिवारिक ।

किसोरी थोड़ी देर मे हरिसुन्दर को लिये लौटी । वैजंती को कुट्टी काटते देखा और भीतर चली गई । हरिसुन्दर वही चरी के गोल-गोल टुकड़े एकत्र करने लगा । सहदेई के भी दो बालक आ गये । अच्छा खासा खेल चल निकला ।

बुवा जी जब छोटी बहू की धृष्टता और अपने शीघ्र प्रस्थान का विज्ञापन करके लौटी, तो उन्होंने यह दृश्य देखा । जलकर खाक हो गई ।

उन्हे लगा कि इतना कहने सुनने का वैजती पर कोई प्रभाव नही पडा है । वह उस समय वहाँ से इसलिए हट गई थी कि बुवा का मुख न दिखाई पड़े । पर बुवा भी इसे देख लेगी । वैजंती ने बुवा की पीठ देखी और जोर से गँड़ासा चारे पर मारा ।

बच्चों से कहा—"जाओ रे, बुवा जी आई है, लाई गट्टा लाई है ।"

और वे बालक खेल छोड बुवा जी से लाई-गट्टा माँगने उठ दौडे ।

हरिसुन्दर ने कहा—"लाई !"

ननको बोली—"गट्टा ।"

इन लोगों को अपने चारों ओर पाकर बुवाजी तग आ गई । वह वैजंती को छद्म पराजय का ज्ञान पाते ही अपनी प्रसन्नता का कोष गवाँ बैठी थी । उनकी विजय इतनी अल्पजीवी होगी, इसका उन्हे ध्यान न था ।

पूछा "किसने कहा कि मै लाई गट्टा लाई हूँ।"

और बालकों ने एक स्वर से उत्तर दिया—"काकी ने।"

बुवा जी का मुख मारे क्रोध के विकृत हो गया। इस छोकरी का इतना साहस कि बालको को उनके पीछे लगाये।

वे तेजी से वैजंती के पास पहुँची।

"क्योंरी, तैने मुझे लाई गट्टा ले जाते देखा है?"

वैजन्ती ने सुना नहीं। वह कुट्टी काटती रही।

"सुनेगी नही क्या? बता न तैने मुझे लाई गट्टा लाते देखा है?"

बालक भी आकर वहाँ एकत्र हो गये।

वैजती ने हाथ का पूला समाप्त कर पूछा—"क्या बात है बुवा जी?"

बुवाजी ने प्रश्न और तेजी से दुहराया।

"नही, मैंने तो नही देखा।"

"फिर इनसे क्यो कहा?"

"सामने बैठे थे; टाले नही टलते थे। उन्हे उठाने को कह दिया। यही गुल्ले छिटक कर किसी के लग जाते तो....।"

बुवा जी की समझ में बात नही आई। बोली—"तू बहुत सिर चढ़ रही है।"

वैजती ने दूसरा पूला उठाया और गँड़ासे का प्रथम प्रहार किया।

"रामसरन की बहू।" बुवा जी ने तीव्र स्वर से पुकारा।

अब जैसे वैजंती ने चुनौती स्वीकार कर ली।

उसने गँडासा एक ओर रख दिया और अपने दोनो नेत्र बुवा जी के नेत्रों से मिला दिया। बोली—"बुवा जी आज तुम्हे क्या हो गया है? मुझे चारा काट लेने दो। पीछे जो कुछ कहना हो कह लेना। पशु भूखे खडे है।"

वैजंती कभी बुवा के सम्मुख बोलती न थी। पर माँ जिस प्रकार सन्तान की रक्षा में सिंहनी बन जाती है, इसी प्रकार उसके पशुओं ने इस संघर्ष में उसे शक्ति प्रदान की।

बुवा आश्चर्य से सन्न रह गई। आज रामसरन की बहू की इतनी लम्बी ज़बान कैसे हो गई ? पर बहू से यदि दब रहेगी तो शासन क्या करेगी। फिर पशुओं से उनकी समानता ? पशुओं का काम पहिले और उनका काम पीछे ! वे वास्तव मे चिढ गई।

"हाँ, बैल तो तुझे बडे प्यारे है; आदमी कुछ नही।"

वैजंती के मन में उठा कि बैल यदि न होगे तो हल मे क्या आदमी जाकर जुतेगे। पर वह चुप रही।

बुवाजी का क्रुद्ध स्वर सुनकर किसोरी आ गई।

"क्या हुआ बुवाजी ?"

वह भी उडती-उडती देवर की प्रशंसा सुन आई थी और उससे उसे आनन्द ही हुआ था। उसका सिर दूसरो के बीच मे ऊँचा हो गया।

पर जब प्रशसित व्यक्ति से अधिक सम्बद्ध वैजंती की ओर उसने देखा तो एक प्रकार की ईर्ष्या उसमे उमड आई।

मन की गहराई मे उठा कि हवालात मे जाने वाला व्यक्ति रामसरन न होकर रामविलास क्यो न हुआ ? अथवा वह रामविलास की पत्नी न होकर रामसरन की पत्नी क्यों न हुई।

वैजंती है, इसलिए उस कल्पित स्थान से उसमे प्रतियोगितात्मक सपत्नीभाव जाग्रत हो गया। पर यह भावना हृदय मे गहरे तल मे थी। ऊपर इस भावना को यदि वह स्पष्ट देख पाती तो उसे कुचलने मे प्रयत्नवती न होती। पर वह भीतर थी, उससे अदृश्य।

बुवाजी ने कहा—"रामसरन की बहू ऐसी बातें बोलती है कि. .।"

वैंजंती को, जब कि उसके पशु बाहर भूखे खडे थे, यह असह्य हो गया। बोली—"कह रही हूँ कि कुट्टी काट लेने दो, उसके पीछे जो कुछ तुम्हे कहना हो कह लेना। मैं सब बैठकर सुन लूँगी पर वे सिर हुई जा रही है।"

तुरन्त ही उसे अनुभव हुआ कि अन्तिम वाक्य नहीं कहा जाना चाहिए था। पर तभी दूसरे पक्ष ने कहा क्यो नहीं कहना चाहिए था। वह जो उनके

मन मे आये कहनी अनकहनी कहे और मै तनिक सी बात भी न कहूँ ।"

पर जिससे वह डरती थी वही हुआ। बुवाजी ने वाक्य पकड लिया और उसे तेजी से दुहरा दिया।

"हाँ, मै तो इसके सिर हुई जा रही हूँ । कैसी कैंची सी जबान चलाती है, बडा छोटा कुछ नही देखा जाता ।"

वैजंती गँड़ासा छोडकर उठ खडी हुई । किसोरी से बोली—"जेठानी, मेरे बस का इस प्रकार कुट्टी काटना नही है । तुम जेठ जी से कह देना, वे ससुर जी से कह देंगे । ये यहाँ सिर पर खडी चिल्लाती रहेगी । यदि गँडासा मेरे हाथ मे लग गया तो कौन इलाज करा देगा ।"

यह नवीन दिशा पार्वती की कल्पना से परे थी । जहाँ तक पशुओं का सम्बन्ध है, वहाँ किसोरी वैजती के साथ होगी । क्योंकि यदि वैजंती कुट्टी नही काटेगी तो किसोरी के अतिरिक्त और कौन काटेगा। पुरुषो को बाहर के काम से ही अवकाश नही मिलता ।

और किसोरी बुवाजी का हाथ पकड उन्हे वहाँ से हटा ले गई । उन्होने विरोध नही किया । पर उन्हे अनुभव हो गया कि दोनो बहुएँ उनके विरुद्ध एक हो गई है । अपनो इस विवशता पर उस वृद्धा के नयनो मे आँसू आ गये ।

५

कुछ विषय हे जो मानव-जोवन मे अत्यन्त महत्वपूर्ण है । पर जबतक छिपे है तब तक कोई उनको ओर कोई दृष्टिपात नही करता । वे जैसे होते ही नही । पर यदि एक बार वे सम्मुख आ जाते है तो उनकी रोचकता और उपादेयता उन्हे प्रस्फुटित करती जाती हैं ।

ऐसे विषयो को जाग्रत रखने के लिए यह आवश्यक है कि उनमे दो पक्ष सम्भव हों । पक्ष और विपक्ष की उत्पत्ति के पश्चात् वह विषय उस विरोध मे से जीवन-रस ग्रहण करता रहता है और पनपता रहता है ।

रामसरन के विषय मे भी यही बात हुई । उसे अभी तक गाँव वाले

जैसे भूले हुए थे। पर पुलिस को उसका अपराध प्रमाणित करने का जो अवसर मिला था वह ज्यों-ज्यों समाप्ति के निकट आता जाता था त्यों-त्यों गाँव मे विचित्र रीति से इस काण्ड की चर्चा बढती जा रही थी, आन्तरिक सहानुभूति नवयुवको और वृद्धों की रामसरन की ओर थी।

एक दल मे उत्साह था और घर की प्रतिष्ठा के विषय मे भावुकता थी और दूसरा दल था जो अपनी बची-खुची मान-मर्यादा को चिता तक अक्षुण्ण पहुँचा देने मे प्रयत्नशील था।

इनके अतिरिक्त व्यक्ति थे जिन्हे अपना क्षुद्र जीवन छोटे तौर पर बनाना था और इस क्रिया मे, किसी भी प्रकार हो, शासन-यंत्र की सहानुभूति पाने के इच्छुक थे। ये वे लोग थे जो किसी न किसी प्रकार यत्र के अनियमित रूप से आभारी थे। अथवा यत्र ने भविष्य मे उनका उपकार करने का वचन दिया था।

जब एकाएक बहुत से लोग एक प्रकार से सोचने लगते है तो वही आन्दोलन कहा जाता है।

गाँव के शासन को अनुभव हुआ कि रामसरन के पक्ष मे गाँव मे आन्दोलन है। यह शका और भी बलवती हो गई जब हरिनाथ ने कारिन्दा सा'ब को सूचना दी कि गाँव के कुछ लोग रामसरन के विरुद्ध गवाही देने वालो को मारने पीटने का प्रबन्ध कर रहे है।

इन विषयो मे कारिन्दा सा'ब समय रहते ही कार्य करने वाले थे और उन्होने यह सूचना तत्काल थानेदार सा'ब को भिजवा दी।

थानेदार सा'ब ने इस तनिक सी बात के लिए स्वय कष्ट करना उचित न समझ कर दो सिपाहियों-द्वारा आन्दोलन के नेताओ को बुला भेजा। नेता कौन है यह निर्णय करने का अधिकार हरिनाथ ने अपने ऊपर लिया। करिन्दा सा'ब ने हरिनाथ को सौंप दिया।

हरिनाथ की निर्णायक शक्ति सतर्क थी। तर्क था कि रामसरन के पक्ष मे सब से अधिक कौन बोल सकता है। उत्तर स्पष्ट था कि रामसरन का भाई। और आन्दोलन के नेता होने का सौभाग्य रामविलास को प्राप्त हुआ।

घर पर वह था नही, खेतो मे उसे खोजना पडा। वहाँ भी वह नही मिला।

सिपाहिया ने पूछा उसके अतिरिक्त और भी तो कोई होगा ?

हरिनाथ अब झमेले मे पड गया। किसका नाम ले पर नाम तो लेना ही होगा। और उसने आदेश्वर का नाम ले दिया।

सिपाही हरिनाथ सहित उसके द्वार पर पहुँचे। रामावतार के घर कह गये कि रामविलास आते ही थाने मे भेज दिया जाय।

आदेश्वर और रूपमती टोप बुन रहे थे। सिपाहियो ने जाकर सन्देशा कहा। आदेश्वर ने कार्य बन्द कर दिया। ध्यान से उन तीनों मूर्तियो की ओर देखा ओर फिर रूपमती की ओर। हल्की मुस्कान उसके ओठो पर दौड गई। इसका अर्थ था कि उसके मुख से दो-चार शब्द निकल गये है उनका प्रभाव पडना प्रारम्भ हो गया है।

आदेश्वर ने पूछा कि उसका नाम किसने वताया है।

"हरिनाथ ने।"

"ये गाँव के कौन है।"

सिपाही इस प्रश्न पर चकित हो गये। वे यही जानते थे कि जिसके द्वार पर जाकर खडे हुए वही थर्रा उठा। जिससे कहा वही उनके साथ हो लिया।

आदेश्वर के यहाँ आते समय एक शका मन मे उठी थी वह पूर्ण हो गई।

उसने कह दिया कि वह न चल सकता है और न जायगा। दो मील पैदल चलने की सामर्थ्य उसको नही है। यदि थानेदार उसे बुलाना ही चाहते हो, तो कृपया इस बार ताँगा लेकर आवे।

सा'ब लोगों के लिए जो हैट बनाता है उसके मुख से ऐसी बातें उन्हे ठीक ही लगी।

तभी रूपमती के हृदय में एक विचार उठा। उसने उठ कर एक सिपाही को अपने निकट बुलाया। सिपाही ने इसे अपना परमादर समझा।

रूपमती ने पूछा—"किस-किस के नाम हरिनाथ बाबू ने बताये है ?"

उसे ज्ञात हुआ कि केवल रामविलास और आदेश्वर के।

उसने बडे धीरे से सिपाही के कन्धे पर प्रीति से हाथ रखकर कहा—"गुरुसेवक, क्या तुम समझ नहीं पाये कि हरिनाथ अपने वैरियो को फँसाने के लिए यह सब कर रहा है। कारिन्दा सा'ब से पूछोगे तो पता चलेगा इस आन्दोलन का समाचार भी उन्हे हरिनाथ ने ही दिया है।"

रूपमती-द्वारा इस प्रकार कही गई बात गुरुसेवक को सच्ची न लगती तो वह आश्चर्य की घटना होती।

उसने रहीमबख्श को बुलाकर रूपमती की बात सुनाई और कहा कि उचित है वह जाकर कारिन्दा सा'ब से पूछ आये कि यह सूचना उन्हे किसने दी है।

रहीमबख्श को बात जँच गई। पुलिस मे वह दस वर्ष से था, पर उसने दूसरों की आज्ञा का पालन ही किया था। अपनी बुद्धि और योग्यता के प्रयोग का अवसर उसे बारम्बार मिल कर छिन-छिन गया था। इस स्वतन्त्र अनुसन्धान के अवसर को वह जाने न देना चाहता था। उसने कारिन्दा सा'ब के पास जाना स्वीकार कर लिया।

रहीमबख्श को जाते देख हरिनाथ को बुरा लगा। वह कदाचित् समझ रहा था कि उसे इन सिपाहियों का अफसर बनाकर भेजा गया है।

उसने कुछ तेजी से पूछा—"कहाँ चले रहीम ?"

रहीमबख्श को कान्सटेबिल के नाम का साधारण व्यक्ति द्वारा इस प्रकार प्रयोग बुरा लगा।

उसने तेज़ी से उत्तर दिया—"तुम वही बैठो। यह पुलिस का काम है। बीच मे बोलने का हक किसी को नहीं।"

हरिनाथ को यह फटकार बुरी लगी। पर जो रहीम ने कहा उसका अधिकार था। हरिनाथ चुपचाप वही बैठा रहा। रहीम को लौटने मे पर्याप्त समय हो गया। हरिनाथ बैठा रहा। वैसे उसकी अपमान सहने की

शक्ति असाधारण थी, पर अन्य लोगो के सम्मुख अब जैसे उसमे कमी आ गई।

जब रहीम को लौटने मे समय अधिक हो चला तो उसे लगा कि वह खाट जैसे उसके नीचे जलने लगी है। वह खडा हुआ और जाने लगा।

गुरुसेवक की दृष्टि हरिनाथ पर लग गई। जब वह चार डग चला गया तो उसने पुकारा—"हरिनाथ, कहाँ चले ? बैठो; तुम्हे हमारे साथ थाने तक चलना पडेगा।"

हरिनाथ को यह बहुत बुरा लगा पर लौटना अनिवार्य था।

पूछा—"क्यों गुरुसेवक ?

"पता नही भैया, थानेदार सा'ब की आज्ञा ही ऐसी है।"

मन मार गुरुसेवक की आज्ञा का पालन उसे करना पडा। अपनी जिस लँगडी प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए इतना जोखिम लिया था वही खण्डित हो सब के सम्मुख भूमि पर गिर पडी। हरिनाथ ने खाट पर बैठ इच्छा न होते हुए भी सिर नीचा कर लिया।

रूपमती ने पूछा—"मुशी जी, पानी-वानी लाऊँ ?,'

और माँगने पर गुरुसेवक को पानी लाकर उसने पिलाया। हरिनाथ से पूछा तो प्यास होने पर भी उसने मना कर दिया।

रहीम लौट आया। गुरुसेवक से उसने एकान्त मे वार्तालाप किया। हरिनाथ ने ध्यान से उनकी मुद्रा देखी और फिर दृष्टि नीची कर ली।

रहीम ने पूरी खोज-बीन की थी। सब ओर से उसे यही ज्ञात हुआ था कि कथा का उद्गम स्थान हरिनाथ ही है।

कारिन्दा के सिपाहियों मे ऐसे थे जो अन्य स्थानों से भी इस समाचार की सत्यता पा चुके थे। पर हरिनाथ को तनिक छेड़ने का अवसर हाथ आने पर उन्होंने भी समस्त उत्तरदायित्व उस पर डाल दिया। यह घटना हरि-नाथ के स्वभाव की प्रतिक्रिया-स्वरूप थी।

सब समाचार एकत्र कर सिपाहियो ने फल निकाला कि वास्तव में गाँव मे कुछ नही है। वे दोनो केवल हरिनाथ की उड़ाई अफ़वाह-द्वारा ही

व्यर्थ तंग किये गये है । पर जब यहाँ तक आये है तो उन्हे कुछ करके ही जाना चाहिए ।

क्या करना चाहिए, इसी चिन्ता मे थे कि रूपमती ने उनकी सहायता की। बोली—"मुंशी जी, आप हरिनाथ बाबू को लेकर चलिए, मै भी आती हूँ। थानेदार सा'ब को सब बाते समझा दूँगी। राजन की माँ आज-कल यहीं है न ?"

राजन थानेदार सा'ब के लड़के का नाम था।

"हाँ आजकल यही है । बड़ी माँ जी भी यही है । परसो ही तुम्हे पूछ रही थी, सब बाते सुनाई तो बडी प्रसन्न हुई।"

"हाँ, तो मै आऊँगी। उनके भी पैर पडना है।"

इस प्रकार अपना कार्य बँटता पाकर सिपाहियो को आश्वासन हुआ पर रामविलास के वहाँ आने की अब आवश्यकता नही है, इस ओर किसी का ध्यान नही गया। वे लोग वही से थाने को चल दिये।

हरिनाथ के लिए यह दण्ड शारीरिक से अधिक मानसिक था। दो मील चल कर मित्र समझे जाने वाले थानेदार के सम्मुख उपस्थित होना मार्मिक कष्टदायक था। चलते-चलते उसने परिणाम निकाला कि पुलिस-वाले चाहे कितने ही मित्र क्यों न हो, उन पर कभी विश्वास न करना चाहिए।

उसे ध्यान न रहा कि उन्हे जो वेतन मिलता है वह मित्रता निभाने के लिए नहीं, वरन् लचक-विहीन लोहे की भाँति निर्ममता से अपना कर्त्तव्य-पालन करने के लिए।

थाने पर पहुँच कर रहीम और गुरुसेवक ने अपनी समस्त कार्रवाई थानेदार सा'ब को सुनाई। पुलिस के सिपाही, शासन-यत्र के इस महत्वपूर्ण पुर्जे, को व्यर्थ तंग किया जाय, यह उन्हें भाया नही। और जब उन्हे बताया गया कि हरिनाथ उनके साथ-साथ उनसे मिलने के लिए आया है, । तो उन्होंने हुक्के का लम्बा कश लेते हुए उसे बाहर बैठाने की आज्ञा दे दी।

स्वयं अपने बच्चे को गेद फेंकना सिखाने लगे। गुरुसेवक ने रूपमती के आगमन की इच्छा की सूचना भी दी और कह दिया कि उसकी सहायता से ही सब भेद खुला है।

थानेदार सा'ब गम्भीर हो गये। बोले—"अच्छा, हरिनाथ को पानी-वानी का कष्ट न हो।"

गुरुसेवक समझ गया कि हरिनाथ को कई घण्टे बैठाये रखना है।

थानेदार ने सोचा कि रूपमती से सब हाल सुनने के पश्चात् वे हरिनाथ से भेट करेंगे। यदि वास्तव मे उसने पुलिस को व्यर्थ तंग किया होगा तो उसे अच्छा पाठ पढायेगे।

आध घण्टे बाद भीतर से समाचार आया कि रूपमती आ गई है।

आदेश्वर के आने से पहले रूपमती थानेदार सा'ब के यहाँ आती थी, पशुओ की गोबर-लीद साफ करने और बर्तन माँजने। पर आदेश्वर के आगमन के कुछ समय पहले उसने वह काम छोड दिया था। अब वह क्या करती है? यह जब थानेदार सा'ब की वृद्धा माता ने सुना तो उदारमना वे प्रसन्न हुई। उन्होने पितृ-विहीन अपने एकलौते पुत्र का वैधव्य की ज्वाला मे जल कर बड़े कष्टो से पढाया था। वे जानती थी कि यह कष्ट क्या होता है। और तनिक से आश्रय का क्या अर्थ होता है।

आदेश्वर क्या है, कैसा है, क्या करता है, यह सुनकर उनकी प्रसन्नता और उनका सन्तोष और भी बढ गया। कहा कि वे किसी दिन उसके आदेश्वर को अवश्य देखेगी।

इस विषय पर बात हो रही थी कि थानेदार सा'ब ने प्रवेश किया। रूपमती ने प्रणाम किया। थानेदार ने उसके वस्त्रों तथा मुख की ओर देखकर कहा—"अरे तू तो अब पहचानी भी नही जाती।"

माँ ने बेटे से पूछा—"क्या तूने इसके आदेश्वर को देखा है? कैसा है वह?"

"देखा तो नहीं, पर सुना है कि विद्वान है।"

"हाँ अंग्रेजी की मोटी-मोटी दो ट्रंक भर किताबे लाये है। जब टोप बनाने से थक जाते है तो वही पढा करते है।"

थानेदार की आदेश्वर मे रुचि बढी। बोले—"क्या बिल्कुल चला फिरा नहीं जाता ?"

"बस सौ दो सौ गज बैसाखी के सहारे उछल कर चल लेते है।"

"मै उनसे मिलना चाहूँगा।" थानेदार सा'ब का विद्यार्थी जीवन का पुस्तक-प्रेम हरा हो आया। पर शीघ्र ही उन्हे ध्यान हुआ कि वे थानेदार है। और सँभल गये। बोले—"कभी कारिन्दा सा'ब के यहाँ आयेगे, तो बुलायेगे। वहाँ तक तो वे आ सकेंगे न ?"

"हाँ, प्रयत्न करने पर। दुर्बल बहुत है। प्रत्येक समय कहते रहते है कि बस मरने के लिए ही तो अपनी जन्मभूमि मे आया हूँ।"

"ऐसे होनहार को परमात्मा ने क्या किया ?" द्रवित होते हुए माँ ने पूछा—"उसकी माँ तो नही है ?"

"नही।"

"हाँ, यह अच्छा है बहुत अच्छा है।" और उन्होने आदेश्वर की माँ को उठा लेने के लिये परमात्मा को धन्यवाद दिया।

"तुझे मालूम है कि यह गाँव मे कैसा आन्दोलन चल रहा है ?"

रूपमती मुस्काई, बोली—"गाँव मे जो पहले होता था, वह भी मुझे ज्ञात होता था और आज भी जो हो रहा है वह भी थोडा-बहुत मुझे ज्ञात है।"

थानेदार ने थानेदार बनकर कहा—"तो फिर सच-सच बता कि बात क्या है ? इस आन्दोलन का नेता कौन है ?"

रूपमती गम्भीर हो गई। बोली—"बाबू जी, पहले भी कभी झूठ नही बोला और आज भी नही बोलूँगी।"

थानेदार ने आशामय नेत्रों से उसकी ओर देखा।

रूपमती ने कहा—"बाबू जी, जो सच है वह सच ही है। आपने सब कुछ किया है। रामसरन ने अपने पिता का अपमान करनेवाले को दण्ड दिया।

और समय होता तो वह पूजा जाता, आज समय है कि उसपर हत्या का अभियोग आप जैसे बाल-बच्चेवाले, सच्चे और धर्मात्मा मनुष्य-द्वारा लगाया गया है।"

वह रुकी और थानेदार के चेहरे पर दृष्टि डाली। उनकी माँ उसकी ओर विचित्र दृष्टि से देख रही थी। उनकी दृष्टि प्रश्न कर रही थी बेटा ऐसा तूने क्यों किया ? थानेदार विचार-मग्न रहे।

रूपमती ने कहा—'बाबूजी, उसके युवती पत्नी है। कष्ट क्या होता है, मै जानती हूँ। यदि हत्या का अभियोग प्रमाणित हो गया तो क्या होगा, यह भी मुझे ज्ञात है। रामसरन के प्रति अन्याय को इस प्रकार पनपते देख मुझसे नहीं रहा गया।

"मैंने लोगों से कहा—रामसरन ने वीरता का कार्य किया है। गाँव की, वृद्धो की प्रतिष्ठा की रक्षा की है। जो उसके विरुद्ध झूठी गवाही देगा वह कायर है, कपूत है। जो मैंने दूसरों से कहा है वह आपसे भी कह रही हूँ। न एक शब्द कम, न एक शब्द अधिक।

'इसपर इस आन्दोलन की नेता, यदि कोई है तो मै हूँ। मैंने व्याख्यान नहीं दियी है। जो मुझसे मिलता है, उससे यह बात कह देती हूँ।"

रूपमती चुप हो गई। थानेदार और भी गम्भीर—विचारमग्न। उनकी माँ और पत्नी भय से काँप उठी।

थानेदार ने रूपमती के तेजस्वी मुख की ओर देखा। ऐसा मुख उसका उन्होंने कभी नहीं देखा था। सत्य और प्रतिष्ठा के लिए लडती वीराङ्गना का वह मुख था। उनके नेत्र झपक गये।

रूपमती ने कहा—"बाबूजी, मै आपके घर की टहलनो हूँ। यदि इस विषय में दण्डनीय हूँ तो मै हूँ। अथवा वे लोग जो इस बहाने बेकसूरों को कष्ट पहुँचाने का प्रयत्न करते है।

माँ ने कहा—,'चित्तरंजन !"

थानेदार सा'ब ने दृष्टि उठाकर माँ की ओर देखा। माता पुत्र के नयन

मिले। माता के नेत्रों ने विनती की 'बेटा, इसमे से निकल आ। ऐसा काम तूने क्यों किया ?'

उस करुण विनती का सामना वे न कर सके। उठ कर वहाँ से चले गये। सोचते-सोचते वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यह भाव रूपमती को आदेश्वर से प्राप्त हुए है। और इस इस आन्दोलन का नेता वास्तव मे आदेश्वर हैं। पर वह अपाहिज, मरणासन्न है।

यदि यह सब बाते उनकी माँ और पत्नी से सम्मुख न हुई होती तो इनका विशेष प्रभाव उन पर नही पडता। पर माँ की वह दृष्टि । और वे हिल गये। एक अमंगल भावना उन पर छा गई। अकेले रहना उन्हे कष्ट-प्रद हो गया। वे बाहर निकलकर थाने मे पहुँचे। देखा, एक चारपाई पर हरिनाथ बैठा है।

"अरे हरिनाथ है क्या ?"

हरिनाथ उठकर खडा हो गया। मन मे कहा—यह पुलिस के मनुष्य मित्र है ! क्या तनिक देर पहले निकलकर नही आ सकते थे ? व्यर्थ मुझे दो घण्टे बैठाये रक्खा। इस व्यवहार के वास्तविक अर्थ से वह अनभिज्ञ न था।

उसने उन्हे प्रणाम किया।

"बैठो, कहो कारिन्दा सा'ब प्रसन्न तो है न ?"

"आपकी दया है।"

"कैसे कष्ट किया ?"

हरिनाथ के ऊपर यह नवीन भार आ पडा। वह चकित हो गया। उससे कहा गया था कि थानेदार सा'ब ने उसे बुलाया है। वह जानता था वे उसे कष्ट न देगे। पर सिपाहियो के कहने पर उसे आना पड़ा। उसे लगा कि इस समय उन लोगो के विरुद्ध दो शब्द कहने का अवसर है।

बोला—"आपके सिपाहियों ने ही कहा कि आपने बुलाया हैं। मैं''।"

वह आगे कहने जा ही रहा था कि थानेदार सा'ब बोल उठे—"हाँ, ठीक है। कहिये आपके गाँव का क्या-हाल चाल है, कारिन्दा सा'ब ने कहलाया था कि गाँव मे कोई षड़यन्त्र रचा जा रहा है !"

हरिनाथ को बिना-माँगे अवसर मिल गया। बोला—"हाँ षड्यंत्र साधारण नही भीषण जान पड़ता है।"

"ऐसा ?"

"हाँ, गाँव के कुछ लोग····।"

"क्या ?"

"पुलिस के गवाहो को धमकाकर फोड लेने की तैयारी कर रहे है।"

"इन लोगों के नाम बता सकते हो ?"

"क्यो नही ? पहले तो रामसरन का भाई रामविलास, फिर वह लँगडा आदेश्वर····।"

"हूँ।"

"तुम लोगो के वहाँ रहते, ऐसा हो यह तो ठीक नही है।"

"हम लोग····।"

हरिनाथ वाक्य प्रारम्भ ही कर पाया था कि भीतर से चित्तरंजन बाबू के पुत्र ने बाबूजी को माँ-द्वारा बुलाये जाने का सन्देश दिया।

और वे बिना हरिनाथ से एक शब्द कहे भीतर चले गये। हरिनाथ ने समझा कि अब वह और दो घण्टे के लिए बँध गया। इतनी देर मे रात हो जायगी। जिसका प्राय: प्रत्येक व्यक्ति वैरी है, उसके लिए अँधेरे मे एक कोस बहुत लम्बा मार्ग है। इस कल्पना से वह भयभीत हो गया।

थानेदार ने देखा कि रूपमती वैसी ही बैठी है। पूछा—"और क्या बात है ?"

रूपमती ने पूछा—"बाबूजी, मुझे हवालात मे रक्खेगे कि मैं जाऊँ, फिर अँधेरा हो जायगा ?"

माँ ने पुत्र की ओर देखा।

पुत्र ने कहा—'खवासिन, तुम्हे हवालात मे रखने से यह आन्दोलन रुकेगा नहीं, नही तो मैं वह भी करता। तुम जा सकती हो। पर ध्यान रखना कि सरकारी कामों मे बाधा डालना ठीक नही होता।"

"बाबूजी, यह बाधा डालना नही है, उन्हे सच्चा और दृढ़ बनाना है।"

चित्तरंजन समझ गये कि यह उसके मुख से आदेश्वर बोल रहा है। मन मे कहा कि खूब पढाया है। बोले—"तुम जा सकती हो पर अपने आदेश्वर बाबू से कहना कि जो कुछ वे कर रहे है, वह ठीक नही है, वे विपत्ति मे पड़ सकते है।"

"जो मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा है, उसके लिए और कौन-सी विपत्ति होगी, बाबूजी ?"

"जान पडता है तू अब बातें करने मे बहुत चतुर हो गई है। अच्छा इतना कह देना कि एक दिन मेरी उनकी भेट होगी। तू अब जा सकती है।"

रूपमती थानेदार-माता और थानेदार-पत्नी के चरण छू, आशीष लेकर चल पडी। और चित्तरंजन हरिनाथ की ओर चले। पर बीच मे ही उनके मुंशी ने कुछ आवश्यक कागजों पर ध्यान देने के लिए उन्हे बुला लिया और हरिनाथ को लम्बी प्रतीक्षा करनी पडी।

इसी बीच रामविलास ने थाने मे प्रवेश किया। 'दिवान जी' रहीम-बख्श सामने ही भूमि पर बैठे हुक्का पी रहे थे। हरिनाथ की चालबाजी और उसके प्रति थानेदार सा'ब का व्यवहार देख वह हवा का रुख समझ गये थे। उन्होने उठ कर दूर ही उसे रोक लिया।

बोले—"थानेदार सा'ब के पास जाने की जरूरत नही है। उन्हे हमने समझा दिया है। हाँ, थोड़ा भूसा उनके लिए भिजवा देना और देखना हमे भूल न जाना।"

रामविलास ने दृष्टि और मुख-मुद्रा से उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट की। थाने आकर इतना सस्ता छूट जाना उसके लिए बहुत था। पुलिस से उसका यह पहला सम्पर्क था। शरीर बलशाली होने पर भी उसका हृदय कॉप रहा था।

इतनी शीघ्र छुट्टी पाकर वह शीघ्रता से लौट चला; तभी थानेदार सा'ब की दृष्टि उस पर पड गई। उसके गठे शरीर की प्रशसा उनके मन मे आई विचार उठा कि यह जवान तो पुलिस के योग्य है।

"कौन है वह ?"

तभी एक सिपाही बुलाने रामविलास के पीछे दौड़ा।

"चलो तुम्हे थानेदार सा'ब बुलाते है।"

रामविलास को लगा कि गई विपत्ति लौट आई। पर यहाँ जो कुछ पडेगा, उसका सामना तो उसी को करना होगा। मौत और पुलिस के सम्मुख कोई दूसरा सहायक नही हो सकता। न मौत बाँटी जा सकती है, न अपराध।

सिर से पैर तक थानेदार ने रामविलास को देखा।

"क्या नाम है तेरा ?"

"रामविलास।"

"रामसरन का भाई है ?"

"जी।"

"बड़ा ?"

"जी।"

हरिनाथ को दिखाकर पूछा—"उन्हे पहिचानते हो ?"

"हाँ, गाँव के हरिनाथ दादा को कौन नही पहिचानेगा ?"

"वे तुम्हारी बडी शिकायत करते है।"

"बाबू, वे बड़े आदमी है, जिसे जो चाहे कह सकते है, जो चाहे कर सकते है।"

थानेदार ने पुन. रामविलास को देखा। रामसरन बलिष्ठ हो सकता है पर सुन्दर नही। इसका गठा शरीर।

"गाँव जा रहा है ?"

"जी"

"कैसे आया था !"

"बुलाया था।"

"अच्छा जा, हाँ, इन अपने दादा को भी लेते जाओ। रात हो जायगी तो इन्हे डर लगेगा।"

उन्होंने हरिनाथ के निकट आकर कहा—"इस जवान के साथ चले जाइए। रात हो जायगी तो डरियेगा न ?"

हरिनाथ तत्क्षण उठकर खड़ा हो गया। छुट्टी मिली यह सौभाग्य था।

"मैं आपसे और बातें करना चाहता था।"

हरिनाथ का हृदय बैठ गया।

"फिर किसी दिन सही।"

तब हरिनाथ और रामविलास गाँव को लौटे। साथी विचित्र थे। हरिनाथ रामविलास के साथ की अपेक्षा अकेला आना स्वीकार करता। पर थानेदार सा'ब ने जब कह दिया है तो....।

उसने सोचा कि चाहे कुछ भी हो, मार्ग में वह उसका खून नहीं कर सकता। क्योंकि इतने व्यक्तियों ने दोनों को साथ देखा है। ऐसा करने पर वह तुरन्त पकड़ा जायगा।

मार्ग में हरिनाथ ने साहस कर पूछा—"क्यों रामविलास, कैसे आये थे ?"

"थानेदार सा'ब को कुछ भूसा चाहिए था, उसी के लिए बुलाया था।"

हरिनाथ को इस वाक्य से महान कष्ट हुआ। उसके समस्त परिश्रम का फल यही निकला! वह पुलिस से, थानेदार से असन्तुष्ट हो गया। जो लोग उसका तनिक सा काम नहीं कर सकते, वे क्या खाक शासन करेंगे। उसने परिणाम निकाला कि निकट भविष्य में पुलिस की शक्ति क्षीण हो जायगी। ऐसे निकम्मे विभाग की शक्ति जितनी क्षीण हो जाय, उतनी ही अच्छी। कोई शरीफ़ज़ादा अब उस पर विश्वास न करेगा।

सगोद्वय में विशेष वार्तालाप की सुविधा न थी। हरिनाथ सम्भाव्य आशंका से काँपते और रामविलास अपने सौभाग्य से उल्लसित गाँव को लौट चले।

६

रामसरन के महत्व की चर्चा एक रोचक विषय बन गई। नर नारियों में वैजती के प्रति पर्याप्त रुचि उत्पन्न हो गई। इस घटना को जिस नवीन

दृष्टिकोण से देखा जा रहा था वह दृष्टिकोण ग्राम-निवासी बहुत दिनों से भूल चुके थे। वे केवल रहते जाते थे, सहते जाते थे।

वकील उनके सहायक थे, पर इस सहायता का मूल्य उनकी पहुँच के बाहर था और यह सहायता भी सदा ईमानदार की सहायता न थी।

समाज-व्यवस्था के अधार सत्य मानो पर स्थित थे, पर जीवन के बहिरग को उनके साथ मिलाने का प्रयत्न न था। गलती से यह मान लिया गया था कि न्यायालय न्याय के नही झूठ के स्थान है। जो कभी झूठ न बोला हो उसे भी न्यायालय न्यायाधीश के सम्मुख झूठ बोलने मे संकुचित न होना चाहिए। यहाँ झूठ बोलना पाप नहीं है।

न्याय-नीति और भारतीय समाज के आदर्शो मे सहयोग न होने के कारण यह अवस्था आ गई है। पर स्वस्थ समाज इस पर खड़ा नही हो सकता। न्याय-नीति को समाज-आदर्श की नीति पर कसना होगा, और जो समाज के आदर्श के लिए शुभ है, वह अन्याययुक्त नही होना चाहिए।

रामसरन के मुकदमे के विषय मे जो धारणा और जो भावना गाँव मे फैल रही थी, वह अस्पष्ट रूप से ऐसी ही थी। इस भावना के स्थूल केन्द्र प्रत्यक्ष ही वैजंती और रामावतार बन गये। पुरुषो की सहानुभूति रामावतार की ओर और नारियों को वैजंती की ओर झुक गई। वैजंती को महत्व प्राप्त हो गया। अब विचित्र बहाने लेकर पास-पड़ोस की नारियाँ उसे देखने आने लगीं।

ऐसे रामसरन की बहू कैसी है। यह एक पड़ोसिन की दृष्टि दूसरी से कहती और फिर दोनो जनी गगरे उठा उस ओर के कुँवे पर जल भरने चल पड़तीं। मार्ग मे वैजंती का घर पडता था वहाँ झाँकती चलतीं और बुढ़िया बुवा अथवा सहदेई से बोलने के बहाने भीतर आ जाती।

देखतीं कि वैजंती साधारण नारी की भाँति बैलो के लिए कुट्टी काट रही है। धूलि से भरे मुख पर पसीना बहने से धारियाँ पड़ गई है। वह कार्यरत गँडासा चलाये जा रही है। अथवा वे देखती कि वह अनाज फटक रही है और धूलि उसके ऊपर उड़-उड़कर पड़ रही है। अथवा वह पीसती

होती। पसीने से उसका शरीर सराबोर होता। एक बालक उसकी जाँघ पर शीश रखकर सोता होता, जैसे कि उसी का हो। इस प्रकार का व्यसन रामाधीन के छोटे लड़के को था।

जो आती वह उसे परिश्रम मे जुटी पाती। जैसे अपने महत्व का भार सँभालने के लिए उसने परिश्रम को सहयोगी बना लिया हो। वे पार्वती बुवा से बात करती और वैजंती की ओर देखती रहती। सहदेई के साथ अमुक की पतोहू और सास के झगडे की आलोचना होती और बीच मे दृष्टि वैजंती पर जा लगती। सहदेई कहती, छोटा बच्चा इससे इतना हिल गया है कि पीछा ही नही छोड़ता।

इन नारियो की दृष्टि मे वैजती का महत्व और भी बढ़ जाता। उन्हे लगता कि वैजती का बलिदान है। पति हवालात मे चक्की पीसता होगा, और वह यहाँ पीसती है।

वैजती को घर मे व्यर्थ, बेकार बैठे जैसे किसी ने पाया ही नही और यह समाचार शीघ्र ही गाँव के नारी समाज मे प्रचारित हो गया। जहाँ दशमुख हों, विषय एक हो, वहाँ विषय की कुशल नही और वही यहाँ भी हुआ।

सन्ध्या समय खेतो की ओर जाते समय एक ने कहा—"देखा नही, वैजंती से जेठानियाँ कितना काम कराती है।"

"यह बुढिया बुवा कौन सी कम है। उसे तो कुछ सोचना चाहिए"

"मैंने उसे जब देखा पसीना से तर।"

"बहिन सच तो यह है कि अपने आदमी के समान आदर और देख-रेख और कोई नही कर सकता। और बहुएँ चारा छूतीं नही, कुट्टी काटना तो दूर।"

"रामसरन नहीं है इसीसे सब उसे करना पड़ता है।"

"बहू है सीधी। हँसती-हँसती सब कर लेती है।"

"बिलकुल देवी है। रूपमती ने ठीक ही कहा था उस दिन—ऐसी बहू बड़े भाग से मिलती है।"

कता ? पता नही बडे-बूढ़े किम प्रकार अपनी लाज ढाँपे समय-यापन कर रहे हैं। इस मूर्खा ने इतने प्रतिष्ठित •परिवार की मर्जाद धूलि मे मिला दी। उसे यदि काम अधिक लगा तो घर मे क्यों नही कहा ? बाहर कहने की क्या आवश्यकता थी।

वे धधकती-फुफकारती घर मे प्रविष्ट हुई। देखा तो नयनो के सम्मुख ही बैठी है। हरिसुन्दर को कंधे पर लादे, तीन और बच्चो को इधर-उधर लुढ़काये हँस रही है। खेल रही है।

यही इससे अधिक काम लिया जाता है। मस्त बैठी खेल रही है और गाँव भर मे कहती फिरती है कि मै काम करती मरी जा रही हूँ। उन्होंने लाल नेत्रों से उसकी ओर देखा। उनकी प्रतिष्ठा के साथ खिल-वाड साधारण बात न थी।

"रामसरन की बहू !" उन्होंने तेज स्वर से पुकारा।

वैजंती ने अपने वस्त्र ठीक करके, हरिसुन्दर को कधे पर से उतारते हुए कहा—"क्या बुवा जी ?"

बुवाजी क्रोध मे भरी रही। मुख से शब्द न निकले। क्या कहे ऐसी निर्लज्जा से, जो अपनी लज्जा अलज्जा मे भेद नही समझती। अपनी सास-जेठानियो को गाँव मे बदनाम करती है और फिर इस प्रकार सीधी बन कर बैठती है कि जैसे कुछ जानती ही न हो।

बुवाजी की मुद्रा देख कर वह सहम गई। बच्चों को अपने ऊपर से हटा दिया, उठकर खड़ी हो गई।

"हम लोग तुझे कौन दुःख दिये डालते है ?"

वैजंती इस प्रश्न का अर्थ नहीं समझी।

बोली—"कुछ तो नही बुवाजी।"

"फिर तू गाँव मे झूठा तूमार क्यों बाँधती फिरती है ?"

"मै ?" वैजंती ने आश्चर्य पूछा।

"हाँ ! यदि तू नही तो कौन ?"

वैजंती चुप रही। उसकी समझ मे कुछ नही आया।

"अब बोलेगी नही !"

"क्या बोलूँ ?"

"यही कि गाँव भर मे जो हमारी बदनामी हो रही है, वह····।"

वैजंती के लिए पहेली अनबूझ थी ।

"जिसे देखो वही कहता है कि बुवा और जेठानियाँ रामसरन की बहू को क्षण भर भी विश्राम नही लेने देती ।"

"मैने किसी से नही कहा । मै काम करती हूँ तो किसी के कहने से नही करती । मेरा काम है, करती हूँ । किसी को उससे मतलब ?"

बुवाजी को लगा कि यह काम करतो है, किसी के कहने से नहीं, अपने मन से । यह उनके शासनाधिकार के विरुद्ध विद्रोह नहीं तो क्या है ? जो इस प्रकार बोल सकती है, वह गाँव भर मे उनकी बदनामी भी उड़ा सकती है ।

उन्होंने निश्चय किया कि अब तक तू ने अपने मन से किया है पर अब तुझे दूसरों का कहा करना होगा ।

इसी के साथ उनके मन मे एक भावना उठी, जिसे व्यक्त करते वे परम लज्जित होती । उन्होने इच्छा की कि रामसरन को यदि लम्बी सजा हो जाय तो कितना अच्छा हो । उस समय वे इस बहू की सब ऐंठ और इसका स्वामिनीत्व झाडकर ठीक कर देंगी ।

बोली—"तुझे बातें बनाना बहुत आता है । यदि मेरी बहू होती तो मैं ऐसी जबान पर अगार रख देती ।"

बात आगे बढ गई । वैजती को लगा कि बुवा जी सीमा से बढ रही हैं । कुछ भी हो वह अपने पति के पृथक भाग की स्वामिनी है । ससुर के साथ सम्मिलित है यह उसकी इच्छा है । गृहस्वामिनी को इस प्रकार के कुवाक्य बोलने वालो यह कौन होती है ? पर उसने मौन रक्खा । जी मे उठा—ऐसी मन में थी तभी तो तुम्हारे बहू नही हुई ।

उसने दृष्टि नीची कर ली । बालक दोनों की ओर अबूझ दृष्टि से देखते रहे ।

"खड़ी-खड़ी मेरी ओर क्या देख रही है। खायेगी क्या मुझे ? जा अदहन चढा दे। जब देखो, दिन भर खेल ही खेल।"

वे क्षण चुप रहीं—"और तेरे इन लच्छनो की बात तो मै आज रामावतार से कहूँगी। ऐसी बहू के घर मे रहते क्या नाक बचानी सम्भव है ?"

वैजंती तिलमिला गई। इसके कहने से क्या मै अदहन चढाऊँगी।

किसोरी को पुकार कर बोली—"जेठानी बुवाजी अभी से अदहन चढाने को कह रही है। मै बैलों को देख लूँ, तुम चढा दो।"

किसोरी ने सूर्य की ओर देखा। अभी से अदहन ! उसने सुन लिया पर कुछ ध्यान नही दिया।

बुवाजी को अपनी आज्ञा का निरादर अनुभव हुआ। वे बोलीं—"नहीं बडी बहू, यही अदहन चढायेगी। फिर बोलीं—"रानी बनी फिरती है। स्वयं दूसरों पर हुकुम चलाती है, और गाँव भर कहता है कि रामावतार की बहिन और बहुएँ रामसरन की बहू को काम करा-कराकर मारे डाली रही है। नहीं बहू, यही चढ़ायेगी अदहन, तू नही।"

वैजंती के जी मे आया कि रोऊँ; आँसू आने को हुए। फिर विचारा कि इस रोने से लाभ क्या होगा ? अपने को कष्ट देना है। वह सचमुच काम करती है यदि कोई कहता है तो झूठ क्या कहता है ?

अब तक अपने कुट्टी काटने पर उसका ध्यान नहीं गया था। कुट्टी काटना उसे अच्छा लगता था, इसलिए काटती थी। पर अब उसे लगा कि घर मे वही नारी है जो कुट्टी काटती है। क्या उसी के जिम्मे यह काम लिखा है। जेठानी है उसके भी तो बैल है। यह क्यों नही काटती। और फिर भावना दृढ़ हो गई; कोई कहता है तो क्या झूठ कहता है।

वह रसोई की ओर न जाकर पशुओं की ओर गई। बुवा के जी मे आया कि वह उसे घसीट कर रसोई में ले जायें और बलात् अदहन चढ़वायें, पर बुद्धिमानी की जो ऐसा करना उन्होंने अनुचित समझा। पर बहू के इस व्यवहार की बात वे रामावतार से कहेगी अवश्य। उनका इतना बडा बड़ा अपमान !

वैजती पशुशाला का एक चक्कर लगाकर दाल बिनने को ले बैठो। बुवा जी अपने लाल, विवशता के अश्रु भरे नेत्रो से उसकी ओर देखता रही और अपने मे कीलित सर्पिणी की भाँति धधकती रही।

किसोरी बुवा जी की यह दशा देख रही थी और देवरानी-बुवा-कलह मे आनन्द ले रही थी। बालक अपने दूसरे खेल मे लग गये और शीघ्र ही आपस में मार-पीट कर बैठे।

एक रोया और बुवा जी ने चिल्लाकर तीनों-चारों को पीट दिया।

७

उपर्युक्त काण्ड को हुए घण्टा भर भी न हुआ होगा कि बाहर से किसी ने पुकारा— रामविलास।"

बुवा जी ने बाहर निकलते हुए पूछा—"कौन है, रामविलास नही है।"

पर जब वह बाहर निकल आई और पुकारने वालों की सूरते देखीं तो सन्न रह गई। देखें—पुलिस के दो सिपाही और हरिनाथ। उनका हृदय काँप उठा।

एक सिपाही ने पूछा—"रामविलास है?"

"नही भैया, वह तो खेत पर गया है।"

तीनो जने वहाँ से चले गये। बुवा काँपती भीतर गई। उनका उतरा मुख किसोरी ने देखा, वैजन्ती ने भी।

"कौन था बुवा जी?" किसोरी ने पूछा।

"मैं तो पहले ही समझती थी कि आज का दिन कुशल से निकल जाय तो बहुत जानो, पर निकलता मालूम नहीं होता। छोटी बहू ने जो कलह बोया है वह न जाने क्या-क्या करेगा। हे भगवान्।"

वे बेहद घबरा गईं।

"क्या हुआ बुवा जी? कौन था?"

"क्या बताऊँ बहूँ?"

"क्यों ?"

"पुलिस थी। रामविलास की खोज मे है। यहाँ नही मिला तो अब उसके पीछे खेत पर गई है। साथ हरिनाथ था।"

पूरी बात सुनने की सामर्थ्य किसोरी मे न थी। पति के लिए पुलिस के आगमन का समाचार सुनते ही वह अधमरी हो गई। बेहाल होकर भूमि पर लेट गई।

"घर मे कोई-कोई कुलच्छनी ऐसी होती है जो अपनों को खाती है और दूसरो को भी। रामसरन की बहू ने जो विष-बेलि बोई है, उसका फल परिवार चख रहा है। जान पडता है अभी बहुत चखना है। जाने कैसा भाग्य लेकर इस घर आई है।"

पहला धक्का समाप्त होने पर किशोरी ने सोचा—हरिनाथ उसके साथ था। उसने अवश्य ही उस रात की मार का बदला लेने के लिए यह षड़यंत्र रचा है। पता नही उन्होंने मारा क्यों ? दस पाँच सेर गेहूँ ले जाना चाहता था, ले जाने क्यों न दिया ? जेठ जी ने भी ले जाने दिया। उनका हितू बना रहता है। आडे समय काम आता है। एक तिहाई दिलवा ही दिया।

उसे लगा कि रामविलास मे व्यावहारिक बुद्धि नही है। इसी बुद्धि से क्या वह संसार चलायेंगे। उनका क्या, ये तो जेल छोटे भाई की भाँति जा बैठेंगे। यहाँ जलूँगी तो मै।

रामविलास का अपराध क्या ? अभी पिछले क्षण तक वह रामविलास के इस कार्य को प्रशंसा की दृष्टि से देख रही थी। पर ज्योंही इस कार्य को वह एक बुरे फल से जोड़ पाई, त्यो ही वह बुरा हो गया। पर रामविलास उसकी दृष्टि मे अधिक समय तक अपराधी न रह सका। बुवा का वाक्य उसके सम्मुख मूर्तिमान हो गया।

घर मे ऐसा कोई होता है, जिसके भाग्य से सब को कष्ट भोगना होता है। किसोरी को दृढ विश्वास हो गया कि उस घर में ऐसा व्यक्ति उपस्थित है। जो कष्ट मे है, वही संसार के लिए सब से बडा अभागा है और इस घर मे वैजंती सबसे अधिक कष्ट मे थी।

उसने अपने अभाग्य के कारण पति को हवालात मे बन्द करवा दिया है। अब उसके साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार करना चाहती है ?

उसे विश्वास हो गया कि उसने जानबूझ कर अपने पति को हवालात भेज दिया है। तभी तो दिन भर हँसती रहती है। उसका सुख जब नही देखा गया तो उसने रामविलास को उसी स्थान पर भेजने की व्यवस्था की है।

इस विचार-धारा के फल-स्वरूप वह वैजंती के प्रति अत्यन्त असहिष्णु हो गई। यदि वह सब कुछ करने के लिए स्वतन्त्र और समर्थ होती तो इस समय बिना हिचके वैजंती की हत्या कर देती।

उसने वैंजंती की ओर आग्नेय नेत्रो से देखा।

"इसी कलमुँही के भाग से यह सब हो रहा है।" बुवा जी ने उसे सुनाकर कहा।

थाली की दाल वैजती की आँखो से अदृश्य हो गई। जेठ कितने अच्छे लगते है। उनके विषय मे कभी कोई अकल्याण का भाव मन मे आया हो तो वह अपराधिनी है। पर निर्दोषता यह अपराध उस पर मढा जा रहा है।

पर वास्तविक निर्दोषता निर्दोप होने मे नही है। निर्दोष होने पर भी व्यक्ति दोषी होता है, दण्ड भोगता है। अपराध जटिल विपय है। उसकी जटिलता अभी मनुष्य की समझ मे पूर्णतया नही आई है। पर एक दिन अन्य समस्याओ की भाँति यह भी सरल हो जायगा और तब किसोरी वैंजंती को दोषी दीखने पर भी निर्दोष मान सकेगी। पर इस समय तो डाइन है जो अपने पति को गृहनिर्वासन का दण्ड दे उसके पति को भी उसी स्थिति मे लाना चाहती है।

जब क्रोध है तो उफान होगा ही और जिह्वा है तो शब्द होगे ही।

किसोरी के मुख से निकला—"जिस कलमुँही ने मेरा बुरा चेता हो, उसे कीडे पडें, वह राँड हो जाय !"

वैजंती यह मानते हुए भी कि यह सब उसके लिए है चुपचाप सिर झुकाये बैठी रही। थाली निश्चल सामने पडी रही।

"घबरा नहीं बहू" मै आज भैया से कहकर इसका निर्णय करा लूँगी। ऐसी डायन को यदि ठीक दण्ड नहीं दिया तो पता नही कि वह आगे क्या क्या करेगी ? अपना घर बाल बच्चों का घर है।"

बुवाजी ने जो संकेत किया उससे वैजंती काँप उठी। किसोरी भी काँप उठी। यदि वास्तव मे वैजंती डायन है, तो क्या पता कब वह उसके हरिसुन्दर का कलेजा निकाल कर खा जाय। उसने निश्चय किया कि भविष्य मे वह हरिसुन्दर को उसके निकट न जाने देगी। पर वह रहती तो इस डायन के साथ एक ही घर में है। उसके कुकृत्यों से वह कैसे त्राण पा सकती है ?

अब तक का जितना पारस्परिक सद्भाव और सहयोग देवरानी-जेठानी मे था वह सब भुला दिया गया। पुत्र और पति की ममता की ऐंठन ने सरला वैजंती को डायन के रूप मे परिवर्तित कर दिया।

बाहर वालों के लिए जो देवी हो रही थी, वह घर वालों के लिए डायन बन गई।

हरिसुन्दर वैजंती के निकट नहीं पर पास ही खेलता रहा। किसोरी ने कहा—"बुवा जी हरिसुन्दर को वहाँ से उठा लो न।"

बुवा जी ने लपक कर इस प्रकार बालक को वहाँ से उठाया जैसे सिह के मुख में से बचाया हो। किसोरी ने समझा यह तो खैर हो गई, नही तो डायन खा ही जाती।

वैजंती के हृदय में इस व्यवहार से कटन प्रारम्भ हो गई। वह इतनी घृणित हो गई है इस घर मे ! बुवा जी ने और भी हद कर दी जब कि उन्होंने उसके हाथों से दाल की थाली छीन ली और स्वयं बड़ी तत्परता से बिनने बैठ गई।

उसे विशेष दिखाई न पड़ता था; फिर भी उत्साहपूर्वक बिने चली जाती थी। और इस उत्साह में कंकड़-मिट्टी के स्थान पर छोटी दाल उठाकर थाली से बाहर फेंके जाती थी।

वैजंती अब वहाँ न बैठ सकी। जहाँ उसका इतना अपमान है वहाँ

वह क्यो रहेगी। वह भिखारिणी है ! किसी की दया पर वह नही रहेगी।

किसोरी कुछ समय तक बुवा जी का यह बिनना देखती रही। पहली दाल जब थाली से बाहर फेकी गई तो उसे लगा कि भूल हो गई होगी। दूसरी फेकी गई तो उसने ध्यान से बुवा जी के मुख की ओर देखा। तीसरी फेकी गई तो उसके मुख पर एक हल्की मुस्कान आ गई, जिसे बुवा के मुख की सलवटो ने और भी बढा दिया। पर इसके पश्चात् जब पाँचवी, छठी और सातवी दाल बाहर फेकी गई तो किसोरी के कान खड़े हुए।

इस प्रकार यदि बुवाजी घटे भर बिनती रही तो सारी थाली खाली हो जायगी। उसमे कदाचित् ककड और मिट्टी के अतिरिक्त और कुछ शेष न रहेगा। हँसी रोककर बोली—"लाओ बुवा जी, मै बिन लेती हूँ।"

बुवा ने सान्त्वना और सरक्षण के स्वर मे कहा—"नही बहू, मै अभी बिने देती हूँ। मुझे कुछ दीखता कम है, इसी से देर हो रही है। फिर भी मै छोटी बहू से जल्दी बिन रही हूँ। काम के साथ खेलना मुझे नही आता।"

इस बीच मे तीन चार दालें उन्होने उठाकर और फेक दी। अब किसोरी वास्तव मे शकित हो गई। बोली—'लाओ बुवा जी, तुम तब तक देख आओ, बैलो की नाँद सूख तो नही गई।'

पर बुवा जी थीं कि दाल बिन कर ही उठना चाहती थी। वे दिखाना चाहती थी कि वे भी काम सकती है।

किसोरी ने उठकर उनके हाथ से थाली ले ली।

थाली बेमन से देती हुई बुवा जी बोली—"एक समय था बहू, जब मै इतनी दाल तो चुटकी बजाते-बजाते बिन देती थी।"

"पुराने पानी मे बड़ा दम था बुवा जी। अब वह पानी ही नहीं रहा। हम लोगों का क्या अपराध ?"

और उसके मन में हलका-सा उठा . वैजंती का क्या अपराध ?

बुवा बाहर गई और किसोरी दाल बिनने बैठ गई।

दाल बिनने का काम सरल होने पर भी ऐसा नही कि एक आँख वहाँ रहे और एक आँख चारों ओर घूमती रहे। दाल बिनना दाल दाल से आँख लड़ाना है। किसोरी उसमे दत्तचित्त हो गई। हरिसुन्दर स्वतन्त्र हो गया।

उसने देखा काकी वहाँ नहीं है। उसे काकी बिना चैन कहाँ? अम्मा उससे खेलती हैं, पर जब उनके जी मे होती है तब। यह तो काकी ही है कि जो उसकी इच्छा को अपनी इच्छा बना लेती है। जब चाहो खेल मे सम्मिलित हो जाती है।

उसे खोजता वह काकी की कोठरी के निकट जा पहुँचा। चुपके से भीतर झाँका। उसकी टेढ़ी गर्दन, उत्सुक, हँसोड नयन देखकर वैजंती मुस्करा दी। फिर क्या था वह काकी को गोद मे टूट पडा। और चिल्ला उठा।

"माँ; काकी यह रही।"

किसोरी उठी नहीं, दाल पर दृष्टि जमाये-जमाये चिल्लाई—"यहाँ आ। आया कि नही?"

वैजंती ने कहा—"जा रे हरिसुन्दर, मेरे पास मत आ।"

माँ-काकी के वाक्यों के फलस्वरूप वह काकी से और भी चिपक गया।

"आऊँगा, आऊँगा, तुम्हारे पास आऊँगा।"

"अम्मा मारेगी।"

"मै अम्मा के पास नही जाऊँगा।"

"तो सोयेगा कहाँ?"

"तुम्हारे पास।"

और वैजती सब कहना-सुनना भूल उसे हृदय से लगा कर हिलाने लगी।

किसोरी ने बातें सुनी, उसे अच्छा-सा लगा। वैजंती, नही! वह डायन नही हो सकती। पता नही बुवाजी कैसी बातें करती है।

पर तभी बुवाजी लौट आईं।

"वे रामविलास को छोड़ेंगे नही, ले ही जायँगे।" उन्होने सुनाया। "फिर आयें है, कह दिया है कि आने पर भेज दूँगी।"

"क्या हुआ बुवाजी ?" किसोरी ने पूछा।

"पुलिस फिर आई थी। रामविलास मिला नही। थाने पर बुलाया है जाना होगा।"

किसोरी के हृदय मे जो एक भावना वैजती के प्रति सहानुभूति की उठ रही थी वह जैसे दब गई। रामविलास और पुलिस का विषय सामने से हट जाने पर वैजंती से भी जैसे इस विषय का सम्बन्ध टूट गया था। अब फिर पुलिस आई है। उसे थाने मे बुलाया है।

वह रामसरन का भाई क्यो हुआ ? उसे लगा कि यह वैजंती का अभाग ही है जो वार-बार पुलिस को इस घर खीच लाता है और हरिसुन्दर की रक्षा की भावना उसके हृदय में जाग पड़ी। उठी; जाकर हरिसुन्दर को वैजंती से छीन लिया। हरिसुन्दर रो उठा। वैजंती हक्की-बक्की हो गई। तनिक देर मे किसोरी मे यह भाँति-भाँति के परिवर्तन कैसे हो रहे है ? बुवाजी उसे बकती झकती रही। वह अपनी कोठरी मे बैठी सब शान्त सुनती रही।

लगभग आध घण्टे के बाद रामविलास कुछ चारा लेकर आया। उसे देखते ही बुवाजी उच्च स्वर से रोने लगी।

उनका रोना सुन वह चकित रह गया। घर मे वह सभी को अच्छा-बिच्छा छोड़ कर गया था, अभी तनिक देर मे क्या हो गया ?

"क्या हुआ बुवा ?"

बुवा अब उससे चिपट गई और रोना जारी रक्खा। उत्तर उन्होंने कुछ नहीं दिया। रामविलास ने पूछा—"क्या बात है ?"

बुवा और भी जोर से रोने लगी।

"कुछ बताओ भी, किसे क्या हो गया ?" रामविलास ने वृद्धा बुवा के हाथों से अपने शरीर को छुड़ाते हुए कहा।

उसने किसोरी की ओर देखा, पाया कि उसके नेत्र भी गीले है।

उसकी शंका बढ़ गई। इतनी देर! इतनी महत्वपूर्ण बात और उससे नहीं कही जा रही है। वह क्रुद्ध हो उठा।

जोर से बोला—"क्या बात है? कुछ मुँह से भी बोलोगी या यो ही रोती जाओगी।"

"क्या कहूँ मेरे लाल!" कुछ बुवाजी ने आँसू पोछते हुए कहा—"यह अभागी हमारे घर मे ऐसी आ गई है कि सारे घर को थाने मे भेजकर चैन लेगी।"

"फिर वही! बात क्या है?"

पहले खसम को वहाँ भेज दिया। अब जेठ को। भगवान् ऐसी का तो मुँह भी न दिखावे।"

"बुवाजी!" रामविलास ने डाँटा।

"बेटा, हिरदै मे लगती है तो कहती हूँ। रामावतार का बुढ़ापा इस दाढीजार की बेटी ने बिगाड़ने की सोच ली है। भगवान ऐसा चुड़ैलों को मौत भी नही दे देता।"

"क्या बात है?" उसने किसोरी से पूछा।

पुलिस का नाम सुन कर उसके हृदय मे एक कम्प हो उठा था। और उत्सुकता तीव्र हो उठी थी।

"तुम्हे बुलाने सिपाही आये थे।"

"कारिन्दा के?"

"नही, पुलिस के। साथ वही हरिनाथ था।" बुवाजी ने प्रेमार्द दृष्टि से रामविलास की ओर देखा।

रामविलास प्रथम यह समाचार सुन घबरा सा गया। उसके नयनों के सम्मुख अँधेरा छा गया। अकेले मे होता तो कदाचित वह अपना सिर पकड़ कुछ समय के लिए बैठ जाता। पर यहाँ नारियो मे और विशेषतया अपनी पत्नी, बुवा और रामसरन की बहू के सामने उसे दुर्बलता दर्शाना शोभा नही देता। वह पुरुष है; पुरुषत्व की लाज रखनी ही होगी।

विचार-धारा ने तत्त्वरण हरिनाथ, रात को मार-पीट और पुलिस को

एक सूत्र मे जोड़ दिया। हरिनाथ ने कदाचित् उस दिन का बदला निकालने के लिए कोई षड़यत्र खड़ा किया है।

एक मुस्कान और फिर सतर्कता उसके चेहरे पर दौड़ गई। पुलिस के साथ जब सम्पर्क हुआ है तो उसमे भय की बात तो होगी ही। पर यदि स्वयं बोकर वह नही काटेगा तो कौन काटने आयेगा। उसने चारो ओर दृष्टि डाली।

"रामसरन की बहू कहाँ है?"

"आज वह विश्राम कर रही है।" बुवा जी ने ताने के साथ सूचना दी।

रामविलास ने उनके स्वर पर ध्यान नही दिया। वह घबरा गया। वह जानता था कि पशुओ की देख-रेख उस पर और वैजंती पर है। यदि वह पुलिस मे गया और वैजंती बीमार पड़ गई, तो कौन उनकी ओर देखेगा। उसकी किसोरा है; उसे गँड़ासा देखते ही भय लगता है।

उसने चिन्तातुर हो पूछा—"क्यो क्या हुआ, ज्वर तो नही है?"

बुवाजी ने मन मे कहा—"भला उसे ज्वर चढ़ेगा? यमराज तो जैसे उसे भूल गये है।"

रामविलास को सहानुभूति उस ओर जाने का उन्हे दु:ख हुआ। उन्होने उसकी शिकायत क्यो की? यदि न करती तो यह सहानुभूति उसे न प्राप्त होती।

अपने विषय मे जेठ की वाणी सुन वैजंती कोठरी से बाहर निकल आई। रामविलास के मुख पर प्रसन्नता दौड़ गई। किसोरी ने देखा; उसका हृदय ईर्ष्या से जल उठा। उसने मुख फेर लिया।

"बहू, मै जरा थाने तक जा रहा हूँ, पशुओं को देख-भाल लेना।"

वैजंती ने सिर झुका मौन आज्ञा ग्रहण की।

रामविलास पशुओं की ओर से निश्चिन्त हो, अपनी भविष्य-चिन्ता लिये थाने की ओर चला। किसोरी मुख मे धोती भर रो उठी।

हरिसुन्दर चकित उसकी ओर देखने लगा।

सुघटनाएँ-दुर्घटनाएँ होती रहती है और संसार का काम चलता रहता

हैं। वह न किसी की ओर देखने के लिए रुकता है और न किसी के कारण रुकता है। किसोरी का हृदय भर-भर आया, कटने का हो-हो गया, वह रोती रही; पर घर का सब काम-काज किया ही गया। आग भी जलाई, अदहन भी दिया, दाल भी डाली।

उधर वैजंती पसीने की धारा और पशुओं के दुलार में सब कुछ भूली रही।

बुवाजी कितना ही कहें पर जेठ उस पर कितना विश्वास रखते हैं, कितना उसे मानते हैं। पशु उन्हें घर में सब से प्यारे हैं। वे हरिसुन्दर के लिए भी उतना कष्ट नहीं उठाते जितना पशुओं के लिए। उन पशुओं को वे उसके अतिरिक्त और किसी के भरोसे नहीं छोड़ते। अपने स्थान और कार्यशक्ति के प्रति एक गर्व-भावना उसमें भर आई।

सन्ध्या झुके जब रामावतार बाहर से आये तो उन्हें पुलिस द्वारा रामविलास के बुलाये जाने का समाचार ज्ञात था। वे इस नवीन विपत्ति से घबरा उठे थे। यदि पुलिस रामविलास को फँसाना चाहे तो कौन उसे रोक सकता है। उसके अभाव में वे घर पशुओं की देख-रेख के लिए दौड़े आये।

भाई को आया देख बुवा उनके निकट वैजंती की शिकायत लेकर पहुँची। बोली—"भैया गाँव भर में····।"

और भैया ने ध्यान नहीं दिया कि बहिन क्या कह रही है। बिना सुने ही उत्तर दिया—"मैं सब सुन आया हूँ।"

उन्होंने जाकर पशुओं की नाँदे देखीं। उनके मुख देखे और बहू को कुट्टी ले जाकर नाँदों में डालते देखा तो उनके नयनों में आँसू आ गये।

बहिन से बोले—"रामसरन की बहू हमारी बहू नहीं बेटा है।"

बुआजी को सुनना पड़ा। भाग्य ऐसा ही बलवान है कि जो न चाहो सुनना पड़ता है, जो न चाहो करना पड़ता है।

इस सम्बन्ध से सन्तुष्ट हो, वे लाठी ले रामविलास की खोज-खबर लेने थाने की ओर चल दिये।

उनके बुढापे पर यह दूसरा प्रहार है, वे सहेंगे। जब रामसरन के पक्ष मे गाँव की भावना कुछ स्पष्ट होने लगी है तब से रामावतार रामसरन मे गर्व अनुभव करने लगे है। उसका हवालात मे रहना सह्य हो आया है। पर इसी समय रामविलास का अकारण पुलिस-द्वारा बुलाया जाना वास्तव मे उन पर भाग्य का प्रहार ही है।

वह वृद्ध-धूल और कंकड-भरे कर्त्तव्य-पथ पर खेतों और घिरते अन्धकार के बीच चल दिया।

प्रियजनो के विषय मे मन सर्वदा शंकाशील रहता है, उनके विषय मे अमंगल-कल्पना शीघ्र ही मन मे आ जाती है।

रामावतार ने रामविलास को हवालात मे बन्द पाने की कल्पना की। उन्होंने यह भी कल्पना कर ली कि वे रोये हैं, कलपे है, पर रामविलास छूटा नही है और वे अकेले घर लौट रहे है।

अन्धकार मे कल्पनाएँ विशेष बलशाली हो जाती है। अपनी कल्पित असफलता पर अश्रु बहाते वे थाने की दिशा में चले जा रहे थे।

अचानक वे खड़े हो गये। कोई परिचित स्वर उनके कान मे पड़ा। उन्होंने पुकारा—"हरिनाथ ?"

"दादा !" रामविलास के कण्ठ ने उत्तर दिया।

रामावतार को लगा कि जाकर पुत्र को छाती से लगा लें और आँसुओं की धारा बहा दे। पर हरिनाथ की उपस्थिति ने यह भावुक प्रदर्शन रोक दिया। उन्होंने हृदय से भगवान को धन्यवाद दिया और फिर तीनों जने साथ-साथ गाँव को वापिस आये।

हरिनाथ पराजित होकर भी, इतना कष्ट स्वयं उठाकर भी, सन्तोष अनुभव कर रहा था। उसने पिता पुत्र दोनों को कितना तंग किया है! हरिनाथ, चाहे कुछ भी हो, हरिनाथ है। साधारण मे असाधारण है।

हरिनाथ के पृथक मार्ग से चले जाने के बाद रामविलास ने पूछा—"पशुओं को चारा आदि....?"

"मैं सब देख आया हूँ। ठीक है। रामसरन की बहू ने सब कर लिया है।"

इसके बाद दोनो जने वैजंती की प्रशंसा करते घर आये। जब भोजन करने बैठे तो प्रसन्नता के उफान मे रामावतार ने सब को सुनाया कि यह उनकी बहू नही, बेटा बैजनाथ है।

पति के सकुशल लौट आने की प्रसन्नता के कारण किसोरी को ससुर के इस वाक्य से विशेष कष्ट नहीं हुआ। वैजंती हुलस उठी, इस समय यदि रामसरन होते तो.. .!

बुवाजी को लगा कि इस घर मे उनकी ओर बोलने वाला कोई नही है। अब भाई की गृहस्थी को भाग्य के आसरे छोड़ अपनी ससुराल जाना ही उनके लिए श्रेयस्कर है। ऐसा इस बहू मे क्या सोना जड़ा है जो बाप-बेटे दोनो लट्टू हुए जा रहे है।

४

१

चित्तरंजन भगवान के चित चढ़े थे, इसलिए बी० ए० करने के बाद थानेदार हो गये। उनके पिता डिप्टी साहब के यहाँ मुहर्रिर थे और उसी वातावरण मे उनके जीवन का आधा भाग बीता था।

पर पिता का मृत्यु के बाद वे जब कॉलेज के होस्टल मे चार वर्ष रहे, तो कुछ अशो मे पुरातन दफ्तरी और शासकत्वमय वातावरण से उनका सम्पर्क छूट गया। उन्हे तब ज्ञात हुआ कि डिप्टी साहब के अतिरिक्त संसार मे महान और भी कुछ है।

उनके जीवन मे एक समय था, जब वे डिप्टी साहब, सिकंदर और नैपोलियन की तुलना करते समय डिप्टी साहब को सर्वोच्च पद पूरी ईमानदारी के साथ दे देते थे। कारण था : डिप्टी साहब का महत्व उनके निकट प्रत्यक्ष था। जो कोई उनका परिचय देता उसे उन्हे 'डिप्टी साहब के मुहर्रिर का लड़का' कहना अनिवार्य हो जाता।

संसार मे मनुष्य काम अपने लाभार्थ करता है पर काम का स्वभाव ही कुछ ऐसा है कि लाभ के साथ अलाभ भी उपस्थित रहता है। अंग्रेजों ने कॉलेजों की सृष्टि की थी भलाई के लिए, पर अन्त मे यही उनके लिए समस्या बन गये। जिन्हे कल्पना मे उन्होंने परम प्रशंसक चित्रित किया था वे ही उनके कटु आलोचक बनकर सामने आये।

चित्तरंजन पर इस नवीन वातावरण का प्रभाव पड़ा। पहिले उन्होंने जो कुछ सुना या पढ़ा उसपर विश्वास न किया, पर जब इन वर्णनो और

कथनों के नीचे उन्होने अंग्रेजो के हस्ताक्षर देखे तो उन्हे विश्वास करना ही पडा ।

वे इस दशा तक पहुँच गये . जो यह कहते है वह ठीक हो सकता है, अधिक हठ करते हो तो, ठीक है भई; या अपने से इसका क्या सम्बन्ध ।

डिप्टी साहब ने उसे कही न कही लगा लेने का आश्वासन दिला ही दिया है । वे अंग्रेज बच्चे है, जो कह दिया उससे पीछे हटने वाले नही, फिर उन्हे अधिक झगडे मे पडने की क्या आवश्यकता है । अंग्रेजी वर्ण-माला के प्रथम दो अक्षरों पर यदि उलटे क्रम से भी वह अपना अधिकार जमा सका, जो इतनी शिक्षा उसे जीवन-यापन मे आवश्यकता से अधिक प्रमाणित होगी ।

वे थानेदार हो गये और अब थे इस गॉव मे । पर वे जैसा कॉलेज जीवन के प्रभाव से अपने को अछूता समझ रहे थे, वैसे थे नही । वे गाँव मे शासक थे । जितने थे सब उनसे नीचे । प्राय. उनकी इच्छा ही विधान थी । फिर भी वे असन्तुष्ट थे ।

भोजन के लिए और कुछ करने की राह न सूझती थी इसलिए ध्यान आने पर जीवन के सुखों को पेशन के बाद के लिए उठा रखते थे । बहुत दुखित होते तो अपने को ही समझाते कि वास्तविक सुख तो वही है जो वे पा रहे हैं; पर इस समझाने से वे विशेष सन्तुष्ट न थे, उन्हे अपने को बार-बार समझाना होता था ।

असन्तोष का कारण यह था कि इस वातावरण मे उन्हे कोई पढा-लिखा समझदार वार्तालाप करने को नहीं प्राप्य था । वे इतना अधिक जानते थे कि दूसरों के सम्मुख उसकी चर्चा करने पर वे ग्रामीणो मे सिर हिलाने के अतिरिक्त और कोई प्रभाव न उत्पन्न कर पाते थे ।

कॉलेज के वार्तालाप मे अंग्रेजी शब्दों के प्रयोग का अभ्यास उन्होने जितनी सतर्कता से किया था उतनी ही सतर्कता से अब उन्हे भुलाना पड़ा था । स्कूल के शिक्षक अथवा पटवारी के सम्मुख जब वे किसी गूढ़ार्थमय अंग्रेजी शब्द का प्रयोग करते थे तो उन्हे उस लारी के समान अनुभव होता

था जो पुल के नीचे से आते समय अपने यात्री को पुल के छत की कड़ियों से लटकता छोड आई हो । उन्हे लौट कर उस यात्री को लेना पड़ता था।

शासक-पद और उनका ज्ञान उन्हे दु खदायी हो जाया करता था।

कारिन्दा साहब के पास भी अंग्रेजी ज्ञान की ही कमी थी। पर वे भी कायस्थ थे इसलिए कभी-कभी एक दूसरे के यहाँ आना-जाना हो जाता था। जी बहल जाता था।

थानेदार, उनकी माँ, पत्नी और बच्चे कारिन्दा साहब के यहाँ आये। ताँगे के चलने के दो घण्टे पहले दो सिपाही समाचार और उससे एक दिन पहले एक सिपाही इस दौरे की सूचना देने आया था।

थानेदार जब सपरिवार आ रहे है, तो उनके स्वागत एवं मनोरञ्जन का प्रबन्ध यथासम्भव होना ही चाहिए और विशेषतया जब वे गाँव के स्वामी स्वयं कारिन्दा के यहाँ आ रहे हो। पुलिस का अस्तित्व तो प्रजा को शान्त और शिष्ट रखने मात्र के लिए है।

थानेदार की माँ मे जो आदेश्वर को देखने की एक उत्सुकता थी वह इसी अवसर पर पूर्ण करने का विचार था। इसीलिए आदेश्वर और रूपमती को थानेदार साहब के आगमन के प्रथम ही बुला भेजा गया। गाँव के धन का प्रतिनिधित्व करने के लिए छदम्मी साहु पधारे। पटवारी अपने पद के कारण, हरिनाथ अपने महत्व के कारण उपस्थित हुए। गाँव की पाठशाला के शिक्षकों ने वहाँ उपस्थित होने की तीव्र अभिलाषा की पर दिन रविवार न होने से वे विवश रहे। रामाधीन भी एक ओर पटवारी और कारिन्दा के साथ-साथ पुलिस की कृपा-कोर पाने की आशा से बैठ गया।

इसके अतिरिक्त गाँव के लोग कुछ समय के लिए आते-जाते रहे। एक छोटा-सा मेला लग गया।

आदेश्वर ताँगा आने से लगभग पन्द्रह मिनिट पहले पहुँच गया। वह तो सौभाग्यवश समस्त उत्सव का प्रबन्ध छदम्मी साहु के हाथ मे था नहीं तो उसे जाने कितने समय तक भूमि पर अन्य ग्रामीणों की भाँति बैठना पड़ता।

कारिन्दा के सिपाही, अपनी फटी वर्दियाँ पहने पुलिस के सिपाहियों से जैसे होड कर रहे थे। पर हीनता स्वीकार करने मे भी वे पीछे न थे।

आदेश्वर को उछल कर आता देख उनमे एक प्रसन्नता की तरंग दौड़ गई। अन्त मे वह यहाँ आने को विवश किया जा सका। उन्होंने इस अवसर को उसके अपमान के लिए प्रयोग करना चाहा। कोई भी हो, यदि वह गाँव मे रहता है तो उनकी प्रजा है और प्रजाजन को शासक का शासन नतमस्तक स्वीकार करना चाहिए।

आदेश्वर ने रूपमती के चारों ओर जो अलंघ्य दीवार खींच दी थी वही इन मित्रों के भीषण असन्तोष का कारण थी।

साहु ने ले जाकर उसे सुतली से बिनी खाट पर बैठा दिया। उसके पास दो निवाड के पलंग, चार कुर्सियाँ और एक आराम-कुर्सी पडी थी; कहने के लिए वे सजाई गई थी। पलंग पर सुन्दर बिछावन और तकिया था। बीच मे एक मेज थी, जिसकी एक टाँग छोटी होने, अथवा फर्श मे गड़हा होने की कमी को दो ठीकरियाँ लगाकर पूर्ण किया गया था। पास ही एक उगलदान और लम्बी सटक वाला हुक्का रक्खा था।

आदेश्वर की यह आवभगत एक सिपाही को बुरी लगी। उसने आपत्ति की—"साहु, यह खाट दीवान साहब के लिए है।" दीवान साहब का अर्थ था हेडकांस्टिबिल।

साहु को यह बुरा लगा। उन्होंने उसकी बात पर ध्यान न दे कहार को पानी के बर्तन पुनः माँज कर चमका देने की आज्ञा दी और स्वयं आदेश्वर की बगल मे बैठकर, अपने प्रबन्ध की चर्चा प्रारम्भ की।

उन्होंने बताया कि इस प्रकार का हुक्का आस-पास किसी गाँव मे नहीं है। जब कोई बड़ा अफसर आता है तो यह उसके लिए निकाला जाता है। सैयद मुख्तारअली जब इधर थे तो वे इस हुक्के से तम्बाकू पीने के लिए बार-बार इस गाँव का दौरा किया करते थे। ऐसा प्यारा था यह उन्हें।

आदेश्वर ने ध्यान से हुक्के की ओर देखा।

"वे तो मुसलमान....?"

"हाँ।"

"मुमलमान हिन्दू के लिए एक ही....।"

"बाबू इन लोगो का धरम अधरम क्या ? वह तो छोटों के लिए है और घर के बाहर तो सभी शुद्ध है।"

"पर साहु ऐसा करना ..!"

"करने पर तो खिलाते-पिलाते मरे जाते है। प्रत्येक के लिए अलग सामान खरीदें, तो बस दो दिन मे दिवाला निकाल अलग खडे हों। हमसे हिन्दू मुसलमान कौन दो प्रकार का व्यवहार करते है जो हम उनके लिए....।"

आदेश्वर की दृष्टि कमरे की मजावट की ओर गई। मृत सम्राट और सम्राज्ञी का कॉच-जटित चित्र मम्मुख टँगा था। शीशा यद्यपि चटक गया था, पर आक के दूध मे भिगाकर चिपकाये गये टेढे कागजों की सहायता से अपने स्थान पर बना हुआ था।

उसके दोनों ओर बृटिश साम्राज्य के प्रधान मंत्रियों की भाँति जमीदार राजा और पिता-पितामह के चित्र थे। सम्राट सम्राज्ञी के चित्र की अपेक्षा उनकी दशा अच्छी थी।

इसी बीच साहु किमी काम के लिए उठ गये। सिपाही ने अन्दर प्रवेश किया। देखा—बैसाखी खाट पर रक्खे आदेश्वर आराम से बैठा हुआ है। उसने तीव्र दृष्टि से उसकी ओर देखा। उस पर प्रहार करने की इच्छा हुई और इच्छा हुई कि आदेश्वर को उठाकर भूमि पर बैठा दे।

आज्ञा देनी चाही; उठकर बेंच पर बैठो, यह अफसरों के लिए है।

पर आदेश्वर जिस अधिकार और आराम के साथ उसपर बैठा है और जितनी अवहेलना उसने उसके प्रति दिखाई, उससे उसके वाक्य कण्ठ मे ही रुक कर रह गये। उसकी जलन जैसे अंगार से घोट दी गई। उसके नेत्र दूसरी ओर फिर गये। वह मेज की टाँग को हिला उसे लँगडी बना,

पुन. सुधार, उसके नंगे तल को स्पर्श कर मेजपोश की आवश्यकता अनुभव करता वहाँ से चला गया।

तभी एक व्यस्तता पड़ोस मे व्यक्त हुई। सिपाही बाहर दौड गया। उस व्यस्तता की तरंग ने आदेश्वर पर भी प्रभाव डाला। वह खाट पर सँभल कर बैठ गया। द्वार पर लोगों के जल्दी-जल्दी बोलने का स्वर सुनाई पडा।

शान्ति हुई और फिर नम्र स्वर उसके कानों मे पहुँचे, साहु भीतर प्रवेश कर द्वार के निकट खडे हो गये। उसके पश्चात् अपनी भारी शरीर लिये चितरजन ने प्रवेश किया। प्रथम दृष्टि उनकी हुक्के और बिछौने पर पड़ी। उन्होने साहु ने पूछा—"क्यो साहु, आज कौन सा तमाखू मँगाया है।" "हुजूर, लखनऊ का कड़ुवा और मीठा दोनो है। बनारस का भी एक तमाखू आया है, देखियेगा।"

चितरंजन ने इस आतिथ्य को धन्यवाद देने की आवश्यकता न समझी। यह उनके लिए साधारण बात थी। वे इसपर और इससे भी अधिक पर अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे।

जब ये दो डग और आगे बढे तो उनकी दृष्टि आदेश्वर पर पड़ी। वह उठ कर खड़े होने का प्रयत्न कर रहा था। इतनी आवभगत जिसकी हो; साहु को प्रतिनिधि बना लक्ष्मी जिसके सम्मुख नमन कर रही हों, मानव के हृदय मे उसकी ओर से सहम प्रवेश कर जाय तो आश्चर्य नहीं। और आदेश्वर ने सब कुछ सोचकर, अधिक सत्य तो यह कि कुछ न सोचकर खड़ा हो जाना ही उचित समझा और वह इस औचित्य को कार्यरूप मे परिणत करने मे प्रवृत्त हुआ।

थानेदार ने देखा। उनकी स्मरण शक्ति दुर्बल न थी। रूपमती से सम्बन्धित पढ़ा-लिखा व्यक्ति यही है, यह उन्हें तत्क्षण ज्ञात हो गया। पर एक साधारण मनुष्य की ओर ध्यान देना उन्होंने उचित न समझा। क्योंकि ऐसा करने से उस व्यक्ति को विशेष महत्व मिल जाता। उन्होने आदेश्वर से कुछ कहने की इच्छा को रोककर पलंगपर अपना आसन ग्रहण किया।

साहु एक कुर्सी पर बैठ गये, पटवारी सा'ब दूसरी पर। कारिन्दा सा'ब ने तनिक देर से प्रवेश कर पास के दूसरे पलंग पर आसन ग्रहण किया।

पूरे ठाठ से मजलिस लग गई। चितरंजन कुछ समय अपने ही मे, जैसे अपने महत्त्व पर ध्यान लगाये बैठे रहे। नेत्र ऊँचे किये, सम्मुख के चित्रों, दीवारो और काली पैतालीस कडियो की ओर देखा। दोनों शह-तीरों की वक्रता और पौरुष पर उन्होंने ध्यान दिया; और फिर कारिन्दा सा'ब से बोले—"क्यों भई, आपके हेडमास्टर नहीं आये ?"

यह बात उन्होंने उचित समझ कर ही कही थी। प्रत्येक को अपने अधिकार के लिए लडना चाहिए। देश अपने-अपने अधिकारों के लिए जूझते है। इन थानेदार ने यदि हेडमास्टर की अनुपस्थिति को अपनी अवज्ञा समझा तो यह केवल क्षम्य ही नहीं न्यायसंगत भी था।

"शुक्र है, पाठशाला मे होंगे!"

पटवारी ने थानेदार की दृष्टि अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उत्तर दिया। यह बड़ी बात थी। ग्रामीण समाज की उपस्थिति मे थानेदार जिस किसी से एक बार हँसकर बोल लिये उसका विशिष्ट स्थान बन गया। और उस स्थान की चिन्ता प्राय· सभी को थी।

"भई, बुलवाओ उन्हे। लडके आज ही कौन-सा सब पढ लेंगे।"

हरिनाथ शीघ्रता से उठकर एक सिपाही को मास्टर को बुलाने भेजने गया।

थानेदार सा'ब ने समझ लिया कि हरिनाथ कारिन्दा के सिपाहियों मे से ही किसी को भेज सकता है। हेडमास्टर यदि उसकी अवहेलना नही कर सकता तो आने मे देर अवश्य लगा सकता है। उन्होंने हरिनाथ को पुका-रना उचित न समझ पटवारी की ओर देखा। दृष्टि पड़ते ही वह आज्ञा-पालन के लिए तन गये।

थानेदार ने एक गर्व अनुभव करते हुए कहा—"मास्टर को बुलाने के लिए किसी पुलिस के सिपाही को भेज दो।"

पटवारी जल्दी से उठ खडे हुए। इतनी जल्दी कि उनकी कुर्सी ने साहु

की कुर्सी को टक्कर दी और साहु जो अनजाने साढे तीन टाँग वाली कुर्सी पर बैठे थे उसकी आधी टाँग हिल जाने से डगमगा गये। वे पटवारी से भी अधिक शीघ्रता से उठ खडे हुए। इस दृष्टि से कुर्सी की ओर जैसे कि आस्तीन में साँप पा लिया हो।

सब लोग स्तम्भित हो गये। कारिन्दा ने पूछा—"क्या हुआ साहु ?"

साहु उत्तर न देकर दूसरी कुर्सी पर बैठ गये। थानेदार ने कारिन्दा को सूचना दी कि कुर्सी की आधी टाँग गायब है।

कारिन्दा के नेत्र लाल हो गये। इन कमबख्त सिपाहियों ने नाक मे दम कर रक्खा हैं। तीन-तीन चार-चार रुपये तनख्वाह देते है, उसमें ऐसे मूढ तो मिलेंगे ही, जिन्हे ठीक के कुर्सी रखने का भी ज्ञान नही। उनका क्रोध जमीदार पर होता हुआ सिपाहियो पर आ गया। इस तेजी मे उठकर वे बाहर पहुँचे।

सिपाहियों ने साश्चर्य उनकी ओर देखा। उन्होंने महान् असन्तोष दिखाते हुए पूछा—"किस गधे ने कुर्सियाँ रखी है ?"

कोई गधा सामने न आया। जो उपस्थित थे उन्होने अनुपस्थित नामों मे से एक ले दिया। कारिन्दा सा'ब अपने को स्वस्थ करते भीतर गये। साहु पर क्रोध आया। कुर्सी हिल गई थी तो क्या हुआ? बैठे रहते। इस समय यह दिखाने की क्या आवश्यकता थी ?

उनके मुख फेरते ही एक सिपाही ने कहा—'बनिये है गद्दी पर बैठते है, कुर्सी पर बैठना क्या जानें ? तनिक हिल गई होगी; बस दम निकल गया। एक-एक बाबू दफ़्तरों मे पड़े है कि उमर टूटी कुर्सियों पर निकाल दी।

•पुलिस के एक सिपाही से पूछा—"कौन से दफ्तर में नौकर थे तुम ?"

"मैं नहीं, मेरे ख़ास बाप ख़ास डिबिटसन सा'ब के यहाँ ख़ास चपरासी थे।"

सिपाही ने इस व्यक्ति को ध्यान से देखा और विशेष आदर से देखा। वह डिबिटसन सा'ब के ख़ास चपरासी का पुत्र है। डिबिटसन सा'ब ज़िले के ख़ास कलक्टर थे।

सिपाही ने जाकर पाठशाला मे अपना रूप दिखाया, तो पाठशाला मे खलबली मच गई। कुम्भकर्ण श्रीराम से मिलने यदि वानर-सेना मे आया होता और सीधा उनके पास चला गया होता तो वहाँ भी यही दशा होती।

बालक सभय साश्चर्य उसे देखते रहे। वह सीधा हेडमास्टर सा'ब के सम्मुख जा खडा हुआ। उसे देखते ही उनके प्राण सूख गये। भयभीत उसकी ओर देखा।

"थानेदार सा'ब बडी देर से तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे है, मास्टर. ।" उनकी कक्षा मे प्रसन्नता की तरंग दौड गई। ऐसे अच्छे थानेदार के दर्शनार्थ कुछ विद्यार्थी लालायित हो उठे। पर अधिकाश की प्रसन्नता हेडमास्टर के जाने पर ही निर्भर थी।

हेडमास्टर ने वाक्य बीच ही में छोड दिया। अपने अकेले सहायक को समस्त पाठशाला का भार सौप, फटा कोट पहिन, चमरौधा टुटहा जूता पैरों मे डाल, मोटी बेत हाथ मे ले सिपाही के आगे-आगे हो लिये। वे जानते थे कि पुलिस के सिपाही किसी को अपने पीछे नहीं चलने देते।

जब तक हेडमास्टर सा'ब आयें, थानेदार की दृष्टि आदेश्वर पर पडी। उसके प्रति अवहेलना और उपेक्षा की सीमा प्राप्त कर लेने के पश्चात् वे उसकी ओर ध्यान देने को बाध्य हुए। पर ध्यान दिया उन्होंने पुलिस के अपने ढंग से।

"वह कौन है ?" उन्होंने कारिन्दा से पूछा।

"आदेश्वर है।" उन्होंने यथासम्भव अवज्ञा का प्रदर्शन किया—"आपने बुलाया था, आया है।"

अब जैसे थानेदार को सब बाते स्मरण आईं।

"तुम्ही रूपमती के यहाँ ठहरे हो न भई ? स्थान तो अच्छा टटोला है। सेवा में कोई कोर-कसर न रहती होगी।"

आदेश्वर को अच्छा नहीं लगा। पर सभा में एक ठहाका पडा। सिपाहियों ने भी भीतर झाँक कर देखा। कोई मनोरञ्जक बात होने जा रही

है। यह सोचकर वे धीरे-धीरे भीतर आ गये और दीवार से सटकर खडे हो गये। दोनों अफसरो की उपस्थिति मे बैठने का साहस एकाएक वे नही कर सकते थे।

दरबार निस्तब्ध हो गया। सब के नेत्र थानेदार की ओर लग गये। तभी उनके लडके ने कारिन्दा सा'ब के घर मे से इस बैठक मे खुलने वाले द्वार से प्रवेश कर उनके कान मे कुछ कहा।

नीचे बैठे रामाधीन ने सोचा यह लडका कितना भाग्यवान है जो थानेदार सा'ब के कान मे बात कह सकता है।

और थानेदार सा'ब ने पुत्र से कहा—"अच्छा।"

पुत्र चला गया। थोडी देर बाद उनकी माँ ने बैठक मे प्रवेश किया। उन स्थूलकाया देवी के आतंक से वायु मे जैसे स्वर की तरंगे जम गई और वे थानेदार-माता आकर एक कुर्सी पर विराजमान हो गई।

पटवारी, कारिन्दा हरिनाथ सब जैसे अपने मे सिकुड गये। आदेश्वर ने ध्यानपूर्वक उनकी ओर देखा। वह नही समझता था कि अंग-भंग होने के कारण तमाशे की चीज़ के रूप मे यहाँ बुलाया गया है।

पर जब थानेदार-माता की दृष्टि उसकी ओर लगी रही तो उसे यह अनुभव स्पष्ट हो चला और इस सभा से उसे घृणा-सी हो चली। जी मे आया कि उठकर यहाँ से चला जाय। पर इन ग्रामीणो को तो इससे भी कहीं तीव्र अपमान नित्य सहन करने पड़ते है। उसमे ही कौन सुरखाब के पर लगे है।

इस तर्क-योजना से संघर्ष और बलिदान की शक्ति ग्रहण कर वह वहाँ बैठा रहा। पर उसके भीतर जो एक युद्ध हो रहा था वह उसके अंग-संचालन मे व्यक्त हुआ।

माँ ने आदेश्वर को देखा। मुख कितना सुन्दर है। तेज भी है। वह अच्छा थानेदार या मुहर्रिर बन सकता था। पर एक हाथ और अधूरा पैर। उसकी असहायावस्था पर उनका मातृत्व उमड़ आया।

आदेश्वर अपने भीतरी कष्ट के कारण कसमसा रहा था। माँ ने

सोचा—खाट पर इस प्रकार बैठने से उसे कष्ट हो रहा है। बोलीं—"बेटा, वहाँ ठीक न बैठा जाता हो तो इधर आ जाओ।" और आराम कुर्सी की ओर उन्होंने संकेत किया।

पटवारी सा'ब काँप गये। यह आराम कुर्सी उन्होने खास तौर पर थाने-दार सा'ब के लिए वहाँ बिछवायी थी।

माँ की आज्ञा पाकर आदेश्वर ने अपने अपमान में कुछ कमी अनुभव की और उठकर आराम कुर्सी की ओर चला। पटवारी ने आदेश्वर के नयन से नयन मिलाकर हाथ से सकेत किया कि उसे आराम कुर्सी पर नहीं, किसी और कुर्सी पर बैठ जाना चाहिए पर आदेश्वर ने जैसे उसे देखा ही नही और देखा भी तो उसने सकेत समझा नहीं। वह जाकर आराम कुर्सी पर बैठ गया और दोनों पैरों को समेट उसके ऊपर रख लिया। अब वह प्रतिष्ठित मण्डली के बिल्कुल मध्य मे था।

माँ ने निकट से उसे देखा। वह क्या था ? क्या करता था ? और फिर-फिर इस दुर्घटना के विषय मे प्रश्न पूछे। उन्हे आश्चर्य हुआ कि इतनी शिष्टता से वार्तालाप करने वाला व्यक्ति उन्हे उस गाँव मे प्राप्त हो गया। वे प्रसन्न हुई। मन ही मन रूपमती के भाग्य की प्रशंसा की। और फिर वे भीतर चली गईं।

जब तक वे वहाँ रही, एक अस्वाभाविक संयम एकत्र जनों पर रहा। उनके जाते ही एक सन्तोष और स्वतन्त्रता की साँस उस बैठक से निकलती स्पष्ट सुनाई पडी।

थानेदार सा'ब ने अब आदेश्वर को निकट पाया,—बिल्कुल सामने। वे उससे वार्तालाप करने को विवश हुए।

"कानपुर छोड़े कितने वर्ष हुए ?"

"यह चौथा चल रहा है।"

इसी समय मास्टर श्यामाचरण ने बैठक मे अपना मोटा डडा लिये प्रवेश किया। वे अधेड़ थे। मार्ग मे उन्होने जान लिया था कि थानेदार गाँव मे दिन भर के लिए आये है, इसीसे उन्हे बुलाया।

उनको समझ मे नही आता था कि थानेदार सा'ब को उनसे वार्तालाप मे मनोरजन क्यों प्राप्त होता है ? पर जब मनोरंजन प्राप्त होता है तो वे उसे अपना गुण समझने लगे और जहाँ तक उनके वश मे था वहाँ तक स्वयं मनोरंजन को सामग्री बनने का प्रयत्न करने लगे ।

इसलिए अभिवादन के बाद जो कार्य हेडमास्टर सा'ब ने किया वह कुर्सी विभाग के निकट पहुँचना और वहाँ अपना गंदा मोटा कुरूप डडा ठीक मेज़ के बीचोबीच रखना था ।

थानेदार ने प्रश्न किया—"मास्टर मा'ब यह डडा आपके पास कितने दिन से है ?"

"उन दिनो मै नार्मल मे था । चोबोस वर्ष से ऊपर हो चले ।"

"काम पडता है कि खाली दिखाने के लिए ?"

"काम क्यों नही पडता सा'ब," उन्होंने कारिन्दा सा'ब को शंका का समाधान किया,—"शिक्षक और ताडना का जब तक सम्बन्ध है तब तक यह आयुध सर्वथा काम का है ।"

"आप इससे ताडना देते है ?" पटवारी सा'ब ने जीभ खोली ।

"जो हाँ, थानेदार सा'व ताडना देते है सरकार के बल पर । पर मै स्वतन्त्र हूँ, ताडना देता हूँ अपने बल पर । इस डंडे की धूलि मे करामात है पटवारी सा'ब । यह ब्रह्मा को हिला देता है । इस डडे की धूलि खा कर कितने ही पटवारी और थानेदार हो गये, कितने ही वकील और सरिश्तेदार हो गये ।"

थानेदार ने सरिश्तेदार के स को छोड कर रिश्तेदार को पकड़ लिया । बोले—"आपके डंडे के ज़ोर से रिश्तेदार भी हो सकते है ?"

"मैं कभी झूठ नही बोला, मै क्या-क्या गिनाऊँ जाने कौन-कौन दार हो गये ।"

थानेदार साहब अपने यमक को मास्टर सा'ब की बुद्धि पर व्यर्थ जाते देख झुँझला उठे । पर बात तो उन्हीं से करनी है । बोले—"यह तो बताइए आपका पढ़ाया कभी कोई कारिन्दा भी हुआ है ?"

"भला मजाल है कि न हुआ हो। अवश्य हुआ होगा। कारिन्दा क्या थानेदार सा'ब मैने बड़ी ऊँची-ऊँची असामियाँ पढ़ाई है।"

कारिन्दा सा'ब कट गये। इस समय कुछ बोला नही जा सकता था।

"वह ऊँची आसामी कौन थी ?"

"मैंने जवानी में राजाओं और ताल्लुकेदारो को पढाया है। अब बूढा हो आया हूँ तो इन गाँव के छोकड़ो मे सिर खपाने मुझे भेज दिया है जिनके पिताओ को अपना नाम लेने तक की योग्यता नही है।"

पटवारी सा'ब ने पूछा—"आपने राजा ताल्लुकेदार कहाँ पढ़ाये ?"

"वही जहाँ इनकी खान है। बहुतों को पीट-पीटकर ताल्लुकेदार बना दिया। जिन दिनों मै लखनऊ में था जिसे देखो वही ताल्लुकेदार। कोई ताल्लुकेदार के चाचा के साले के भाई का बेटा है, कोई उसके मामा के बहनोई का नाती है, कोई उसकी पत्नी की बहिन का धेवता है, कोई उनकी बहिन की फूफी का भतीजा है।"

यह सब सम्बन्ध उन्होंने इस शीघ्रता से उच्चारण किये कि लोगो के ओठो पर मुस्कान आ गई। थानेदार सा'ब ने समझा कि मास्टर सा'ब का आना सफल हो गया।

"जिसे देखो वही ताल्लुकेदार। आगे, पीछे, दाये, बाये, अगल, बगल सब ओर ताल्लुकेदार ही ताल्लुकेदार, राजा ही राजा। जैसे कि वहाँ मेढकों के साथ मेह मे राजा भी बरसते हों।"

मुस्कान गहरी हुई। पर जब तक थानेदार नही हँसते, दूसरा कौन हँसे ?

आदेश्वर ने प्रश्न किया—"इतने राजाओ के बीच आप साधारण मनुष्य कैसे रह गये ?"

"आपको किधर से मै साधारण दिखता हूँ ? क्यो थानेदार सा'ब क्या मै साधारण हूँ ?"

थानेदार सा'ब ने दृष्टि ऊँची की और मास्टर सा'ब की फटी टोपी और फटे कोट पर जमा दी। आलोचक की दृष्टि से देखते हुए बोले—"आप देखने मे आदेश्वर जैसे असाधारण तो नही लगते।"

ग्रादेश्वर जैसे बन्द था, एक दम फट पडा। बोला—"हॉ, मास्टर सा'ब आपमें असाधारणता है और महान असाधारणता है।"

ग्रौर मास्टर सा'ब की दृष्टि इस ग्रासाधारण व्यक्ति की ग्रोर लग गई जिसने उनमे भी ग्रसाधारणता खोज निकाली।

"ग्रापकी ग्रसाधारणता विलक्षण है। ग्रापने जीवन-भर राजाग्रो को पढाया, जीवन भर ग्राप स्वर्ण के निकट उपासना करते रहे, पर ग्राज वृद्धावस्था में ग्रापके पास न साबूत टोपी है ग्रौर न एक पूरा कोट। ग्रवश्य ही इस विषय मे ग्राप ग्रसाधारण हैं।"

ग्रादेश्वर ने जो बात कही वह मास्टर सा'ब के हृदय को स्पर्श कर गई। ग्रौर ग्रपनी दृष्टि जो उन्होने ग्रादेश्वर की ग्रोर घुमाई तो उसके भाव बिल्कुल परिवर्तित हो चुके थे। इस एक वाक्य ने उनके जीवन के समस्त लम्बे दु:खाध्याय को खोलकर ग्रब उनके सम्मुख बिछा दिया था। उन्हे लगा कि वे वास्तव मे, सोने के पड़ोस मे रह कर, मरकर, पचकर, उसकी कुछ किनकियाँ भी प्राप्त न कर सके।

थानेदार को प्रसन्न करने की भावना तिरोहित हो गई। ग्रपने जीवन की ग्रोर उनकी जाग्रत दृष्टि गम्भीर हो चली।

ग्रादेश्वर ने ग्रपना एक समर्थक बना लिया। जिस प्रकार की ग्रवज्ञा ग्रौर उपेक्षा वह इस स्थान पर सहता ग्राया है, उसका बदला लेने के लिए ग्रौर इन लोगो के नेत्र खोल देने के लिए उसने यह ग्रवसर उचित समझा।

मास्टर सा'ब की सहानुभूति को व्यर्थ खोना ग्रनुचित समझ कर उसने बिना रुके गाँव की ग्रार्थिक व्यवस्था पर प्रहार किया।

"मास्टर सा'ब, ग्राप मास्टरी करते है, ग्रापके दो लड़के किसानी करते हैं; ग्रौर ग्राप सब मिल कर ग्रन्न-वस्त्र के लिए नहीं जुटा पाते! क्यों? क्या कभी इस पर विचार किया हैं?"

इस वाक्य ने मास्टर सा'ब को ही नही ग्रन्य ग्राम-निवासियों को भी चैतन्य कर दिया। यह समस्या सब की समस्या थी। कारिन्दा सा'ब ग्रौर

थानेदार सा'ब को लगा कि यह विपय उन लोगो के सम्मुख अनुचित है। पर प्रत्यक्ष वे उसे रोक नही सके।

थानेदार सा'ब ने रोका नहीं, इसलिए कारिन्दा सा'ब चुप रहे। थानेदार सा'ब ने सोचा कि अच्छा है चले यह विषय। विवाद की अच्छी सामग्री है। अन्त मे विजयी तो वही होगे।

बात आगे बढ गई। आदेश्वर ने पूछा और अब तनिक उच्च स्वर से—"क्या हम लोग गॉव मे नगर के मजदूरों से कम परिश्रम करते है ?"

"नही तो", मास्टर सा'ब ने उत्तर दिया।

"यही नही", आदेश्वर ने कहा—"कडी गर्मी और बरसात में वे लोग विश्राम कर सकते है। परन्तु हम लोग उन दिनो कार्य करने को बाध्य है। हम इतना परिश्रम करते है, इतना जोखिम लेते है, फिर भी उनकी अपेक्षा हमारी दशा बुरी क्यो है ?"

थानेदार सा'ब को लगा कि पता नहीं बात कहाँ पहुँचेगी। पर इस लँगड़े-लूले व्यक्ति को इस प्रकार बोलते देखकर उन्हे कुछ विचित्र अवश्य लगा।

आदेश्वर के उत्तर में उपस्थित जनो के नयनो ने उस पर स्थित होकर वही प्रश्न दुहराया—'हाँ, इतना परिश्रम करने पर भी हमारी दशा इतनी बुरी क्यो है ?'

"काम करने पर भी पूरा नही पडता। क्यों ?" उसने फिर पूछा—हरिनाथ ने, जो इसमे प्रारम्भ से ही रुचि ले रहा था, उत्तर दिया—"मज़दूरी कम है।"

"यह बात !" आदेश्वर ने हरिनाथ का उत्साह बढ़ाया। लोगों को लगा कि हरिनाथ वास्तव मे बुद्धिमान है। और आदेश्वर ! उसे वे ऐसा कब समझते थे कि थानेदार और कारिन्दा उसके सामने चुप बैठे रहेगे।

सब की दृष्टि ने कहा—"हरिनाथ ठीक कहता है।"

कारिन्दा सा'ब ने हरिनाथ की ओर तीव्र दृष्टि से देखा। पर इस समय वह आदेश्वर की 'शाबाशी' का मूल्य सब से अधिक समझ रहा था।

"तो हमारी मज़दूरी कम क्यो हो जाती है ?"

सब चुप।

आदेश्वर ने बलपूर्वक और स्पष्ट शब्दों मे कहा—"इसलिए कि सरकार के अतिरिक्त राजा, ताल्लुकेदार अथवा जमीदार उसमे भाग लेता है।"

कारिन्दा सा'ब ने रक्षा-प्रार्थना की दृष्टि से थानेदार की ओर देखा।

"यदि इन लोगो को बीच मे से हटा दिया जाय और भूमि पर किसान का स्वामित्व हो जाय, तो किसान न केवल प्रसन्न होगा वरन् भूमि की उपज बढाने का भरसक प्रयत्न करेगा।"

"ठीक कहते हो आदेश्वर।" सामने बैठे ग्रामीणों मे से एक ने कहा।

थानेदार सा'ब को लगा कि आदेश्वर अब क्रान्ति का प्रचार करने जा रहा है। उसे रोकना कर्त्तव्य है। पर आज्ञा देना सम्भव नही। इसलिए उन्होंने उसे विवाद मे उलझा लेना चाहा। बोलें—"तो आप उन्हे मिटाने के लिए क्रान्ति की व्यवस्था देगे ?"

थानेदार के इस वाक्य से आदेश्वर को स्थिति का ज्ञान हो आया। उसे अनुभव हो रहा था कि कारिन्दा इस प्रश्न के उठाने के अत्यन्त विरुद्ध हैं। थानेदार किसी प्रकार सहन कर रहे है। पर उनके इस प्रश्न ने और उनके स्वर ने स्पष्ट कर दिया कि अब वे भी इसके विरुद्ध जा रहे है। जो कुछ उसने प्रारम्भ किया है, वह अन्त तक पहुँचाया जा सके, इसलिए एक की यदि प्रत्यक्ष सहानुभूति नही तो मौन सहमति उसे अपनी ओर रखनी ही चाहिए।

बोला,—"थानेदार सा'ब अपना देश न रूस है, न फ्रांस। इसलिए जो उपाय वहाँ उपयुक्त हुए है वे यहाँ कैसे ठीक होगे ? पर इस विषय मे हम एक बात भूल जाते है।"

"क्या ?"

"और वह है हमारी पुलिस। सब कमियाँ होते हुए भी भारत को एक कुशल ईमानदार पुलिस विभाग प्राप्त है। कैसा भी परिवर्त्तन हो इसकी सहायता से अत्यन्त सुगमता से किया जा सकता है।"

पुलिस विभाग की प्रशसा ने कार्य किया। थानेदार ने प्रशंसात्मक दृष्टि से आदेश्वर की ओर देखा। उन्हे लगा कि यह वास्तव मे दिमागवाला, बुद्धिमान व्यक्ति है। सामाजिक व्यवस्था मे सुधार लाने के लिए किसी ने अभी इसके प्रयोग की बात नही कही है। वे सहानुभूतिमय होकर बोले—"आदेश्वर बाबू, बताइए आपकी वह वैधानिक योजना कौन सी है ?"

"मेरी योजना ऐसी है कि कोई भी ईमानदार शासन उसे कार्यान्वित कर सकता है। किसी भी पक्ष को उससे आर्थिक हानि विशेष न होगी।"

इस आश्वासन से कारिन्दा सा'ब की रुचि भी इस योजना की ओर आकृष्ट हुई।

"योजना यह है कि सरकार बडे जमीदारो से जमीदारी के अधिकार खरीद ले।'

जमीदार यदि न बेचे तो—।"

"आप जानते है कि सरकार ने कितनी भूमि रेलो, अस्पतालो, पाठशालाओ के लिए प्राप्त की है। सबने वह भूमि प्रसन्नता से नही दी है। जिस विशेष अधिकार का प्रयोग सरकार ने उस स्थान पर किया है, उसका प्रयोग वह यहाँ भी करे। मै यह मानता हूँ कि जिनके अधिकार लिये जायँ उन्हे उचित मूल्य दिया जाय।"

"परन्तु" थानेदार ने प्रश्न किया—"आप को कदाचित् पता नही है कि यह बहुत बडी रकम होगी और सरकार के पास इतना धन नहीं है।"

किसानो के हृदय मे जो एक आशा सचार हुई थी, वह बैठ चली; उनके चेहरे उतर गये।

"इसका उपाय है।" आदेश्वर ने कहा।

गाँव वालों ने समझा उनका आदेश्वर ऐसा-वैसा नही है। कारिन्दा के सिपाही ने भी उसमे अब गर्व अनुभव किया। इस बीच अंग्रेजी के जो दो-चार वाक्य उसके और थानेदार सा'ब के बीच बोले गये, उससे अनुमान लगाया गया कि आदेश्वर अंग्रेजी तेज़ बोलता है इसलिए पढ़ा भी अधिक

होगा। गाँव वालों को आरामकुर्सी पर बैठा आदेश्वर उनकी ढाल-सा प्रतीत हुआ।

"इस कार्य के लिए सरकारी क़र्जा जनता से लिया जाय। मै विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसा क़र्जा देखते-देखते एकत्र हो जायगा।"

गाँव वालो ने देखा कि थानेदार सा'ब का यह प्रश्न भी सुलझ गया। पर अभी एक प्रश्न शेष था।

उन्होंने पूछा—"पर सरकार उस ऋण को चुकायेगी कैसे ?"

"सरकार कहाँ से चुकायेगी ? किसान चुकायेगा। जिस प्रकार सरकार तकावी चुकवा लेती है, उसी प्रकार प्रति वर्ष लगान के अतिरिक्त कुछ धन उस ऋण को चुकाने के लिए किसान से लेती रहेगी। लम्बे समय पर फैलाने से किसान को असुविधा भी न होगी। इस प्रकार धन वह देगा; अधिकार वह खरीदेगा; सरकार सहायक मात्र होगी।

"सरकार को इससे लाभ .. ?"

"सरकार के पीछे होगा बलिष्ठ, सम्पन्न और सन्तुष्ट किसान; जो उस सरकार के लिए अपना जी जान होमने को तैयार रहेगा।"

"और जमीदार ?" कारिन्दा सा'ब ने हृदय सँभाल कर प्रश्न किया।

"वे देश के नेता होंगे। इतना धन उन्हे एकत्र प्राप्त हो जायगा कि वे सहज ही उसे देश के औद्योगिक विस्तार मे लगा सकेंगे। इस प्रकार इस योजना के अनुसार देश की औद्योगिक और ग्रामीण दोनो प्रकार की उन्नति की सुविधा हो जाती है।"

"योजना सुन्दर है।" मास्टर सा'ब बोले।

थानेदार ने प्रशंसात्मक दृष्टि से आदेश्वर की ओर देखा। सारी सभा जिसे उसकी हार समझ रही थी, उसे वे अपनी विजय समझ रहे थे। वे समझ रहे थे कि उन्होंने चतुरता से क्रान्ति की चर्चा रोक कर उसे वैधानिक दिशा प्रदान कर दी है।

"आपके पास तो बहुत सी पुस्तकें होंगी ?"

"हाँ कुछ है, नगर के पुस्तकालय का भी मै सदस्य हूँ।"

"मै आपका संग्रह देखना चाहूँगा, और .. ...।"

"हाँ, हाँ, अवश्य।" आदेश्वर ने कहा।

ग्रामीणो ने समझा कि कोई उपाय है, जिसे वे समझ नही पाये, जिससे उनकी दशा मे सुधार हो सकता है, वे वास्तव मे आत्माभिमानी, आत्मावलम्बी मनुष्य हो सकते है। आदेश्वर, थानेदार सा'ब और कारिन्दा सा'ब इस पर सहमत है।

२

रामाधीन को पटवारी और हरिनाथ की सहायता जो प्राप्त हुई, उससे परिवर्त्तन मे उसने अपनी स्वीकृति दे दी—स्वीकृति रामसरन के विरुद्ध गवाही देने की।

रामाधीन ने वचन दिया और अपना काम करा लिया। पर रामसरन के विरुद्ध गवाह बनने की गम्भीरता उस समय तक उस पर प्रकट नहीं हुई जब तक कि पुलिस ने उसे, कचहरी में क्या कहना है इसकी, शिक्षा न दी। उसे ज्ञात हुआ कि वह प्रमुख गवाहो मे से है और गंगाजली उठाकर जज के सामने कहेगा—'रामसरन ने वास्तव मे कारिन्दा सा'ब की हत्या का प्रयत्न किया। उसने और अमुक-अमुक ने उन्हे बाल-बाल बचा लिया; फिर भी आघात से कारिन्दा सा'ब का मुख रक्त से भर गया।'

अपने निश्चय की पूर्ण गम्भीरता का परिचय पा वह घबरा उठा। क्या वह अपने भाई को फाँसी पर चढ़ाने के लिए गवाही देगा। वह रामसरन जिसे उसने प्यार से गोद मे खिलाया है, जिसकी ओर से अन्य बालकों से लडा है,—और फाँसी!

पर अब यदि मुकरता है; तो पुलिस और कारिन्दा दोनो उसके वैरी हो जाते है। वह जीवन-पर्यन्त इस गाँव मे दुखी किया जाता रहेगा। तब उसे लगा कि वह उत्पन्न ही क्यो हुआ।

इस प्रकार के तर्क-वितर्क से घटनाएँ रुकती नहीं, मनुष्य को उनमें जो भाग मिलता है वह उसे पूर्ण करना होता है। कोई रोये, कोई हँसे,

कार्य-कारण की धारा जीवन को अछूता नही छोडती । मनुष्य केवल अपने पर संयम रख सकता है और भय से बच मकता है। इन्हीं दोनों स्थानों पर रामाधीन ने धोखा खाया । भय ही है जो मंसार के मर्व पापो का, इसी से सर्व दु.खों का, मूल है ।

रामाधीन अपने अस्तित्व की गहराई से दुखित हुआ । पर दु ख को वह इधर-उधर की बातों से छिपाने का प्रयत्न करता रहा ।

एक भावना थी जो उसे सान्त्वना प्रदान करती थी, उसे ही वह यथा-सम्भव उत्तेजन देता रहता था । यह थी रामसरन के प्रति, पिता के प्रति वैर भावना । वह सोचता—यदि रामसरन के स्थान मे होता तो रामसरन भी उसके प्रति वह व्यवहार करता जो आज वह रामसरन के प्रति कर रहा है। और फिर राममरन उमका पट्टीदार है। यदि उसे जेल हो जाती है, वह नि सन्तान मर जाता है तो उसकी भूमि का आधा भाग रामाधीन का है । इस लाभ की दृष्टि से तनिक झूठ बोलना बुरा नहीं ।

गाँव मे लोग उसे बुरा कहेगे । पर कौन बुरा नही है । ऐसे है जिन्होंने अपने पिता के विरुद्ध गवाही दी है, जिन्होने भाइयो से फौजदारी की है । नहीं, गाँव की चिन्ता वह नही करेगा । इस कार्य से गाँव के समाज मे उसकी प्रतिष्ठा मे जितनी कमी आयेगी, उससे कहीं अधिक परिमाण मे प्रतिष्ठा वह पुलिस और कारिन्दा के सम्पर्क से प्राप्त कर लेगा, प्राप्त कर रहा है। वह गाँव मे महत्वपूर्ण व्यक्ति बनने जा रहा है और बनकर रहेगा । महत्व के पथ पर ऐसी घटनाओ से लाभ उठाना होगा; संकोच को कुचल देना होगा ।

इस प्रकार की विचार-धारा उसके मन के गहरे तल पर बहती रहती थी । पर कल जो एक नवीन घटना की सूचना उसे मिली है वह वास्तव में विचित्र सी है ।

वह जानता है कि गाँव मे कुछ अव्यक्त लोग है जो रामसरन को देवता और उसके कार्य को महान बनाये डाल रहे है । पर इनको उसने कोई महत्व नहीं दिया । यह लहर पुलिस और राजा के सम्मुख नही ठहर सकेगी ।

और नवीन समाचार यह है कि रामावतार नगर से लौट आये है। उन्होंने सब से मँहगे और श्रेष्ठ वकील माथुर को किया है। यहाँ अबूझ यह है कि माथुर की फीस के लिए न उन्होंने भूमि बेची है, न गिरवी रक्खी है। अवश्य ही उनके पास रुपये थे जो उन्होने बाँटे नही।

पर अधिक विचार से यह उसे जँचा नही क्योंकि घर का रत्ती-रत्ती हाल, उसे चाहे न हो, महदेई को ज्ञात था। उसने कह दिया था कि घर मे अब बाँटने योग्य कुछ नही रहा। यदि कुछ रहा भी होगा तो इतना नही कि माथुर को कर सकें।

तो माथुर को कर सकने योग्य धन बाहर से आया है। इस बाहर का अर्थ क्या है? गाँव मे किसी ने दिया है? कौन है ऐसा धनी? साहु हो सकते है। पर वे कारिन्दा और थानेदार की सेवा मे रत है। उनके विरुद्ध वे क्यो धन व्यय करेंगे?

गाँव मे चन्दा सम्भव नहीं। उसे लगा कि कोई महत्वपूर्ण शक्ति रामसरन की पीठ पर हो गई है। एक आन्तरिक प्रसन्नता उसे हुई। वह पुलिस का भी बुरा न बनेगा और रामसरन भी दण्डित न होगा। फिर बुरा भी यह कम न लगा। माथुर के सम्मुख पडने के भय से वह काँप उठा। जिससे सुना यही कि गजब का वकील है, पेट की बात निकाल लेता है।

पर गवाही तो देनी ही होगी। माथुर हो या कोई और हो। अब वह एक यंत्र का पुर्जा बन गया है, जिधर वह ले जायगा, जाना ही होगा।

३

भाई रामावतार द्वारा वैजंती की प्रशंसा सुनकर पार्वती बुवा का कष्ट कुछ बढ ही गया। परन्तु वृद्धा होने पर भी वे अधिकार की बात में पराजित होने वाली नहीं थीं। असफलताएँ उन्हे पुन-पुनः प्रयत्न करने को प्रोत्साहित करती थीं। और इससे वैजंती के विरुद्ध भावनाएँ उनमे और भी गहरी होती गईं। उन्होंने भी धूप मे अपने केश सफेद नहीं किये है; वह सब समझती हैं। यह चार दिन की छोकरी और उनसे खेल कर निकल जाये!

वे वैजंती के विरुद्ध ताना-बाना फैलाने लगी। किसी प्रकार यदि पुरुषो की सहानुभूति उसकी ओर से हटा सकती तो सब काम हो जाता। पर पुरुष एक विचित्र रीति से वैजंती पर आश्रित थे।

रामविलास का आधा काम वह करती थी। रामावतार को न जाने क्यो उस पर विश्वास था। वे समझते थे कि मानो उनकी सब गृहस्थी उसी के आश्रय से चल रही है।

पार्वती बुवा ने जो निश्चय कर लिया उसे कोई डिगा नही सकता। उन्हे अपनी योजना की सफलता पर उतना ही विश्वास था जितना कि प्रत्येक धर्मालम्बी को अपने धर्म की सर्वश्रेष्ठता पर होता है। पडोसी के यहाँ कुछ था, किसोरी को वहाँ उन्होने परिवार का प्रतिनिधित्व करने भेज दिया।

घर मे दो काम रह गये; कुट्टी काटना और रोटी बनाना। दोनो ही आवश्यक थे। वे आगे पीछे नही हो सकते थे साधारणतया होता यह कि बुवा जी भोजन बनाती और वैजंती जो कार्य करती आई है वह करती। पर बुवा जी ने अपने अधिकार का प्रयोग किया। उन्होने कहा—"कुट्टी मैं काटूँगी।"

"बुवा जी !" वैजंती ने विरोध किया।

"नही बहू, तू रोटी बना। मै कुट्टी काटूँगी।"

"बुवा जी, चार-पाँच पशुओ की कुट्टी है।"

"मैं क्या देखती नहीं हूँ मै घर में रहती हूँ, आँख वन्द करके नही।"

"बुवा जी जितना सरल तुम उसे....।"

"मैं पचास वर्ष की बुढिया कुट्टी काटने का पाठ तुझसे नही पढ़ूँगी।" उन्होंने अधिकार और तेज़ी से कहा।

वैजंती ने मन मे कहा—मरती है तो मर। जा काट, देख कैसा मजा आता है। जब छाले पड़ेंगे तो चिल्लाती फिरना।

प्रकट बोली—बुवा जी, तुम रोटी बना लो। कुट्टी मै नित्य काटती थी, आज भी काटे लेती हूँ।"

नक चरी पर गिर पडा। वह चरी कटने के स्थान पर आगे पीछे फैल गई। उनकी मुट्ठी खुल गई।

इस घटना ने उन्हे अनुभव करा दिया कि उनकी पकड न गँडासे पर, न चरी पर पर्याप्त शक्तिशाली है। कुट्टी वास्तव मे उनकी दुर्बलता के कारण नही कट रही है।

यह जैसे उन्हे एक चुनौती थी। क्या वे वैजंती से भी दुर्वल है। यह सम्भव कैसे हुआ? नही वे ही काटेगी और यही इसी गँडासे से काटेगी।

उन्होने चरी पर मुट्ठी कडी की। जोर से गँडासा मारा। गँडासा मुट्ठे की फुनगियों को तनिक छूकर लकडी मे धँस गया। बुवाजी ने एक हाथ से उसे निकालने का प्रयत्न किया। पर असफल रही। एक लज्जा उन पर आ गई—यदि कोई इस अवस्था मे उन्हे देख ले तो। उन्होने चारों ओर देखकर चरी छोडी, नयन लगभग मूँद कर उन्होने दोनो हाथों का बल लगाया, तो कही जाकर वह निकला।

जी मे हुआ कि जाकर वैजंती से कहे कि आकर वही काट ले। ऐसे बुरे औजारों से उन्होंने कभी काम नही किया है। भला ऐसा गोठिला गँडासा!

पर गोठिल का ध्यान आते ही उन्हे अभी तनिक पहले की घटना स्मरण आ गई। क्या गोठिल भौथरा गँडासा इतना लकडी मे धँस सकता है?

उन्हे लगा कि वे न काट सकेगी और न वे वैजंती से कह सकेगी। पशु भूखे मरेंगे, इसकी ओर उनका ध्यान गया ही नही। क्योंकि पशुओं के लिए न बुवाजी नामक कोई व्यक्ति घर में था और न बुवाजी के लिए पशुशाला में पशु थे।

उन्होने निश्चय किया कि काटेंगी वही। चाहे धीरे-धीरे काटें। दो-पहर तक न सही संध्या तक तो कट ही जायगी। और वे काटने मे फिर प्रवृत्त हुई पर वैजंती ने ठीक कहा था—देखने मे जितना सरल लगता है कार्य उतना सरल नहीं है।

और शीघ्र ही बुवाजी के दोनो हाथो मे लाल चकत्ते पडने और कल्लाने लगे। दाहिने हाथ मे जैसे काँटे से चुभने लगे। उन्होने गँड़ासा रख दिया। चेष्टा की—दाहिने हाथ से चरी पकडे और बाये हाथ से गँडासा चलाये। पर शीघ्र ही पता लग गया कि उमकी इस योजना के कार्यान्वित होने मे एक सहस्त्र और एक बाधाएँ है।

वे अब वास्तव मे चिन्तित हो गई। इस भुँझलाहट से जो क्रोध उबला उस सब का प्रवाह रामसरन की बहू की ओर बह गया। जब उसे ज्ञात था कि कुट्टी काटना सरल नही है, तो उसने स्वय क्यो नही काटी और उसे क्यो यह कार्य-भार दे दिया।

मन ने वैजती पर बडा क्रोध आया। पर स्वयं जाकर उससे कहने के योग्य आत्मा-बल उनमे न था। अपने मुख इस चार दिन की छोकरी के सम्मुख अपनी पराजय वे न स्वीकार करेगी। हाँ, इतना उन्हे अवश्य ज्ञात हो गया कि वैजती अब तक जो काम सँभालती आई है वह सरल काम नही है। पर इसके विरुद्ध भी उनके पास तर्क शीघ्र ही उपस्थित हो गया।

उनसे काम इसीलिए नहीं हुआ कि आज प्राय: प्रथम बार उसे करने बैठी हैं। यदि निरन्तर अभ्यास का बल हो तो क्या बड़ी बात है ? वैजंती यदि कर लेती है तो यह कार्य उसके लिए सरल ही होगा। वे चाहती थीं अपने चाहे कैसा ही हो काम वैजती के लिए कठिन होना चाहिए।

आगे काटने का साहस उनका न हुआ। वे उठकर घर से बाहर चली गईं।

वैजंती भोजन बनाने मे लगी पर उसका ध्यान कुट्टी की ओर लगा हुआ था। कुट्टी काटते समय शरीर से जो पसीना निकलता था उसमे एक विचित्र भौतिक और मानसिक आनन्द था। एक गम्भीर आत्म-तुष्टि थी।

उसने देखा कि बुवाजी से कुट्टी नहीं कट रही है। पर वे अपनी असमर्थता मानने को प्रस्तुत नहीं हैं। यदि वह स्वयं पुन: काटने का प्रस्ताव लेकर उनके पास जायगी तो वे उसी पर उलटी बरस पड़ेगी। नित्य प्रति

बात बात पर कहा-सुनी और अपमान वह एक सीमा तक ही सह सकती है।

उसने सोचा—बुवाजी सबसे बड़ी है। उन पर ही घर का उत्तरदायित्व है, वे जैसा कार्य-विभाजन करे उसी के अनुसार उसे चलना चाहिए।

जब बुवाजी कुट्टी काटना छोड बाहर चली गई तो उससे न रहा गया। उसने आकर देखा कि घास मे बरसाती गीली मिट्टी वैसी ही लगी है। उसे झाड़ने का प्रयत्न नही किया गया है। जो कुट्टी कटी है वह सेर दो सेर से अधिक नहीं होगी और चाहिए मन सवामन।

बिनाझड़ी घास चरी के साथ मिलने से सब चारा खराब हो गया। मिट्टी मिल जाने से पशु न खायेगे। अच्छा हुआ जो बुवाजी ने और काटा नही। उसे जेठानी के ऊपर क्रोध आया। वह तो वहाँ जाकर बैठ गई और यहाँ मेरे पशु भूखे रहेगे। द्वार से बाहर झाँककर देखा, बुवाजी कहीं दृष्टिगोचर न हुई!

जी मे आया कि बैठकर कुट्टी काटे। पर पशुओ को यदि भोजन न मिला तो वे एक वार चुप रह सकते है; परिजन ऐसे नहीं है जो भोजन न मिलने पर सरलता से चुप रह जायेंगे। इससे उसने कुट्टी की ओर से ध्यान हटा लिया पर उसका हृदय पशुओ के लिए मसोसता रहा।

फिर यह एक दिन का प्रश्न नही है। एक बार पुरुषो के सम्मुख समस्या आ जानी चाहिए। आज वह बाधक बन गया है। व्यर्थ उसे क्यों विगाडे और उसने जाकर अपना कार्य सँभाला।

उसे केवल बुवाजी से एक शिकायत थी—घर का सब काम सुचारु रूप मे चलने पर भी वे बीच मे अपना प्रभुत्व और विशेषतया उस पर क्यो जताती है। वे उसे उतनी स्वतंत्रता देने को प्रस्तुत नही है जितनी किसोरी को।

यह सब वह जानती है, किस कारण है। उसी के लिए एकान्त मे रोती है, भगवान से प्रार्थना करती है। रामसरन के छूट आने के लिए वह क्या-क्या मिन्नतें मान चुकी है वही जानती है। इमली की जड मे जो सिन्दूर-रञ्जित भैरव है, उन्हीं पर उसकी विशेष आस्था है। पति के

सकुशल लौट आने पर उसने उन्हे अपने शरीर का रक्त चढ़ाने की प्रतिज्ञा की है। वहाँ की दीपज्योति का कारण बहुत दिनों तक गुप्त रहने पर भी अब प्रकट हो गया है। सन्ध्या समय रामावतार के घर मे जो नारीमूर्ति हरिसुन्दर के साथ निकल कर इमली की ओर जाती है वही उसका कारण है! इसके कृत्य का एक संगी और साक्षी है,—हरिसुन्दर, जो काकी का आत्मीय है। वह समझता नही, इससे काकी अपने मन की सब भावनाएँ, इच्छाएँ, आशंकाएँ उससे नि.संकोच कह देती है और वह कृष्ण की बालमूर्ति की भाँति सुना करता है।

उसे केवल एक बात समझ मे आती है: काका आयेगे तो उसके लिए चबेना लायेगे। मानों कि हरिसुन्दर की एक मुट्ठी चबेना पाने की प्रसन्नता वैजंती की रामसरन पाने की प्रसन्नता के बराबर हो।

हरिसुन्दर जाकर माँ से कहता—"काका आयेंगे, चबेना लायेगे।

किसोरी कहती—"तुझे अपने चबेना की पड़ी है, काका को आने तो दे। जिस दिन तेरे काका आयेगे "तुझे लाई-गट्टा दूँगी। ढेर-सा। भगवान् से विनती कर कि वे काका को छुडा दे।"

और तब हरिसुन्दर दो मिट्टी के ढेलो के भगवान बना उनके सामने हाथ जोड़ कर कहता—'भगवान, काका को छुड़ा दो।" पर उसका ध्यान लाई-गट्टा पर लगा रहता।

वैजंती जाकर रोटी बनाने बैठ गई, और दूसरी ओर बुवाजी परिवार के चमार हरिसेवक के यहाँ पहुँची। उनकी इच्छा थी कि सेवक चल कर कुट्टी काट दे। पर वहाँ उन्हे न उसकी पत्नी मिली, न सेवक। पडोस मे पूछने से ज्ञात हुआ कि दोनो उन्ही के खेतों पर तो काम करने गये हैं।

उनका लड़का तीन-चार मास की बीमारी भोगकर अभी उठा था। सूखा कंकाल, बैठा धूप ताप रहा था। वस्त्रों का अभाव सूर्य से पूरा कर रहा था।

अन्तिम प्रत्यन उन्होंने किया। और उस कंकाल से अपनी विनय सुनाई। पर उसने एक मुस्कान के अतिरिक्त और कोई उत्तर न दिया!

बुवाजी ने ऐसी मुस्कान एक बार और देखी थी—तब वे ससुराल मे थी, पति के मुखपर अन्तिम दिनो मे वे वहाँ ठहर न सकीं। तत्काल लौट पडी कुछ क्षणो के लिए उनका हृदय हिल गया।

पर चमारटोले के बाहर निकल आने के कुछ क्षण बाद ही वे पुन. वर्त्तमान मे आ गई। वैजंती से यह जो पराजय उन्हे प्राप्त हुई है, इसे वे किसी प्रकार सँभाल नहीं सकेगी।

वे घर पहुँची। देखा—वैजंती बैठी भोजन बना रही है। यह देखकर वे न जाने क्यो भुन गई। पर आज्ञा उन्ही की थी। कुट्टी के ढेर को देख उनका हृदय बैठ चला।

रामावतार घर आये तो उन्होने देखा—रामसरन की बहू रामाधीन के लड़को के साथ बैठी है, और पार्वती बहिन बड़ी व्यस्तता से बर्तनों को उलट-पुलट रही है जैसे कि उनमे उनका कोई बहुमूल्य आभूषण गिरकर खो गया हो और अब उनके साथ आँखमिचौनी खेल रहा हो।

उनकी दृष्टि चारे के स्थान पर पडी। घास का ढेर वैसा ही पड़ा देखा। और सेर भर कुट्टी पड़ी पाई। उन्हे सन्देह हुआ। पशुशाला मे गये। देखा—नाँदे खाली है, सूखी है। पशु उन्हे देखकर रँभाये। और फिर एक दृष्टि, जो दृष्टिवान ही पहिचान सकता है, उनकी ओर लगा दी।

उस पशुदृष्टि की निरीहता रामावतार ने अनुभव की। उन्हे लगा कि वे बोल नही सकते इसलिए किसी को उनकी चिन्ता नही है। यदि वे न होगे तो पता चलेगा। यह जो फूली-फूली मिल जाती है भूल जायगी।

वे क्रुद्ध हो गये। परन्तु पशुओं को चारा देने का काम वैजती को सौपा था इसलिए अपने पर संयम किया, फिर भी पूर्ण-संयम असम्भव था।

घर मे जाकर बहिन से पूछा—"क्यो आज पशुओं को चारा नही मिलेगा क्या? घर का प्रबन्ध ऐसा बिगड़ा जा रहा है कि समझ मे नही आता। जिनके बल से धरती का पेट फाडकर अन्न निकलता है, उन्ही को भोजन नही। इन बेज़बानों की····।"

पार्वती देवी तनकर खड़ी हो गईं। बोली—"मै क्या करूँ। बड़ी बहू

नारायण के यहाॅ गई है। छोटी बहू रोटी बनाने वैठ गई।" इससे अधिक वे बोल नही सकी।

वैजंती चुप रही, उसकी चुप्पी विवशता की चुप्पी थी।

रामावतार वैसे बहिन का बडा आदर करते थे। पर पशु उन्हे प्यारे थे। वे परिवार के जीवन थे। पूछा—"तुम क्या कर रही थी?"

पार्वती एक क्षण सकपकाई। पर तुरन्त उत्तर न देने, से अपराधिनी बनना होगा। बोली—"मैने कुट्टी काटने का प्रयत्न किया पर" और अब वैजंती के प्रति उनको भावना स्वय उनके मुख से प्रकट हो गई।—"यह तो जिसके बाप के यहाॅ खाने को न मिलता हो, उसे ही अभ्यास हो सकता है। परमात्मा की दया से मेरे तो पीहर सासरा सब भरा पूरा है।"

रामावतार घटना कुछ-कुछ समझ पाये। बहिन और बहू मे कुछ बात हुई है, इसी से बहू ने रोटी बनाई है और बुवा ने विश्राम किया है।

रामावतार को लगा कि पर्वती यदि उनकी गृहस्थी की सुचारुता मे सहायक न होकर बाधा है तो उसे अपने सासरे जाना होगा। उसे बुलाने के समय जो सोचा था वह न हुआ। वे उसे घर की सीमेट समझ कर निमत्रित कर बैठे थे और अब वह साही का काॅटा प्रमाणित हो रही थी; व्यर्थ क्लेश को जन्म दे रही थी।

"यदि तुम रोटी बना लेती तो क्या होता?"

"बुवा तो यहाॅ थी ही नहीं?" वैजंती ने बालक से कहलवाया।

रामावतार को इस प्रकार का कुछ सन्देह था। अब पक्का हो गया। बोले—"अकेली बहू दोनो काम कैसे कर लेती? यदि नारायण के यहाॅ किसी को जाना ही था तो तुम क्यो नहीं चली गई। ये दोनों, जैसे नित्य होता था, काम निबटा लेतीं।"

बालक के वाक्य ने बुवाजी को एकदम भडका दिया। वे इस घर में शासक बनकर आई हैं। टहलिनी यदि उन्हे बनाना है तो उनका अपना घर ही कौन सा बुरा है।

जोर से बोलीं—"खूब चढ़ा लो बहू को सिर पर। कहते हो कि बहू

बड़ी सीधी है; बिस की गाँठ धरी है। कहलवा दिया कि बुवाजी तो यहाँ थी ही नहीं। नही थी तो यह इतनी कुट्टी क्या तेरा बाप काट गया।"

रामावतार बहुत दिनो से इस प्रकार की कलह-सम्भावना देख रहे थे। उसके सम्मुख अब केवल न्याय का ही प्रश्न न था। प्रश्न यह भी था कि दोनों पक्षों मे से किस ओर होना उनके लिए लाभप्रद होगा।

जो कुछ उनका था सब बाँट चुके थे। उनका अपना कहने योग्य कुछ भी शेष नही रह गया है। उनकी वृद्धावस्था का दु ख-सुख यदि निर्भर करता है तो रामविलास और रामसरन पर; विशेषतया उनकी बहुओं पर। यदि बहुएँ उनके प्रति सहानुभूतिपूर्ण है, तो पुत्र भी उन्हे घर मे रखने को प्रस्तुत होगे; अन्यथा उनके बुढ़ापे का भगवान ही रक्षक है। रामाधीन से वे विशेष आशा नहीं कर सकते।

बोले—"बहिन, बहू के बाप तक जाने को • आवश्यकता नही है। उसके यहाँ क्या है क्या नही, यह कहने से अपनी गलतियो पर परदा नही पड़ जाता। तुम बहू के विषय मे सब कुछ कह लो और वह तुम्हारे विषय मे एक शब्द न बोले, यह कैसे ठीक है?"

"हाँ, समय ही ऐसा आ गया है भैया, तुम क्या करो? एक दिन था कि घरो से बहुओं को दबाकर रक्खा जाता था। अपनी लाज अपने हाथ मे है, आज तुम यदि उसे सिर पर नचाना चाहते हो तो नचाओ। मै बोलने वाली कोन? पर अनुचित जब देखती हूँ तो रहा नही जाता।"

रामावतार थके थे। व्यर्थ बात बढ़ते देख वे तेज़ हो गये। बोले—क्या उसे सिर पर नचाते हैं और क्या तुम देखती हो? कहो, मै यहाँ हूँ। यदि उसका अपराध होगा तो उसे अवश्य दण्ड दूँगा।"

पर पार्वती बहिन ने प्रश्न जैसे सुना ही नही। उन्होने अन्तिम अस्त्र का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। बोली—"इस घर के लिए इतना मरती पचती हूँ उसका यह फल है। इतनी सेवा यदि भगवान की करती तो....." और उन्होंने आँसू पोछे।

वैजंती को लगा कि उसके पशु भूखे मरेगे। यह तो रोने बैठ गई।

कुट्टी उसे ही काटनी पडेगी। वह उठी। पशुशाला मे गई। पशु उसे देखते ही रँभा उठे, जैसे कह रहे है—"माँ, तुम हमे कैसे भूल गई ?"

उनकी रँभान ने वैजती के नयनो मे जल ला दिया। उन्होने उनके मस्तक पर हाथ फेरा और फिर जैसे सब कुछ भूलकर कुट्टी काटने मे जुट गई। जब सब लोग भोजन कर चुके, बर्तन माँज चुके तब भी वह कुट्टी काट रही थी और जितनी काटती जाती थी पशुओं के आगे डालती जाती थी।

भोजन को उससे किसी ने कहा नही।

जब सब प्रकार से निश्चिन्त हो उसने रसोई मे जाकर देखा तो ज्ञात हुआ कि आज भोजन उसके लिए कुछ नही बचा।

उसे विचार मग्न गम्भीर मुद्रा से अपनी कोठरी की ओर जाते देख बुवाजी ने सन्तोष की साँस ली।

४

भाई रामावतार का वैजंती के प्रतिपक्ष की भावना से बोलना बहिन पार्वती को भाया नही। उन्हे लगा कि रामावतार ने उसे अपने यहाँ बुलाकर उसका अपमान किया है और वह बहिन उसे सहेगी नहीं।

अबतक वह केवल वैजंतो को विरोधिनी थी, अब रामावतार की विरोधिनी भी हो गई। इसलिए उसका झुकाव सहदेई और रामाधीन की ओर हो चला।

जब से यह ज्ञात हुआ है कि रामाधीन रामसरन-विरोधी गवाहों मे से एक है तब से दोनो परिवार वैरी हो चले है। बोलचाल, आना-जाना प्रायः सभी बन्द हो गया है। कारिन्दा सा'ब की अनुमति से रामाधीन ने अपना द्वार दूसरी ओर फोड लिया है। और आँगन मे एक दीवार खिच गई है।

पर बुआ दोनों परिवारो को समान दृष्टि से देखती है। वे जैसी रामविलास और रामसरन की बुवा है वैसी ही रामाधीन की भी। और रामा-

धीन को पिता का प्रेम प्राप्त नही है, इसलिए पिता की बहिन ने अपने प्रेम-दान से उस न्यूनता की पूर्ति करनी प्रारम्भ कर दी है।

बुवा पार्वती का भविष्य एक योजनानुसार चलने पर ही उन्हे सुख दे सकेगा। और इस योजना का मुख्य अंग था रामसरन को सजा हो जाना।

ऊपर से वे रामसरन के प्रति सहानुभूतिपूर्ण है। पड़ोस की नारियाँ जब राससरन की प्रशंसा करती है, तो वे भावावेश मे रो पड़ती है पर हृदय से चाहती है, वैजंती और रामावतार का गर्व चूर्ण कर देना। यह होना तभी सम्भव है जब रामसरन को जेल हो जाय! रामावतार की वृद्धावस्था और वैजंती की युवावस्था को वह उजाड सुनसान देखकर अपने हृदय को शीतल करना चाहती हैं। इससे कम से वे सन्तुष्ट न होगी।

बुवाजी ने पीढे पर बैठ ननको को अपनी गोद मे प्यार से लिटा लिया। पूछा—"क्या हालचाल है बहू ?"

"क्या बताऊँ बुवाजी, परमात्मा की गति विचित्र है।"

"क्यों क्या हुआ ?"

"पुलिस और कारिन्दा उनके सिर हो रहे हैं; रामसरन के विरुद्ध गवाही दो नही तो तुम्हे जेल दे देगे।"

"अरे राम, ऐसा अन्याय है !"

"बुवा जी, बाप भाई ने उनके साथ चाहे जो किया हो, उनका दिल बहुत साफ है, पर पुलिस उन्हे....।"

और सहदेई रुवासी होकर रह गई।

"बहू दुखी न हो। जो बदा है होगा तो वही। उसे कोई भी नही रोक सकता। यदि पुलिस वाले कहते है तो गवाही देनी ही पड़ेगी।"

उन्हे आन्तरिक प्रसन्नता प्राप्त हुई। उन्हे लगा कि जब भाई-भाई के विरुद्ध गवाही देगा, तो हाकिम को विश्वास अवश्य होगा और रामसरन को सजा अवश्य होगी।

तभी रामाधीन बोझ भर घास लिये भीतर आया। बुवाजी को उस घर की बुवाजी को वहाँ देखकर ठिठक गया। शत्रु-शिविर का व्यक्ति

उसके यहाँ क्यों ? वह बुवा के इस नवीन प्रेम से भयभीत था और इन बच्चों की माँ ने उसे ऐसा स्थान दे रक्खा है जैसे कि वह बड़ी हितू हो। वह सहदेई से असन्तुष्ट ही नही क्रुद्ध हो गया और उन्ही नेत्रों से उसने बुवाजी को ओर देखा।

अनुभव की कमी बुवा के पास न थी। उन्होने रामाधीन के कुछ कहने से पहले अपनी मैत्री का प्रमाण दिया। बोली—"रामाधीन, पुलिस से बिगाड न करना बेटा, वे जैसा जो कुछ कहे, वही हाकिम के सामने कह देना।"

रामाधीन के लिए बुवाजो पहेलो बन गई। यदि वह कारिन्दा आदि का आभारी न होता तो इतना मनमुटाव होने पर भी रामसरन के विरुद्ध झूठी गवाही देने को तैयार न होता; और यहाँ ये उस घर को मालकिन बुवा जी है जो रामसरन के विरुद्ध उसे गवाही देने को उकसा रही है।

बोला—"बुवा जी, क्या करूँ। मेरी समझ मे नहीं आता। पर जान पड़ता है कि पुलिस को अप्रसन्न न कर सकूँगा।"

"बेटा, बुद्धिमानी यही है। बाप भाई किसी के नहीं होते। पुलिस-पटवारी से गाँव मे रह कर काम पडे बिना नही रहता। उनसे बिगड़ना ठीक नही। तुम जिसका काम करोगे वही तो तुम्हारा काम करेगा ?"

रामाधीन ने सोचा—बुवा बाप और भाई दोनों के विरुद्ध हैं। बात क्या है ? पर इसमे उसे अधिक रुचि नही हुई। अभी पशुओं के लिए चारा काटना है। जब वे लोग साथ थे तो सब काम हो जाया करता था और यथेष्ठ समय विश्राम को मिल जाता था। पर जब से वह पृथक हुआ है घर अवश्य छोटा हो गया है, पर उत्तरदायित्व बढ गया है और काम तो जाने दसगुना हो गया है। नर-नारी दोनों लगे रहते है पर बस ही मे नही आता।

इस कार्य-भार के नीचे वह अपने को दबता अनुभव कर रहा है। सामर्थ्य से अधिक परिश्रम उसे पीसे डाल रहा।

बोला—"बुवाजी, रामसरन के विरुद्ध चाहे मै गवाही दूँ, चाहे सारा

गाँव गवाही दे, चाहे उसे सज़ा ही हो जाय; पर सारा गाँव ज़ानता है कि रामसरन ने जो किया ऐसा बुरा नहीं किया।"

बुवाजी को अपने कानों पर विश्वास न हुआ। जो व्यक्ति रामसरन की फाँसी की जंजीर मे कदाचित् कदाचित् सबसे दृढ कडी बनने जा रहा है वही कह रहा है कि रामसरन ने कुछ बुरा नही किया।

क्या हुआ ये अलग हो गये है, पर है तो सब के सव एक से। भले-बुरे का ज्ञान किसी को नही है। कारिन्दे की हत्या का प्रयत्न किया पर यह कह रहा है कि कुछ बुरा नही किया।

रामाधीन ने बुवा जी की मुख-मुद्रा देखी और फिर कुछ देर चिन्तित रहा। पत्नी की ओर और फिर पहाड़ सी पड़ी घास की ढेरी की ओर देखा। यह सब उसे ही काटनी है। एक हल्की आह मुख से निकल गई। बोला—"दादा ने बहुत बड़ा वकील किया है!"

"हाँ, सुना तो है।"

"बुवा जी, इतना रुपया कहाँ से आया?"

बुवा जी ने भी प्रश्न किया—"इतना रुपया कहाँ से आया?"

"दादा के पास तो था नहीं....।" तभी उसके पशु रँभाने लगे। उनके लिए चारा! वह बुवा जी का उत्तर सुने बिना ही वहाँ से चला गया। उसके जाने के बाद सहदेई ने प्रश्न दुहराया—"क्यों बुवा जी, इतना रुपया कहाँ से आया?"

"क्या पता बहू, तिरिया चरित्तर तुम नही जानती। और नही तो किसने दे दिया।"

सहदेई को विश्वास न हुआ। बोली—"बुवा जी, कहीं से आया हो, पर ससुर जी के पास तो था नही।"

"नही बहू, इन मर्दों का कोई ठिकाना नही। छिपाकर रक्खा हो तो किसे क्या पता? अब अपने प्यारे बेटे लिए निकाला है।"

सहदेई को ससुर का यह पक्षपात साधारण अवस्था मे बुरा लगा होता,

इस समय बुआ जी ने यह इस ढंग से कहा कि सहदेई भी उससे सहमत न हो सकी। और उसने उसका कोई उत्तर न दिया।

बुवा जी की तीव्र इच्छा थी कि सहदेई से पूछे—इस मुकदमे का परिणाम क्या होगा? क्या रामाधीन के गवाही देने पर भी रामसरन छूट जायगा? हाँ भैया ने बडा वकील तो किया है और उन्हें लगा कि भैया को वह रुपया न मिला होता तो निस्सन्देह रामसरन को जेल जाते और वैजंती का मानमर्दन होते वह देखती।

पर वे पूछ नही सकी। कही इससे उनकी रामसरन-विरोधी प्रवृत्ति प्रकट न हो जाय। वे देख रही है कि बैरी होने पर भी रामसरन के प्रति रामाधीन मे कुछ शेष है। कम से कम उन्हे सासरे लोटा देने के लिए पर्याप्त है। और वे पुन. उस नरक मे जाना नही चाहती।

५

पेशी के एक दिन पहले सरकारी गवाह पुलिस के संरक्षण मे नगर ले जाये गये। जाने से पहले रूपमती एक बार उन्हे स्मरण कराने आई। परमात्मा और धरम अब भी संसार मे हैं और उन लोगो के भी बाल-बच्चे है!

पेशी का अन्तिम दिन था। सब लोगो की गवाही हो चुकी थी। लोग सोच रहे थे कि पुलिस का पढाया-सिखाया सब व्यर्थ गया।

माथुर ऐसी खोद-खोद कर बातें पूछता था कि लोगो को सत्य उगल देना पडता था। सब चकित इस बात से थे कि उसे उनके वैयक्तिक जीवन की घटनाओ का ऐसा पता था जैसे कि वह उनमे सम्मिलित रहा हो। वह भय इतना गहरा पैठा कि अन्तिम गवाह बड़ी सरलता से इधर-उधर फिसल गये।

अनुभव सबने किया कि रामाधीन की आत्मा गवाही मे नही है।

सरकारी वकील ने ध्यान दिलाया कि यह गवाह अपराधी का सगा भाई है।

अधेड जज ने सिर उठाकर भाई के विरुद्ध गवाही देने वाले भाई को देखा।

गंगाजल उठाते ही रामाधीन का हृदय काँप उठा। इसका अर्थ है कि यदि वह झूठ बोलता है तो उसका समस्त परिवार गंगा माई का कोप-भाजन होगा। कचहरी मे गंगाजल गंगाजल नहीं रह जाता, यह मानने को उसका हृदय प्रस्तुत नहीं हुआ। मनमे बलिष्ठ धारणा उठी। चाहे कुछ हो, जब सच कहने की सौगन्ध खाई है तो सच ही कहूँगा।

सरकारी वकील ने जज को प्रभावित करने के लिए पूछा—"रामाधीन, जब रामसरन कारिन्दा सा'ब को मारने के लिए टूटा तब तुम कहाँ थे।"

रामाधीन ने जैसे तोते की भाँति कहा—"अपने खेतो मे।"

सरकारी वकील ने नेत्र फाड़ कर गवाह की ओर देखा। पूछा—"तुम्हारा खेत उस स्थान से कितनी दूर है?"

"कोई डेढ मील।"

जज ने पूछा—"तो तुम रामसरन के विरुद्ध गवाही देने क्यो आये?"

"हुजूर", उसने कहा—"कारिन्दा सा'ब गाँव के मालिक है, उन्होंने जो सिखायी वही कहने आया था। पर उन्होने यह नहीं बताया था कि यहाँ गंगाजली उठानी पडेगी। नही तो मै कभी न आता।"

"तो तुमने अपराधी को प्रहार करते नही देखा?"

"जी नहीं।"

सरकारी वकील ने कहा—"गवाह बिगड़ गया है।"

पर समस्त अभियोग धारशायी हो चुका था।

जज ने रामसरन से पूछा—"क्या तुम्हारे हाथ मे इतनी शक्ति है कि कारिन्दा सा'ब के मुख से एक थप्पड़ मे रक्त निकाल दे?"

रामसरन ने जज की ओर देखा।

"बोलो।"

"हुजूर, यह शक्ति की बात उतनी नही है। समय और चोट के ठीक

बैठने की बात है; यदि कारिन्दा सा'ब वैसे ही बैठ जायँ और हुजूर मैं आपको अपने पिता के समान मानता हूँ, आप को उसी प्रकार गालियाँ दें और मारने की धमकी दें, तो हुजूर वह तमाचा दूँ कि रक्त की बात क्या दाँत बाहर निकल पड़ें।"

जैसा अक्खड रामसरन था, वैसा ही उसका उत्तर हुआ। उसके समर्थको के हृदय मे खलबली मच गई। माथुर ने भी समझा कि बना-बनाया काम उसने बिगाड दिया। तीव्र दृष्टि से रामसरन की ओर देखा। पर रामसरन जैसे यह उत्तर देकर फूला नही समा रहा था। वह यदि अब जेल भेज दिया जाता है तो उसे कोई चिन्ता नहीं। वह निर्भीकता से जज के सम्मुख बोल लिया है।

दूसरी ओर जज के मस्तिष्क में एक तुलना चलने लगी। उनका पुत्र है कितना पढ़ा-लिखा। ऊपर उन्होंने कितना व्यय किया है।

उसने उन्हे धमकी दी है; यदि वे दो सहस्र रुपये उसे एक सप्ताह में नही दे देंगे तो वह उनके पीछे बदमाश लगा देगा। और यहाँ यह पिता है, जिसने कदाचित् सदा अपने पुत्र को मारा-पीटा है, एक पैसा उसकी शिक्षा पर व्यय नही किया और पुत्र है कि उस पिता की मान-रक्षा के लिए कानून के रक्तिम जबडे मे सिर देने को तैयार !

उन्होने ईर्ष्या की दृष्टि से रामावतार की ओर देखा।

तीन घण्टे बाद जब उन्होने निर्णय सुनाया तो रामसरन को एकदम छोड दिया। हाँ, कारिन्दा सा'ब को वैयक्तिक फौजदारी दावा करने का अधिकार स्मरण करा दिया। पर सुझा भी दिया कि अच्छा यही होगा कि वे लोग परस्पर समझौता कर ले।

जब लोग कचहरी से निकले तो रामावतार रामसरन को नही, रामाधीन को छाती से लगाकर रो पडे।

६

रामसरन को पिता के इस व्यवहार से एक असन्तोष हुआ; विशेषतया

जब कि रामधीन उसके विरुद्ध गवाही देने के लिए खड़ा हुआ था। तब उससे इतना प्यार जताने की आवश्यकता ?

उसके मन में पिता से विरुद्ध एक गाँठ गड गई, जो धीरे-धीरे समस्त संसार के प्रति असन्तोष मे परिवर्त्तित हो गई।

वह जानता है कि रामाधीन पृथक हो गया है। उसने पिता को सर्वस्व बाँट देने को विवश किया है। वह भी अब पृथक भाग का स्वामी है। यदि अब भी रामाधीन इतना प्यारा है तो वे बडी प्रसन्नता से जाकर उसके साथ रहे।

इस विष के एक कण ने उसके समस्त अस्तित्व को विषैला कर दिया। उसकी स्वतंत्रता ही ज़हर लगने लगी। इससे तो वह जेल मे ही सुख से था। जो था पराया था ! अपनो का दंश उसे न सहना पड़ता था। जो पराये कह लेते थे उममे क्या बुरा मानना !

छुटने से पहिले आशा-संचार से एक उत्साह उसमे जगा था। वह छूटेगा; बाहर की स्वतंत्र वायु का स्पर्श करेगा और सब ओर से....। नही, नहीं, कम से कम पिता की ओर उसका स्वागत होगा।

और अब जब कि वह छूट गया है तो उसे लग रहा है कि वह स्वर्ग के शीतल सुखद वातावरण से नरक की धधकती ज्वाला मे फेंक दिया गया है। इस ज्वाला को उसका हृदय तीव्रता से अनुभव कर रहा था।

अब स्वागत का स्थान एक ही रह गया था। और वह थी वैजती। जेल अपने जीवन के क्षुधित क्षण उसी की कल्पना से उसने भरे थे। एक विचित्र रहस्यमय स्निग्ध वातावरण की कल्पना उसने की थी। पर कल्पना तो पिता के विषय मे भी उसने भावपूर्ण की थी। उसने सोचा था, कि छूटते ही पिता उसे हृदय से लगा लेगे और वह वहाँ उस गोद मे सिर रख रो देगा।

पर वह नही हुआ। उसके आँसू नयनो मे ही उबल कर रह गये। और पिता के प्रति विद्रोह उत्पन्न करने लगे।

उसने सोचा कि जब पिता का यह व्यवहार है तो क्या पता कि वैजंती

की कल्पना भी कोरी कल्पना ही रह जाय । पिता की भाँति उसे भी उसकी आवश्यकता न हो ।

इस विचार ने वैजंती को न केवल विराग का केन्द्र बनाया वरन् एक सीमा तक विरोधी बना दिया । यदि वैजंती उससे नहीं बोलेगी, तो वह भी नही बोलेगा ।

अन्य लोगो ने उससे बोलना चाहा । पर हाँ, नही, के अतिरिक्त लम्बे वाक्य उसके मुख से नही निकले ! लोगो ने समझा कि उसे और छेडना उचित नही ।

और उसने समझा कि सभी लोग उसकी अवहेलना कर रहे है । उसे छुडा जैसे बडा उपकार किया हो । पडा रहने देते जेल मे । हो जाने देते फाँसी । वह क्या किसी के पास भीख माँगने गया था ? क्यों लगाया इतना रुपया ? उसने क्या किसी से विनती की थी ।

मार्ग मे एक इक्का मिला । उसमें एक सवारी का स्थान रिक्त था । लोगों ने वृद्ध रामावतार को उसमे बैठा दिया । रामसरन, रामाधीन तथा अन्य चार-पाँच जने पैदल ही गाँव की ओर चले ।

इस घटना ने भी रामसरन पर विपरीत ही प्रभाव डाला । लोगों ने उससे पूछा तो उसने सिर हिला दिया । पर इसके अतिरिक्त और वह करता भी क्या ?

जब रामवतार बैठ कर चले गये तो उसके मन मे उठा यहाँ भी उसकी अवहेलना ! वह चार मास हवालात मे रह कर आया है । जेल के कष्ट उसने उठाये है, इस सब की ओर कुछ भी ध्यान नही दिया गया और उन्हे, उन्हें, जिन्होने उसे छोड रामाधीन को हृदय से लगाया, उन्हे घर पहुँचने की शीघ्रता हो गई ।

असम्भव है, नितान्त असम्भव है, वह ऐसे पिता के साथ मिलकर जीवन-यापन नहीं कर सकता । वह पहुँचते ही पृथक हो जायगा । जो मार्ग उनके प्यारे रामाधीन ने ग्रहण किया है वही वह भी ग्रहण करेगा, तभी कदाचित् उनके हृदय से लग सकेगा ।

नही, उसे अब हृदय से नहीं लगना है। एक बार उनके लिए अपना जीवन जोखिम में डाल वह पाठ पढ चुका है। अब वह कोई सम्पर्क उससे न रक्खेगा।

मार्ग मे एक कुवें पर मब लोग ठहरे। पर रामसरन रुका नही निरन्तर चलता रहा। एक ने कहा—"बहू से मिलने की शीघ्रता है।"

रामसरन उसके ऊपर, अपने ऊपर क्रुद्ध हो गया। वह सडक से हटकर नीचे घूमने लगा पर उनके निकट न गया।

उमने मोचा—बहू! वह कौन सी अच्छी होगी। इन्ही लोगो मे तो रही है। नही, वह वैजंती की ओर नयन उठा कर भी नही देखेगा। उमे किसी से कोई वास्ता नहीं। वह छूटा क्यो?

भगवानदास से पुकारा—"राममरन, आओ भाई, पानी पीलो।"

रामसरन वास्तव मे प्यासा ही नहीं अत्यन्त प्यासा था। पर उसने एक बार सिर उठा कर उस ओर देख भर लिया। फिर मुख मोड़ दूसरी दिशा मे टहल गया।

वह वैजंती की ओर देखेगा भी नही। उसे लगा कि वैजंती उसकी अवहेलना कर रही है। उसके हृदय मे एक टीस हुई। पर नही, वह उसकी ओर देखेगा भी नहीं।

लोग चले तो वह भी पीछे-पीछे हो लिया।

वे लोग इसी प्रकार की अन्य यात्राओ की चर्चा करने लगे।

रघुराज ने कहा—"हरिराम की बरात मे भी ऐसा ही शीतल समय था क्यों न भगवान्? उस दिन हँसते-हँसते पन्द्रह कोस निकल गये; जान नहीं पड़ा। किरपालसिह के कवित्त बहुत ही अच्छे रहे और ठाकुर के विरहा।"

"हाँ भाई, जीवन भर याद रहेगी वह बरात।"

"हाँ, बरात ही याद रहेगी। जिन की बरात थी, परमात्मा ने उनमे से एक को भी न छोड़ा।"

फिर समस्त समाज पर जैसे उदासी छा गई। सब जगत् के मिथ्यात्व और मानव की संकुचित सीमा से प्रभावित हो गये।

"चार दिन का मेला है।"

"हाँ, भाई।"

"क्यो किसी की बुराई भलाई लें।"

पर रामसरन ने इन बातो मे से किसी मे रुचि न ली। वह अपने असन्तोष मे घुलता रहा। वह स्वयं को अपने पिता पर, वैजंती पर क्यों लादे! वह घर जा रहा है। पर घर मे उसका रहना अब नहीं हो सकता। वह घर छोड देगा। घर से निकल जायगा। पर वह चला जा रहा था।

७

घर पहुँच कर रामावतार ने रामसरन के छूटने की सूचना दी।

वैजन्ती का हृदय उछल पडा; किसोरी मुस्कराई और बुवाजी गम्भीर हो गई।

रामावतार ने रामाधीन की प्रशंसा की और कहा कि हरिसुन्दर अपनी ताई और भाई-बहिनो का बुला लावे।

हरिसुन्दर गया। सहदेई ने आना अस्वीकार किया, पर बाल-बच्चों को भेज दिया। बच्चों का उत्सव लाई-गट्टा से प्रारम्भ हो गया।

हरिसुन्दर ने कहा—"काका आ रहे हैं।"

सब ने कहा—"छोटे काका आ रहे हैं।"

उनके प्रत्येक 'काका' शब्द पर वैजन्ती का हृदय धड़क-धड़क उठता था। यह क्या सत्य है? क्या वह वास्तव में आ रहे है? अथवा मेरा मन रखने को ससुर ने यह कह सुनाया है।

यदि वे आ रहे है तो भैरव सच्चे है। उसे अपनी मानता पूर्ण करने को प्रस्तुत हो जाना चाहिए। उसने उस्तरे के समान तेज़ धारवाले चाकू, को जो बहुत दिनों से इस अवसर की प्रतीक्षा कर था, निकाला धार की

परीक्षा की और सन्तुष्ट होकर अपने पास रख लिया। एक कपडे मे पूजा की सामग्री बाँध तैयार हो गई। रामसरन को देखते ही वह भैरव की पूजा करने जायगी और उसके पश्चात् . .।

स्वर्ग के थिरकते क्षणों की कल्पना उसके नयनों के सम्मुख साकार हो उठी।

ज्यों-ज्यों रामसरन के आने का समय निकट आता था, वैजन्ती की उद्विग्नता बढ़ती जा रही थी।

क्या वे वास्तव मे छूट गये है? या यो ही...। इससे आगे वह कल्पना नही कर पाती थी। आज उसकी समस्त तपस्या की पूर्ति और उसका फल उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। और वह देवता के चरणो मे भेट चढाने को धीरे-धीरे अपना शृंगार करने लगी।

बुवाजी ने वैजन्ती को प्रसन्न होते देखा। उन्हे लगा कि उनकी गहरी हार होने जा रही हैं। वह पराजय, जिससे कभी उबरने की सम्भावना नही है।

परमात्मा है कि वैजन्ती पर और भगिनी का अपमान करने वाले रामावतार पर प्रसन्न है! अन्त मे रामसरन को मुक्त कर ही दिया।

उनके हृदय में चूल्हे-चढी खिचडी की भाँति एक खदकन होने लगी। उन्हे लगा। अब नरक-यंत्रणा अत्यन्त निकट है। इससे भीषण यातना उन्होंने अपने जीवन मे कभी सहन नहीं की। जब परमात्मा के कोप से उन्हे पति से चिर-वियोग हुआ, तब भी उन्हें ऐसा दु खानुभव नही हुआ।

उस समय वे रो सकती थीं इसीलिए दु:ख आँसुओं से शीतल हो आया था। पर आज उनके लिए रोना असम्भव था। वे निरन्तर अपमान की ज्वाला से सुलगी जा रही थीं।

वैजन्ती थी जो तनिक भी उनकी ओर ध्यान नहीं दे रही थी। वह अपने मे ही समा पाने-योग्य ध्यान और मनोयोग नही एकत्र कर पा रही थी। उसके सम्मुख एक सुनहरा पर्वत था, जो प्रतिक्षण निकट आता जा रहा था और उस पर प्रणय-मद से छलकता मोहक चित्र लटक रहा था; उसमे

रामसरन मनमोहन बनकर एक लता की जाली की ओट मे से निकल रहा था। वैजंती उसी रामसरन पर अपनी दृष्टि लगाये मुग्ध बैठी रही।

रामसरन के स्वागत के लिए न हार थे, न बाजे। ग्रामनिवासी भी पुलिस और राजा के भय से, जो अब उनकी प्रकृति बन गई थी, उस परिवार की प्रसन्नता मे सम्मिलित नहीं हो सकते थे। घर मे कुछ सजाना न था। घर आने पर उसे रक्खा हुआ भोजन दिया जाने को था और वह था, एक बड़ा लोटा गुड़ का शर्बत, एक अमावट, भुनी हुई अरहर और बहुरी।

यही एकत्र कर उसकी भाभी किसोरी अपने देवर की प्रतीक्षा कर रही थी। जेल से आया हुआ रामसरन कैसा है, यह जानने की इच्छा नरों से अधिक पड़ोस की नारियों को थी।

यदि वह दिन मे आता तो चारों ओर से वे देखने लग पड़ती। उसका कोई भाग जेल मे छूट नहीं गया है, इसका भली-भाँति लेखा-जोखा कर लेती। पर रामसरन के आने में देर हो रही थी और अँधेरी घिरी आ रही थी। इसलिए उनकी उत्सुकता भी स्थगित हो गई।

जिस समय रामसरन घर पहुँचा, उसकी दशा विचित्र थी। वह सबसे असन्तुष्ट था। उसने निश्चय कर लिया था कि वह अन्धकार मे जा चुप-चाप घर मे बिना किसी से बोले सो जायगा।

उसका जेल मे रहना अब तक लज्जा का विषय नही था, पर गाँव ने जैसे उसे लज्जा का विषय बना दिया। उसके लिए अब लज्जा-अलज्जा कैसी ? वह अब इस घर मे रहना नही चाहता। वह विरक्त हो गया।

उसे लगा कि वह अपना मुख किसी को नही दिखा सकता। इस विचार से उसका असन्तोष और भी गहरा हो गया।

रामसरन को को आया देख बुवा जी शकुन के लिए एक लोटा पानी लेकर आगे बढ़ी और उसे रामसरन के सिर पर चार-पाँच बार उतार, घुमाकर बाहर डालने चली गईं।

वैजंती ने जो पति को देखा तो उसका हृदय उछल पड़ा। जी मे जाने

क्या-क्या आया। पर जिन भैरव की कृपा से उसे आज यह दिन प्राप्त हुआ है, उन्हे क्या वह अपने सुख के क्षणों मे भूल जायगी। उसने जो मनौती मानी है; उसे पूर्ण करेगी, तभी अपने पति का स्पर्श करेगी।

वह अपने हृदय के निकट रक्खी पूजा की सामग्री को हाथ से सँभाल बाहर को ओर चली। वह जा रही थी कि मार्ग मे लौटती बुवा जी मिलीं। उसके प्राण सूख गये।

वे चीखीं, जिससे रामसरन सुन ले—'अरी अब तो रामसरन आ गया है, घर बैठ। अपने मन को बहुत कर ली तैंने।"

बुवा जी ने जो सोचा था वही हुआ। रामसरन ने पूछा—'क्या हुआ बुवा जी, कौन है ?"

"है कौन बेटा ? तेरी बहू है। इसके साथ ये दिन जैसे कटे है मै ही जानती हूँ। ऐसा तिरिया चरित्तर तो मैने कही देखा नही। आज भी अभी कही चली जा रही थी। अब मैंने डाँटा है, पर मुझे पता है कि वह सुनेगी नही। कभी सुना है कि आज ही सुनेगी।"

जो असन्तोष और क्रोध रामसरन मे वास्तव मे पिता और भाई के विरुद्ध था वह सब का सब वैजंती के विरुद्ध विशेष रूप से कार्यशील हो उठा। उस पर एक उन्माद चढ़ आया। वह तेज़ी से वैजंती की ओर बढ़ा और जाकर उसका कण्ठ पकड़ लिया। वैजंती उसी स्थान बैठ गई।

पर तभी विरक्ति का झोंका आया। उसे वैजंती से क्या वास्ता ? वह कही जाय, कुछ करे।

वह ठीक ही समझ रहा था। वैजंती की कल्पना जैसी उसने की थी वैसी ही वह निकली। उसने वैजती को छोड़ दिया इतनी तेज़ी से, जैसे कि गर्म लोहे पर से हाथ हटाया हो।

इस ऊपरी विरक्ति के नीचे उसमे एक कुरेदन उत्पन्न हो गई। जिस प्रकार रेल के जुड़े डिब्बे पृथक होने का प्रयत्न करते है, पर जंज़ीर की लम्बाई की सीमा आने पर पुनः एक दूसरे की ओर खिच आते है उसी

प्रकार रामसरन का राग जाग्रत हो उससे वैजंती मे अधिक रुचि लेने का आग्रह करने लगा।

उसके मन मे एक सन्देह घर कर गया। पर इसी सन्देह ने उसकी विरक्ति का आवरण भेद उसके राग को सजग बना दिया।

बुवा जी ने कहा—आज तो घर बैठ। क्या उसकी वैजंती नित्य रात्रि को कही जाती थी ? कहाँ जाती थी ? किसके पास जाती थी ?

यह सन्देह उसकी चालक शक्ति बन गया। वह ईर्ष्या से जल उठा और वैजती पर दृष्टि रखना प्रारम्भ कर दिया।

वह भीतर की ओर बढा, पर उसकी समस्त शक्तियाँ पौरी मे अँधेरे मे बैठी वैजती पर पहरा दे रही थीं।

वह जान लेना चाहता था कि वह कौन है जिसके पास वैजंती जाती है। वैजती के साथ अन्य पुरुष की कल्पना से उसका शरीर धधक उठा।

वह एक बार जेल से लौट आया है। कोई चिन्ता नहीं। आज वह कुलटा वैजंती के प्रेमी का खून किये बिना न मानेगा। यदि उसके भाग्य में फाँसी पर झूलना ही लिखा है तो वह झूलेगा, पर इस अपमान को स्वीकार न करेगा ; भाभी ने उससे भोजन का आग्रह किया पर उसने उससे सिर दर्द का बहाना कर टाल दिया। बुवा ने कहा—ठीक है बेटा, थके हो; थोड़ा लेट रहो ; सुस्ता कर फिर खाना।

वह उठ कर द्वार के निकट अन्धकार मे इस प्रका जा लेटा कि वैजंती की प्रत्येक गति पर लक्ष्य रख सके।

अकेला दीपक चौके मे जल रहा था। थोड़ी देर बाद रामविलास और रामावतार भोजन करने बैठ गये। शेष स्थान मे अन्धकार था।

वैजंती ने सोचा, अवसर ठीक है, चलूँ; जब तक वे लोग भोजनादि से निवृत्त होगे, लौट आऊँगी।

एक चिन्ता उसके मन मे थी। रामसरन ने भैरव की भेट चढ़ाने से पहले ही उसे स्पर्श कर लिया है। पर इस विषय मे वह विवश थी। भैरव सर्वव्यापी है, वे सब देखते है, उसके अपराध पर ध्यान न देगे !

वह चुपचाप उठी और धीरे-धीरे घर से बाहर निकली। पीछे फिरकर देखा। कोई उसके पीछे नहीं आ रहा है। उसने सन्तोष की साँस ली और तेज डग रखकर इमली की ओर चली।

रामसरन देख रहा था। उसने मन मे कहा—'अच्छा कुलटा, चल तू कहाँ चलती है ?' उसने नयन लाल किये, भृकुटी बँधी और हाथ फड़क कर प्रहार करने को उद्यत हो गये। पर उसने अपने पर संयम रक्खा और चुपचाप सावधानी से पीछा किया।

देखा चारों ओर घना अन्धकार है। एक भी दीपक कहीं टिमटिमाता दिखाई नहीं देता। आकाश मे तारे भले ही खिले हो पर वृक्षों के नीचे रात्रि परिपूर्ण थी। वहाँ अन्धकार जैसे और भी घनीभूत हो, उनके प्रकाश से भयभीत हो, आ छिपा है।

उसने देखा कि इमली के निकट वह नारी-मूर्ति खड़ी हो गई है। वह घूमकर उस इमली के ओट मे हो गया।

वैजंती ने दियासलाई जलाई। उसके प्रकाश मे रामसरन ने देखा-वैजंती बैठ गई है। भैरव के सम्मुख उसने घी का दीपक जला दिया है।

क्या समझकर रामसरन पीछे-पीछे आया था और उसने यहाँ क्या पाया ? वह स्तब्ध अपनी पत्नी-द्वारा की जाती भैरव-पूजा देखता रहा। वैजती ने पूजा के सब सुगन्धित द्रव्य तथा मिष्ठान्न उन पर चढाये और फिर एक चाकू निकाल लिया।

चाकू का क्या होगा ? रामसरन और स्तब्ध और उत्सुक हो गया।

वैजंती बोली—"भैरव देव, तुम्हारी दया से मेरे स्वामी लौट आये है। उन्होंने मुझे स्पर्श कर लिया है। कैसे ? वह स्वामी तुम से छिपा नही है। देव, तुम उनके अपराध को क्षमा करो और भेंट स्वीकार करो।"

रामसरन ने सुना। उसका हृदय उसके पंजर मे बैठता प्रतीत हुआ। वह द्रवित हो गया। नयन गीले हो आये।

उसने देखा कि चाकू का फल वैजंती के बायें हाथ की उँगली मे धँस गया है और उसमें से बूँद-बूँद रक्त निकल कर भैरव के सिंदूर पर टपक

रहा है। उसकी इच्छा हुई कि वह जाकर वैजंती के चरणों में लोट जाय। उसने उसे छुवा क्यों ?

पर ऐसी पुजारिन की देव-पूजा मे बाधा डालने का साहस उसका न हुआ। उसने अपने को वैजती से अत्यन्त क्षुद्र पाया।

रक्त देवता पर टपकाने के पश्चात् वैजंती ने उँगली पोंछ डाली। पट्टी बाँधी। और फिर भैरव देव को मस्तक टेक कर उठ खड़ी हुई।

अब रामसरन से न रहा गया। उसे लगा कि उसने मन और कर्म दोनो मे जो किया है अक्षम्य किया है। उसका हृदय उमड़ पड़ा। वह अपने आपको रोक न सका। दौड कर वैजंती के पैरों पड़ा। "मुझे क्षमा करो, बैज....।"

वैजंती चौंकी; पर बोली पहिचान ली। भैरव को मूर्ति के सम्मुख अन्धकार मे पति को हृदय से लगाती हुई बोली—"क्यो मुझे नरक में ढकेल रहे हो तुम ?"

पर उसने अनुभव किया कि उसका स्वामी निरीह शिशु की भाँति उसकी गोद मे सिसक-सिसक कर रो रहा है। जिस प्यार का रामसरन भूखा था, पिता से जिसे न पाकर वह झुँझला उठा था, उसे यहाँ इतने परिमाण मे एकत्र देख वह रुक न सका।

उसने आत्म-समर्पण कर दिया। उसने उस पट्टी बँधी उँगली को बार-बार चूमा और सिर से लगाया।

उसे निश्चय हो गया कि वह अवश्य वैजंती के ही सतीत्व के प्रताप से छूट कर आ पाया है।

जिस इमली के नीचे बालपन बिताया था, उसी की छाया मे इस बालकपन की समाप्ति पर वैजंती ने कहा—"चलो, घर चले। अभी तो तुम ने एक दाना भी मुँह मे नही डाला है।"

"और तुमने ?"

"मेरा तो व्रत है।"

"कैसा ?"

"तुम आये जो हो।"

रामसरन आनन्द मे नहा उठा।

दोनों जने अब उस घर को चले, जो दो क्षण पहले रामसरन के लिए नितान्त अनाकर्षक था परन्तु अब उसके अस्तित्व के सम्पूर्ण आकर्षण का केन्द्र बन गया था।

८

दूसरे दिन जब रामसरन गाँव मे जागा तो समस्त संसार उसके लिए दूसरा हो चुका था। पिता से प्रति उसका असन्तोष धुल गया था। रामाधीन के प्रति कृतज्ञता और प्रशंसा के भाव उसमे उदय हो आये थे। घर के प्रति जो विरक्ति थी वह अनुरक्ति मे परिवर्तित हो गई थी।

प्रात.काल जब वह घर से बाहर निकला तो उसे लगा कि समस्त संसार जैसे मुस्करा रहा है। वृक्षो की चोटियों पर आज उसने जैसा आनन्द झड़ता अनुभव किया, वैसा उसने कभी नही किया था।

उसे अनुभव हुआ कि वह वास्तव मे स्वतत्र हो गया है। परतन्त्रता से जो एक झिझक उसमे अपने प्रति, दूसरो के प्रति उत्पन्न हो गई थी, अब तिरोहित हो गई। वह पुन. साधारण मानव बन गया। उसका हृदय उछल पड़ा।

वह लाठी ले अपने खेत मे घूमने निकल पड़ा। इतने दिनों की बिछुडन के बाद उन भूमि-खण्डो से भेटने को उसका हृदय लालायित हो उठा।

× × ×

• रामाधीन की गवाही बिगड़ने से कारिन्दा सा'ब की जो हार प्रारम्भ हुई वह रामसरन के छूटने से पूर्ण हो गई। उन्होने अनुभव किया कि उनके अधिकारों और उनकी सफलताओ की सीमा है।

उन्हे लगा कि इस सीमा के भीतर उन्हे अपने व्यवहार और समस्त सासारिक मूल्यों और मानो को पुन. योजित करना पडेगा। वे सोचने को बाध्य हुए।

यह सही है कि माथुर अच्छा वकील है और उसने गवाहों को तोड़ दिया। पर माथुर कहाँ से आया ? इतना रुपया रामावतार के पास कहाँ था ? विश्वास नही होता।

और फिर गवाहो का साधारण रुख ! उनमें कोई उत्साह नहीं था। ऐसा लगता था कि वे माथुर-द्वारा विविध प्रश्न किये जाने की प्रतीक्षा कर रहे हो जिससे सच्ची बात कह अपना पिण्ड छुड़ावे।

क्या वास्तव मे कोई शक्ति इस सब के पीछे थी ? क्या वह शक्ति गाँव मे प्रवेश पा गई है ? एक सिहरन उनके शरीर में दौड़ गई।

वे अधेड़ थे। जीवन का आधे से कहीं अधिक रह आये थे। अब चाहते थे कि आगे भी वैसे ही निभ जाये।

हठात् उनके सम्मुख आया कि रामसरन के पक्ष मे एक अस्पष्ट वातावरण गाँव में बनाया गया है। वे उसे अनुभव कर रहे थे। हरिनाथ ने उसको सूचना दी थी। यदि उसका वास्तव मे अस्तित्व है तो वह शक्ति उनके और पुलिस के विरुद्ध सफल हुई है।

वे सोच रहे थे और टहल रहे थे। पर रामसरन को अछूता छोड़ देने से उनका रौब जाता है। उन्होंने सोचा था कि राजा सा'ब का कुछ व्यय न होगा और रामसरन को दण्ड मिल जायगा, इसी से उसे पुलिस का मुकदमा बनवा दिया था। पर अब यदि रामसरन के विरुद्ध वैयक्तिक दावा करना होगा तो वे या तो अपनी जेब से व्यय करे अथवा जमीदारी से ले। उन्हे विश्वास है कि राजा सा'ब कभी यह मुकदमा लड़ने की स्वीकृति न देंगे। ज़मींदारी वैसे ही खर्च का बोझ सँभालने मे असमर्थ है।

तो क्या किया जाय ? क्या उनकी प्रतिष्ठा गाँव के बीच इस प्रकार खण्डन स्वीकार करे।

उन्होंने जूते पहिने, मोटा बेत हाथ मे लिया और फिर सड़क की ओर घूमने चल दिये। सडक के उस ओर आम का एक बाग़ था और उससे कुछ दूर आगे चल कर गाँव। कारिन्दा सा'ब ने सोचा—यहाँ तक तो आये ही है, चलो गाँव का भी दौरा कर चले।

गाँव का ध्यान आते ही उन्होने ठाकुर संग्रामसिह का द्वार कल्पना मे देखा। वे वहाँ बैठे हुक्का पीते होंगे। पहुँचते ही कारिन्दा सा'ब के लिए पलंग बिछाया जायगा।

उनमे एक उत्साह आ गया। अपनी टूटती प्रतिष्ठा पर से दृष्टि हट गई। वे दुखी से गम्भीर हुई और गम्भीर से प्रसन्न हो गये।

वे बाग मे होकर चले जा रहे थे कि दूर पर एक ओर से कुछ शोर-सा उन्हे सुनाई दिया। उन्होंने उसे विशेष महत्व नही दिया पर जब बाग से बाहर निकले तो एक ओर से खेतो मे धूलि उड़ती आती देखो, और शीघ्र ही उस धूलि मे एक भैसे का रूप प्रत्यक्ष हो आया। भैसा था विशालकाय। लम्बे पैने सीग और काले मस्तक के बीचोबीच छ इंच गोल सफेद टीका।

वे सब समझ गये। आसपास के गाँवो में यह मरखना भैसा प्रसिद्ध था। कारिन्दा सा'ब को लगा कि अब उनका समय निकट है। भैसे की सीगो द्वारा छेदे अथवा उछाले जाने की कल्पना उन्होंने कर ली। वे घबरा गये।

दूर से आवाज़ आई—"बचना भैया।"

और कारिन्दा सा'ब फिर बाग की ओर भागे। पर उनका भागना ही गजब हो गया। भैसे ने उन्हे देख लिया। वह खेत छोड़ उनके पीछे मुड गया।

कारिन्दा सा'ब भाग रहे थे। भैसे के मार्ग-परिवर्त्तन का उन्हे पता न था। बाग मे घुस जब उन्होंने घूमकर देखा तो भैसे को लगभग अपने ऊपर पाया। तभी उन्होंने उसकी हुँकार सुनीं। वे तुरन्त एक वृक्ष के पीछे साँस रोक सन्न खडे हो गये।

उन्होंने बडा जोखिम लिया था। यदि भैसा उन्हे उस वृक्ष के पीछे देख पाता तो उनका अन्त होने में विशेष सन्देह न था।

पर अवसर ने घटना की दिशा मे परिवर्तन कर दिया। बाग के हलके अँधियारे मे भैसे की दृष्टि ने उन्हे खो दिया।

वह खडा हो गया। शिकार को हाथ से निकला देख और भी क्रुद्ध हुआ, झुंझलाया। सिर उठा, आँखे फाड, कान खड़े कर चारों ओर देखा। दो क्षण वह इस अवस्था मे स्थिर रहा, फिर एक ओर को तेजी से दौड़ चला। कारिन्दा सा'ब ने ईश्वर को धन्यवाद दिया। पर ध्यान देने पर देखा कि एक दस-बारह वर्ष का बालक है; उसी के पीछे भैसा पड़ गया है। वे इतने भयभीत थे कि मुख से शब्द न निकला। उनकी इच्छा थी कि लडके से किसी वृक्ष के पीछे छिप जाने को कह दे; पर बोलने मे असमर्थ रहे।

भय था कि आवाज सुन कर भैसा लौट न पडे।

वह बालक घबराकर बाग से बाहर भाग चला। भैसे ने उसका पीछा किया। कारिन्दा सा'ब ने समझा कि वह अब बच नही सकेगा। उत्सुकता उन्हे वृक्ष के पीछे से खीच लाई। वे बाग मे उनके पीछे-पीछे चले। बाग़ से बाहर निकलते भयभीत थे।

कल्पना थी कि वे उस बालक को मरा, कुचला हुआ पायेगे। वह भैसा अपने शिकार को सीगो से उछालकर उसके शरीर पर अपने पैर रख देता था। ओह वह भैसा! वे पसीने से नहा गये। उसके भय से उन्हे बाग के बाहर निकलने का साहस न हुआ। वृक्षों की आड से खेतों की ओर देखा। यह जानकर आश्चर्य हुआ कि भैसा भाग नही रहा है, एक ही स्थान पर खूब धूल उड रही है और वह बालक कुछ दूर खड़ा उस धूल की ओर मुग्ध देख रहा है।

साहस बढा। वे उस बालक के निकट आ गये। दूर से ही देखा कि भैसा ज़मीन पर पड़ा ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रहा है और उठने के प्रयत्न मे दो बार असफल हो चुका है।

जिस मनुष्य ने इस पशु दानव को पराजित किया है, वे उसके निकट पहुँचे तो उन्हे अपने नेत्रो पर विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने साश्चर्य देखा कि वह वही रामसरन है, जो कुछ क्षण पहले उनके विचारों का विषय था।

रामसरन के प्रति द्वेष-भावना अब उनमे न उमड़ी। रामसरन ने अपनी

जान पर खेल कर उस बालक को बचाया है। जब कि वे उस भैंसे के भय से चिल्ला भी न सके, उसने अपने को उसके सम्मुख डाल दिया। मानों साक्षात् काल से लोहा लिया।

उन्होंने देखा कि भैंसे ने पुन. उठने का प्रयत्न किया और असफल रहा। वे रामसरन के निकट गये। उसके प्रति वे प्रशंसा से भरे थे। उसके सामने वे मनुष्यता मे नगण्य है। रामसरन उन्हें महान् लगा। इच्छा हुई कि उसके पैरों पर गिर पड़ें और उसके चरणों की धूलि अपने सिर पर लगाये।

उन्होंने ध्यान से उसकी ओर देखा। दोनों के नेत्र मिले।

रामसरन ने कारिन्दा सा'ब को पहिचान लिया। वह उत्साह के उच्च शिखर पर था। सफलता उसके पीछे-पीछे चल रही थी। उसे लगा कि कारिन्दा के नयनों में भय, प्रशंसा और निरीहता है। यही भावों का मिश्रण उसने रामावतार के नयनो मे कई बार देखा है। उसे लगा कि ऐसे वृद्ध पर उसने उस दिन हाथ उठा कर अच्छा नही किया।

उसमे अनुताप की लहर आई। वह आगे बढा और कारिन्दा के पैरों की ओर झुकते हुए बोला—"दादा, मुझे क्षमा करो, मैंने...।"

कारिन्दा अपने को न रोक सके। वे बह गये। रामसरन को उठा कर छाती से लगा लिया!

"नहीं रामसरन, ग़लती मेरी थी।"

रामसरन पानी हो गया।

"दादा, मुझे बड़ी लाज आती है। मुझे क्षमा कर दो।"

"अरे तुझ जैसे वीर को क्षमा नहीं करूँगा तो किसे करूँगा।" अश्रु बहाते हुए उन्होने कहा।

कारिन्दा सा'ब ने रामसरन की ओर देखा। एक भावना उनके मन मे उठी। यदि ऐसा पुत्र उनका होता।

गाँव जाने का कार्यक्रम स्थगित हो गया। वे लौट पडे।

उन्होंने देखा कि रामसरन पुन· भैंसे की ओर गया है। वे ठिठक गये।

देखते रहे। थोडी देर मे भैसा लँगडाता उठ कर एक ओर चला और रामसरन भी अपने खेत की ओर बढा।

कारिन्दा जब लौटे तो उनका दिमाग रामसरन के विषय मे बिल्कुल साफ था। जितनी जटिलता और उधेडबुन इस प्रश्न की उनके मस्तिष्क मे चल रही थी वह इस घटना के प्रभाव मे पानी होकर बह गई। राममरन के प्रति सम्पूर्ण दुर्भाग्य ही नहीं नष्ट हुआ बल्कि वह उनके अत्यन्त निकट आ गया।

उन्हे अनुभव हुआ कि वह अभी बच्चा है। पर वीर बच्चा है, जिसे देख प्रत्येक का मन हरा हो जाता।

जब सन्ध्या समय रामसरन को साथ ले गाँव के प्रमुख व्यक्ति दोनों मे समझौता कराने आये तो चतुर्भुज चमार के लड़के को भैसे से बचाने का समाचार गाँव मे फैल चुका था। लडका कारिन्दा को पहचान नहीं पाया था इसी से रामसरन कारिन्दा की भेंट का समाचार व्यापक नहीं बना था।

साहु ने कहा—"कारिन्दा सा'ब आप रामसरन को क्षमा कर दीजिए।"

कारिन्दा और रामसरन एक दूसरे को देखकर मुस्कराये। लोगो ने इस पर ध्यान नही दिया।

"साहु ...।" कारिन्दा बोले।

"आज रामसरन ने...।"

"मुझे ज्ञात है।" कारिन्दा ने कहा।

साहु ने देखा कि कारिन्दा बात बढने नहीं देते। जान पडता है कि वे समझौता करने को तैयार नही होंगे। वे बडी आशाएँ लेकर, रामसरन को सिखा-पढा कर लाये थे।

उन्होंने अन्तिम प्रहार किया—"रामसरन कारिन्दा सा'ब के चरण छू, वे तेरे पिता थे...।"

और रामसरन आज्ञा-पालन के लिए उठा।

कारिन्दा सा'ब ने उठकर उसे बीच मे ही पकड लिया।

"यह रस्म कितनी बार अदा करेगा, रामसरन?"

सब लोग चकित रह गये । उनके नेत्र गीले हो आये ।

"आप लोग निश्चिन्त रहिए। रामसरन और रामाधीन के परिवार के विरुद्ध अब कोई कार्रवाई नहीं की जायगी । ऐसे व्यक्ति गाँव के गौरव है

"कारिन्दा सा'ब सचमुच प्रजा के पिता है ।" हरिनाथ ने कहा ।

६

इस घटनावली में छदम्मी साहु का भाग अत्यन्त महत्वपूर्ण था । धन उन्होंने दिया था । उसी से माथुर रखे गये थे ।

यह सत्य है, आदेश्वर ने साहु को उस धन के रसीदे दी थीं, जैसे कि उसने उधार लिये हों; फिर भी मूलत वह धन छदम्मी साहु का ही था ।

इस समय गाँव मे जो भावना थी वह साहु को कुछ असह्य हो चली । गाँववाले रामसरन की विजय का सब श्रेय आदेश्वर को दिये डाल रहे थे, जो अपने स्थान से हिलने मे भी असमर्थ था, जिसने जिह्वा चलाने के अतिरिक्त और कुछ नही किया था । उसका स्थूल कार्य माथुर को विभिन्न गवाहों का परिचयात्मक एक पत्र लिखना था, जिससे माथुर ने पूर्ण लाभ उठाया था।

साहु के मन मे आदेश्वर के प्रति एक ईर्ष्या उत्पन्न हुई । भावना उठी कि धन उनका व्यय हुआ और नाम हुआ आदेश्वर का । वे भी इस चित्र मे कही है यह कोई नहीं जानता । यह दशा उन्हे खली । वे एक निश्चय कर, उसे कार्यान्वित करने को प्रस्तुत हुए ।

अगले दिन गाँव के कुछ वृद्ध तथा प्रतिष्ठित युवक आदेश्वर के द्वार पर एकत्र हुए । रामसरन, उसके पिता और दोनों बडे भाई भी उपस्थित थे। रूपमती ने सुरती-चूने से सब की आवभगत की ।

इधर-उधर की बातो के बीच साहु अपनी बात कहने को बल बटोरते रहे । जब पर्याप्त शक्ति एकत्र कर पाये तो गम्भीर होकर उन्होने अपना बटुवा खोला, और काग़ज़ के दो पुर्ज़े निकाल लिये ।

आदेश्वर को सम्बोधित कर कहा—"बाबू मैंने आपको आठ सौ रुपये उधार दिये थे । आपने वे रुपये रामसरन के मुकदमे मे लगा दिये, मुझे

यह ज्ञात हुआ है। यह लीजिए अपनी रसीदें, वह रुपये आपने नही, मैंने लगाये।"

यह कह साहु ने दोनो रसीदों को आधी फाड कर बाबू की ओर बढा दिया। लोगो ने उन पर लगे टिकटों की ओर देखा।

साहु के प्रति एक प्रशंसात्मक भाव उनके मुख पर आ गया। बोला कोई नही, पर दृष्टियाँ कह रही थीं; ये साहु है, जिनका रुपया धर्म के काम मे लगता है, इनकी जय हो।

रामसरन का मुख-मण्डल गम्भीर हो गया। पूछा—"आदेश्वर भई, यह रुपया मेरे लिए खर्च हुआ है?"

रामावतार ने उत्तर दिया—"हाँ।"

रामसरन की छाती तन गई। पुरुष जाग्रत हो गया। बोला—"साहु, तुम्हारे आठ सौ रुपयों का देनदार मैं हूँ। तुम चाहे लिखो या न लिखो, जब तक मैं हूँ वे निरन्तर तुम्हारे यहाँ पहुँचते रहेंगे।"

आदेश्वर का मुख-मण्डल आनन्द से खिल उठा।

"शाबाश रामसरन, शाबाश, अब भी हमारे गाँव निष्प्राण नहीं हुए है।"

और फिर जैसे उन गाँवों के उज्ज्वल भविष्य मे उसका मन डूब गया। जब वह ध्यान से जगा, तो बोला—"रामसरन, चिन्ता न करना। मैं तुम्हे सीकों और बाँस की खपच्चियो से वे-वे वस्तुएँ बनाना बता दूँगा कि तुम दो-तीन वर्ष मे ही साहु का ऋण उतार दोगे।"

रामसरन का मस्तक कृतज्ञता से झुक गया। ग्रामीणों ने सोचा यह लँगडा-लूला कौन है, जो किसी भी अवस्था मे उपायो से खाली नहीं है। उसे जैसे मार्ग खोजना ही नही पड़ता। जिधर मुख करता है, उधर ही राज मार्ग बना प्रस्तुत दिखाई है।

"आदेश्वर भैया, क्या तुम ये रसीदे मुझे दे दोगे?"

रामसरन ने पूछा।

"क्या करोगे इनका?" आदेश्वर ने जिज्ञासा की। उसके नेत्र चमक उठे।

"क्या करूँगा ? यह मेरी सबसे मूल्यवान निधि होगी। मैं इन्हे संभाल कर रक्खूँगा। इनकी पूजा करूँगा।"

आदेश्वर ने गम्भीर मुद्रा धारण कर एक क्षण सोचा। फिर उन्हे रामसरन की ओर बढाता हुआ बोला—"लो, तुमने इन्हे कमा लिया है।"

रामसरन ने उन फटी रसीदों को ले मस्तक से लगा अपने हृदय के निकट की जेब में रख लिया।

इसके बाद रामावतार ने आदेश्वर को अपने यहाँ निमन्त्रित किया।

१०

रामसरन के आगमन पर बुवाजी ने वैजती को प्रसन्न होते देखा तो उन्हें असन्तोष ही हुआ।

वैजंती के विरुद्ध वे कोई अभियोग लाना चाहती थी जिससे उसका अभिमान तोडा जा सके। वह पत्थर की गाँठ खुलकर बिखर जाय अथवा घुलकर पानी हो जाय।

वैजंती ने अनुभव किया कि बुवाजी यद्यपि प्रसन्न रहने की चेष्टा करती हैं, पर उसके पति के आगमन के पश्चात् से, वे वास्तव मे खिन्नमना हो गई हैं। मुस्कान अब उन ओंठो पर नही आती। जीवन जैसे उनके लिए नीरस हो गया है। अब वे किसी बात में रुचि नही लेतीं। कार्यो मे वह उत्साह उनका नहीं रहा।

उसे बुवाजी पर दया आई। एक समय था जब बुवाजी की ऐसी दशा से उसे सन्तोष हुआ होता। अब मन-स्थिति ऐसी थी कि बुवाजी की यह दशा देखकर उसमे दया का संचार हुआ।

बुवाजी में जो असन्तोष वैजंती-द्वारा अपनी पूर्ण पराजय से और उसे अपने नयनों के सामने सुखी देखने से हो रहा था वह शक्ति एकत्र करता-करता विस्फोट की अवस्था तक आ पहुँचा। वे उस पर प्रहार करने का बहाना खोजने लगीं।

जिस समय पुरुष आदेश्वर के द्वार पर बैठे थे, बुवाजी वैजंती की

पर बँधी पट्टी को बडे ध्यान से देख रही थी और उसमें कलह की सम्भावनाएँ खोज रही थी।

एकाएक वे बोल उठीं—"खसम के आते ही उँगली मे पट्टी बँध गई जिससे काम न करने का बहाना मिल जाय।"

वैजंती ने सुना; एक मुस्कान उसके मुख पर आ गई। पर जब उसने बुवा जी का मुख देखा तो वह तिरोहित हो गई।

बुवाजी का मुँह एक करुण चित्र हो रहा था। पराजित जिस प्रकार सबल पर अपनी हार निश्चित समझकर प्रहार करता है और झुँझलाहट-मिश्रित विवशता को स्वीकार करता है, वही भावना बुवाजी के मुख पर थी। वह क्रोध, जो वैजती मे क्रोध उत्पन्न करता, वहाँ न था। उनकी निरीहता वैजती पर प्रकट हो गई। वैजंती को लगा कि मुस्कराकर उसने बुवाजी पर अत्याचार किया है।

उसने आँखे नीची कर ली।

बुवाजी ने कहा—"कामचोर ऐसी ही होती है। रामविलास की बहू दिन-रात काम करते-करते मरी जाती है और यह....।"

किसोरी ने दृष्टि ऊँची कर बुवा जी की ओर देखा, सोचा—बुवाजी घरमें कलह खडा कर वैजती को पिटावाना चाहती हैं!

वैजंती ने नम्र स्वर में कहा—"बुवा जी।" वह उनके प्रति द्रवित हो आई थी।

बुवा जी को वह स्वर अनुभव नहीं हुआ। वे बड़ी है। अपमानित है।

बोलीं—"बहू मै झूठ नही कहती। आज रामसरन को आ जाने दे तो....।"

वैजंती अब कुछ घबरा भी गई। बुवाजी भले घर में कलह खडा करने वाली हैं।

वह करे क्या? किसी प्रकार भी हो वह इस कलह को रोकना चाहती है। पर उसे मार्ग दिखाई न देता था। वह विवश थी। उसने उनके सामने से टल जाना उचित समझा। वह नीची गर्दन किये अपनी कोठरी की ओर

चली ! पर बुवाजी उसके पीछे लग गई।

"आज रामसरन को आने दे तो ..।"

और वैजंती काँप उठी। रामसरन को चाहे बुवा जी के अभियोगों पर विश्वास न हो, पर एक झगडा सुख और शान्ति से पूर्ण हो रहे इस घर मे फिर खडा हो जायगा। परिवार जिस समय प्रसन्नता के सिन्धु मे तैर रहा हैं, उस समय यह कलह ! पारिवारिक शान्ति मे यह विष ! और ऐसे समय पर पैता नही उसका कितना गहरा प्रभाव पडे।

पर बुवा जी शान्त कैसे हों ?

तभी एक विचार उसके मन मे आया । वह द्रवित हो गई। बुवाजी कितनी दयनीय है। उँगली की पट्टी को काम न करने का बहाना समझ रही हैं, यदि वास्तविकता जान पातीं तो. ।

वह घूमकर बुवाजी के चरणो पर गिर पडी—"बुवाजी, मैंने जान-बूझकर कभी तुम्हारा अपराध नही किया। अनजाने हो गया हो तो क्षमा करो।"

बुवाजी स्तम्भित रह गई। उन्होंने समझ लिया कि वैजंती पराजित हो गई। उनकी महत्ता स्वीकार कर ली गई।

उनकी हलकी प्रकृति जैसे तनिक-सी बात मे रुष्ट हो जातीं थी वैसे प्रसन्न भी। अब वह वैजती पर प्रसन्न हो गई। उन्होने. वैजंती को उठा लिया। नयनो मे जल भर आया। जो जटिलता कठोर होकर उनके भीतर चुभ रही थी वह धुल गई।

उन्होने अब वैजंती की ओर देखा। उन्हे लगा कि वह वास्तव मे उसके भाई का बेटा बैजनाथ है। उसके अतिरिक्त कौन नारी इतनी कुट्टी काट सकती थी।

"बहू !"

उन्होने वैजंती को छाती से चिपका उसका मुख चूम लिया।

जिस समय किसोरी ने उत्सुकता-वश आकर उन दोनों को देखा तो पाया कि बुवा बहू आमने सामने खड़ी रो रही है।

बुवा ने घूम कर कहा—"बहू, वास्तव मे देवी है।"

इसके पश्चात् बुवाजी बहू के इस देवीत्व से इतनी प्रभावित हुई कि तुरन्त ही ऑसू पोंछ हुलसती इस समाचार को पड़ोस मे सुनाने निकल गई।

उनके रामसरन की बहू सचमुच देवी है। उन्होने आज उसका रूप देखा है।

जब तीनो पुत्रो और आदेश्वर-सहित रामावतार ने घर मे प्रवेश किया तो उनके पीछे-पीछे बुवा भी यह समाचार वितरण कर घर मे घुसी।

उन्होने रामावतार को भी हुलसते हुए सूचना दी—"भैया, रामसरन की बहू सचमुच देवी है।"

और रामावतार ने अबूझ नयनों से बहिन की ओर देखा। पार्वती वैजंती की प्रशंसक कब से बन गई। यदि वैजंती मे बुवा जी को अपना प्रशसक बना लेने की सामर्थ्य है तो उसके देवीत्व मे सन्देह नही।

पर इस समय अधिक महत्वपूर्ण विषय उनके मन मे घूम रहे थे। वे बोले नही। दृष्टि ने इस शुभ समाचार पर प्रसन्नता प्रकट की।

पाँचो व्यक्ति जाकर भीतर के आँगन में बैठ गये। बुवा ने एक पीढे पर आसन ग्रहण किया। किसोरी बाहर ऑगन में वैजंती पास चली आई।

रामावतार आदेश्वर से बहुत प्रभावित थे। वे उसके परम ऋणी थे। उन्हे विश्वास था कि आदेश्वर से बडा उनके परिवार का हितैषी और नही है। इसीलिए पारिवारिक मत्रणा मे उसकी बुद्धि से लाभ उठाने के लिए उसे निमंत्रित किया था।

रामावतार ने कहा—"भाई आदेश्वर, अब हम लोगो को कैसे प्रबन्ध करना चाहिए ?"

"क्यो ?"

"बटवारा जो हो चुका है।"

"तो आप क्या करना चाहते है ?"

"ऐसा हो कि फिर सब एक साथ मिलकर रह सके।"

"विचार तो अच्छा है, पर कानूनन मिलना तो असम्भव-सा है ?"

"आदेश्वर, बिना इसके निर्वाह नही होगा। जो काम पहले एक हरवाह करता था उसके लिए अब तीन जगह तीन रखने होंगे और....।"

"यह तो होगा ही।"

"पर इससे अधिक एक बात और है जो मुझे दुखित करती रहती है।"

"क्या ?"

रामावतार ने रामाधीन की ओर देखा। उसके नयन नम हो आये। बोले—"आदेश्वर, मै देखता हूँ कि रामाधीन जब से अलग हुआ है सूखता जा रहा है। मै देखता हूँ कि उसे अब तनिक भी समय आराम करने को नही मिलता। दिन भर काम मे जुटा रहना पड़ता है। इस कलेजे की कसक को मै बहुत दिन से छुपाये था, पर अब नहीं रहा जाता। इस प्रकार वह....।"

रामाधीन ने देखा कि जिस समय पिता को वह अपना बैरी समझ रहा था उस समय भी वे पिता थे और उसके दु.ख से दुखित थे।

दोनों के नेत्र मिले। रामाधीन अपने को न रोक सका। रामावतार के पैरो पर गिर पड़ा और तब पिता पुत्र को छाती से लगाकर अश्रु बहाने लगे। आदेश्वर और दोनो भाइयों के नेत्र भी गीले हो आये। बुवा तो ज़ोर से रो रही थीं।

"है ऐसा उपाय कि आप लोग फिर मिलकर रह सकेंगे।" आदेश्वर ने कहा।

यह पपीहा को स्वाति की बूंद थी।

"सम्भव है ?" रामसरन ने पूछा—"क्या हम सब फिर एक हो सकते है ?"

"हाँ।"

"कैसे ?"

"भूमि का बँटवारा जैसा हो गया है, उसे वैसा ही रहने दो। पर जब उसे जोतो बोओ तो एक साथ मिल कर, जैसे पहले जोतते बोते थे।

प्रकार तोड दी जायगी । सारा गाँव एक परिवार होगा, सारे गाँव का एक खेत होगा । सब को पर्याप्त विश्राम और भोजन मिल सकेगा।

"क्या यह सम्भव है ?" रामावतार ने पूछा ।

"आ रहा है काका वह दिन, यद्यपि धीरे-धीरे । मै उसे तिल-तिल इस ओर बढ़ता देख पाता हूँ ।"

और उसके नेत्रो से जान पड़ता था कि वह वास्तव मे उस भविष्य को वर्त्तमान की ओर बढ़ते देख रहा है ।